अक्टूबर-दिसंबर 1990

वर्ष : 22 • अंक : 4

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका

नाभिकीय ऊर्जा

अप्रैल 20-21, 1989, भोपाल

संगोष्ठी विशेषांक

: संगोष्ठी आयोजक :

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद, बम्बई

इंडियन न्यूक्लियर सोसायटी, बम्बई

भोपाल विश्वविद्यालय, भोपाल

प्रायोजक : न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन, बंबई

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद

हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन व प्रचार प्रसार हेतु परिषद नियमित रूप से त्रैमासिक पत्रिका **वैज्ञानिक** का प्रकाशन, विज्ञान गोष्ठियों, वार्ताओं एवं अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती है।

परिषद की सदस्यता एवं **वैज्ञानिक** पत्रिका का शुल्क (रु):

	परिषद सदस्यता			वैज्ञानिक शुल्क 5 रु. प्रति	
	एक वर्ष	आजीवन	प्रवेश शुल्क	एक वर्ष	तीन वर्ष
व्यक्तिगत	15	100	1	15	40
संस्थागत	25	250	1	25	70

1. वैज्ञानिक विशेषांको का मूल्य अलग से निर्धारित होगा।
2. वर्तमान नियमानुसार परिषद के सदस्यों को **वैज्ञानिक** निःशुल्क भेजी जाती है।
3. सभी शुल्क **हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद** के नाम से **डिमांड ड्राफ्ट** (बम्बई) अथवा **भारतीय पोस्टल आर्डर** द्वारा ही भेजें। **कृपया बम्बई से बाहर के चैक** व **मनीआर्डर द्वारा शुल्क** न भेजें ।

'वैज्ञानिक' में विज्ञापन

हिंदी में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं में **वैज्ञानिक** अग्रणी है। देश के सभी मुख्य वैज्ञानिक संस्थान इसके ग्राहक हैं । इस पत्रिका में आपके विज्ञापन आमंत्रित हैं । पूरे पृष्ठ की छपाई का आकार 16 सें.मी. X 21 सें.मी. है।

विज्ञापन की दरें		(एक प्रति के लिए)
अंतिम आवरण	:	रु.2,500/-
दूसरा/तीसरा आवरण (अंदर)	:	रु.2,000/-
पूरा पृष्ठ	:	रु.1,500/-
आधा पृष्ठ	:	रु.800/-

अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता - 1991

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं **राजभाषा कार्यान्वयन समिति** (भा.प. अ.केंद्र) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता हेतु प्रविष्टियां आमंत्रित हैं । लेख में किसी भी वैज्ञानिक विषय पर आधुनिक जानकारी होनी चाहिए । कागज़ के एक ओर, दो टंकित अथवा स्पष्ट लिखित प्रतियां (लगभग 3000 शब्द) **वैज्ञानिक** कार्यालय को भेजें । चित्रों को सफेद कागज़ पर काली रोशनाई से बनाकर लेख के अन्त में संलग्न कर दें ।

पुरस्कार: प्रथम रु.750/-, द्वितीय रु.500/-, तृतीय रु.250/-

इसके अतिरिक्त पांच प्रोत्साहन पुरस्कार व अहिंदी भाषी प्रतियोगियों के लिए दो **विशेष** पुरस्कार - प्रत्येक रु.150/- के दिये जायेंगे । अतः, अपनी मातृभाषा का स्पष्ट उल्लेख करें ।

अंतिम तिथि : 31 अगस्त 1991

विशेष : पुरस्कृत रचनाएं **वैज्ञानिक** की संपत्ति होंगी । **वैज्ञानिक** से संबंधित अधिकारी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकेंगे । **वैज्ञानिक** हेतु रचनाएं आमंत्रित हैं। सभी प्रकाशित रचनाओं पर मानदेय दिया जाता है।

पत्राचार का पता : श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी, सचिव, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद, परमाणु ईंधन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे, बम्बई - 400 085.

वैज्ञानिक

वर्ष : 22 • अंक : 4

अक्तूबर-दिसंबर 1990

— व्यवस्थापन मंडल —

डा. शिव प्रकाश गर्ग

श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वमी

श्री ललित कुमार

श्री राम निवास आर्य

श्री राम चरण शर्मा

श्री राम प्रकाश हंस

— संपादक —

डा. जनार्दन स्वरुप

डा. गोविन्द प्रसाद कोठियाल

डा. कैलाश चन्द्र भल्ला

डा. दुर्गा प्रसाद पांडे

— शुल्क —

भारत में

		संस्थागत	व्यक्तिगत
एक वर्ष	—	25 रु.	15 रु.
तीन वर्ष	—	70 रु.	40 रु.

— विदेश में —

(समुद्री डाक द्वारा प्रेषण)

		संस्थागत	व्यक्तिगत
एक वर्ष	—	45 रु.	35 रु.
तीन वर्ष	—	125 रु.	95 रु.

अनुक्रमणिका

1. **प्रस्तावना** 3
2. **हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद : एक परिचय** 5
   — डा. गो. प्र. कोठियाल
3. **उद्घाटन भाषण** 10
   — डा. पी. के. अय्यंगार
4. **नाभिकीय ऊर्जा के क्षेत्र में भारतीय अनुभव एवं उपलब्धियां** 12
   — श्री एस. एल. काटी
5. **नाभिकीय ऊर्जा और परमाणु बिजलीघर** 18
   — श्री अनिल काकोडकर
6. **नाभिकीय बिजलीघरों की अभिकल्पन विशेषताएं** 26
   — श्री एस. एस. बजाज
7. **नाभिकीय पदार्थ** 31
   — श्री प्रदीप रंजन राय
8. **भारत के नाभिकीय कार्यक्रम में भारी पानी का महत्व एवं इसका उत्पादन** 38
   — श्री सु. शर्मा, एवं स्वं प्र. श्रीवास्तव
9. **अनुसंधान रिएक्टर** 46
   — श्री सु. कु. शर्मा
10. **भारत का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम व राजस्थान परमाणु बिजलीघर प्रचालन का अनुभव** 47
    — श्री जी. वी. नाडकर्णी
11. **न्यूट्रान पुंज अनुसंधान** 49
    — डा. बी. ए. दासण्णाचार्य
12. **नाभिकीय विद्युत परियोजनाओं में स्वास्थ्य व सुरक्षा के उपाय** 51
    — श्री सु. द्वा. सोमण, एवं डा. चिं. म. सूँठा
13. **नाभिकीय ऊर्जा एवं पर्यावरण** 57
    — डा. उमेश चन्द्र मिश्र
14. **नरोरा परमाणु बिजलीघर के सुरक्षा पहलू और इसकी आपात योजना** 62
    — श्री ए. एम. देसनवी
15. **यूरेनियम-उत्पादन और इस्तेमाल** 65
    — श्री महेन्द्र कुमार बतरा
16. **नाभिकीय रिएक्टर के रासायनिक पहलू** 69
    — डा. दीनदयाल सूद

17. **भारत के नाभिकीय बिजली विकास में बी. एच. ई. एल. भोपाल का योगदान** 77
— श्री राधाकृष्ण सराफ

18. **रेडियोआइसोटोपों का औद्योगिक अनुप्रयोग** 80
— श्री र. ग. देशपांडे, एवं श्री मि. कु. सिन्हा

19. **रेडियोआइसोटोपों के चिकित्सात्मक अनुप्रयोग** 86
— डा. एस. एम. शर्मा

20. **रेडियोआइसोटोपों के चिकित्सात्मक उपयोग** 87
— डा. एम. के. सोनी

21. **कृषि में नाभिकीय तकनीकों का प्रयोग** 90
डा. चि. रं. भाटिया, एवं डा. सू. दे. मिश्र

22. **रेडियोएक्टिव अपशिष्ट प्रबंधन** 96
— श्री मधुसूदन कुमरा

23. **संलयन रिएक्टर** 102
— श्री अनुराग श्याम

24. **भारत के नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम में द्रुत अभिजनक रिएक्टरों का महत्व** 104
— श्री आर. शंकर सिंह

25. **संलयन ऊर्जा के नये आयाम** 111
— श्री हरीश त्रिवेदी

26. **परिषद समाचार**
— श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी

टिप्पणी

सांस की बदबू 116
सूर्य 117
केले का विश्लेषण 117
कृत्रिम वर्षा 118
भूल-सुधार 119
प्रतियोगिता के परिणाम 120

कार्यालय : "वैज्ञानिक" हिंदी-विज्ञान साहित्य परिषद, सूचना प्रभाग, सेंट्रल कॉम्प्लेक्स, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, बंबई - 400 085.

प्रस्तावना

पिछले तीन दशकों की उपलब्धियों के बल पर भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र ने विज्ञान और टेक्नालाजी के क्षेत्र में अपने लिए एक विशिष्ट स्थान बना लिया है । इस विकास के साथ ही केंद्र के वैज्ञानिकों ने इस बात को महसूस किया कि विज्ञान को भारतीय जनमानस तक पहुंचाना भी राष्ट्र के प्रति उनके दायित्व का अभिन्न अंग है । इस भावना ने वर्ष 1968 में हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के रूप में जन्म लिया । पिछले दो दशकों से जनभाषा हिंदी के माध्यम से वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य प्रसारित कर वैज्ञानिक चेतना और जागरूकता द्वारा राष्ट्रीय चिंतन का आधार बनाने के लिए परिषद निरंतर प्रयत्नशील है । परिषद द्वारा त्रैमासिक पत्रिका "वैज्ञानिक" का अनवरत प्रकाशन एवं समय-समय पर आयोजित तकनीकी गोष्ठियां तथा वैज्ञानक वार्ताएं इस आशय के प्रमाण हैं । साथ ही विज्ञान के महत्वपूर्ण विषयों पर छपे करीब 25 विशेषांक स्वयं अपने आप में उपलब्धि के कीर्तिमान हैं । इसी प्रक्रिया की एक कड़ी के रूप में परिषद द्वारा इंडियन न्यूक्लियर सोसायटी एवं भोपाल विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्वावधान में "नाभिकीय ऊर्जा" पर संगोष्ठी का आयोजन भोपाल में 20-21 अप्रैल 1989 में किया गया था । संगोष्ठी में प्रमुख विशेषज्ञों द्वारा "नाभिकीय ऊर्जा" के विभिन्न पहलुओं पर सरल हिंदी में वार्ताएं प्रस्तुत की गयी थीं । वैज्ञानिक के इस विशेषांक में संगोष्ठी-वार्ताओं का संकलन प्रस्तुत है ।

इस विशेषांक का सम्पूर्ण खर्च **न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन** ने वहन किया है । इस आर्थिक सहयोग के लिए हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद उनकी अत्यन्त आभारी है ।

— संपादक मंडल

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद

पंजीकरण संख्या : BOM 64/70 GBBSD 25-4-1970
ट्रस्ट पं. संख्या : F 2005 बंबई

कार्यकारिणी 1990-91

डॉ. आर. चिदंबरम्	—	अध्यक्ष
डॉ. दीन दयाल सूद	—	उपाध्यक्ष
श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी	—	सचिव
डॉ. विजय कुमार जैन	—	सहसचिव
श्री ललित कुमार	—	कोषाध्यक्ष
श्री राम प्रसाद	—	सदस्य
डा. देवकी नंदन	—	सदस्य
डा. दुर्गा प्रसाद पाण्डेय	—	सदस्य
डा. सत्य नारायण त्रिपाठी	—	सदस्य
श्री हरीश कुमार कौरा	—	सदस्य
डा. विजय कुमार मनचंदा	—	सदस्य

मनोनीत सदस्य

डा. आर. विजयराघवन
श्री राकेश कुमार

स्थायी आमंत्रित पदेन सदस्य

डा. शिव प्रकाश गर्ग - व्यवस्थापक, वैज्ञानिक

डा. जनार्दन स्वरूप - संपादक, वैज्ञानिक

श्री एम. आर. बालकृष्णन - अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना प्रभाग

श्री काशीनाथ पाण्डेय - हिन्दी अधिकारी

श्री रमेश चन्द्र पंत - संयोजक, राजभाषा वार्ता

डा. रामशेष - सचिव, राजभाषा कार्यान्वयन समिति

डा. राजेंद्र नारायण भटनागर - सचिव, केन्द्रीय सचिवालय, हिन्दी परिषद

आमंत्रित संपादकगण

डा. आर. विजयराघवन
श्री राम निवास आर्य
डा. शिव प्रकाश गर्ग
श्री राम प्रसाद
डा. जी. पी. तिवारी

: संपर्क सूत्र :
श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी, सचिव हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद, अध्यक्ष लेसर संसाधन एवं प्रगत वेल्डन अनुभाग, परमाणु ईंधन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे, बम्बई - 400 085.

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद : एक परिचय

गोविंद प्रसाद कोठियाल
संपादक : 'वैज्ञानिक'
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बंबई

भारतीय भाषाओं में विज्ञान प्रचार-प्रसार के उद्देश्य को लेकर समय-समय पर कई साहित्यिक संस्थाओं ने जन्म लिया और वे विज्ञान लेखन संबंधित समस्याओं से जूझते हुए कार्य को अपने-अपने दृष्टिकोण से आगे बढ़ाती रहीं। किसी भी राष्ट्र की प्रगति एवं निर्माण के लिए आवश्यक है कि उस देश की अधिकांश जनता को वैज्ञानिक खोजों का लाभ एवं जानकारी मिले। इस परिप्रेक्ष्य में देश के विज्ञान एवं तकनीकी संस्थानों में कार्यरत वैज्ञानिकों तथा इंजीनियरों की जिम्मेदारी बहुत अधिक है क्योंकि केवल ज्ञानार्जन ही पर्याप्त नहीं हैं बल्कि उसका संचार भी महत्वपूर्ण है। इसकी महत्ता और भी अधिक बढ़ जाती है जब हमें अन्य भाषा में अर्जित ज्ञान को अपनी भाषा में बताना पड़े।

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, बंबई का गठन भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र एवं टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान में कार्यरत कुछ वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों के सामूहिक प्रयास से आज से लगभग 21 वर्ष पूर्व सन् 1968 में राष्ट्रभाषा प्रेम, जनसामान्य तक वैज्ञानिक साहित्य को पहुंचाने, वैज्ञानिक साहित्य की रचना तथा प्रसार के काम को सुसंगठित रूप में चलाने के उद्देश्य से हुआ था। तब से अब तक यह परिषद अपने जीवन के उतार चढ़ाव को देखते हुए निरंतर अपने उद्देश्यों के प्रति सजग है। प्रमुख उद्देश्य को मद्दे नज़र रखते हुए गतिविधियों में विभिन्नता लाने का प्रयास सदैव चलता रहा है। उन्हीं का परिणाम यह है कि आज यह परिषद देश की अग्रणीय संस्थाओं में से एक है।

'परिषद' की गतिविधियों में सबसे मुख्य एवं स्थाई गतिविधि त्रैमासिक पत्रिका 'वैज्ञानिक' का अनवरत प्रकाशन रही है। यही कारण है कि परिषद के विकास का इतिहास 'वैज्ञानिक' प्रकाशन से घनिष्ठ रूप से जुड़ा है। इसके अलावा, शब्द निर्माण, अनुवाद कार्य, पुस्तक प्रकाशन, विज्ञान वार्ताएं, लेख प्रतियोगिता का आयोजन, विज्ञान गोष्ठियां,कई ऐसे कार्य रहे हैं जिन्होंने परिषद के लिए सम्मान अर्जित किये हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि परिषद भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में आयोजित होनेवाले हिंदी संबंधित अन्य कार्यक्रमों में भी काफी सक्रियता से भाग लेती रही है।

"वैज्ञानिक" प्रकाशन :

"वैज्ञानिक" का परिचय अंक लगभग 20 वर्ष पूर्व 1969 में प्रकाशित हुआ था। वैज्ञानिक चिंतन हिंदी में आरंभ हो, एक उच्चस्तरीय लेखों की पत्रिका पाठक को मिले तथा विज्ञान में रुचि रखने वाले लेखकों एवं पाठकों को एक मंच मिले, इत्यादि विचार "वैज्ञानिक" प्रकाशन कार्य के लिए प्रेरणा स्रोत रहे। इस पत्रिका के प्रकाशन के दो मुख्य पहलू रहे हैं, पहला आर्थिक तथा दूसरा उच्चस्तरीय एवं सामयिक लेखों की उपलब्धता। हालांकि पत्रिका के व्यवस्थापन एवं प्रकाशन से संबंधित व्यक्तियों के प्रयास सराहनीय रहें हैं फिर भी इन दोनों पक्षों (आर्थिक विपन्नता तथा लेखों की स्तरीयता व उपलब्धता) ने पत्रिका प्रकाशन की गति में अवरोध पैदा किये हैं। इस पत्रिका के व्यवस्थापन एवं संपादन मंडल संबंधित अधिकांश लोग इस विभाग के वरिष्ठ वैज्ञानिक हैं जिनका प्रयास मिशनरी तौर पर पत्रिका की स्तरीयता एवं गरिमा को अक्षुण्ण बनाये रखना है।

जहां तक आर्थिक पक्ष का प्रश्न है यह आरंभ से ही विकट रहा है। कुछ वर्ष पूर्व तक तो इसका स्रोत परिषद की सदस्यता तथा कुछ विज्ञान प्रेमी संस्थाओं द्वारा दिये गए विज्ञापनों से प्राप्त राशि ही रही जो सदैव कम ही पड़ती रही। अतः,बार बार उठने वाली इस समस्या के समाधान हेतु एक सुदृढ़ आर्थिक आधार बनाने की आवश्यकता प्रतीत हुई। इसके लिये कुछ कारगर कदम उठाये गये। इनमें विशेषांक प्रकाशन एवं संगोष्ठियों के आयोजन के दौरान स्मारिका प्रकाशन के कार्य प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त,परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा पिछले कुछ वर्षों से कुछ अनुदान (8000 रु. वर्ष 1986; 12,000 रु.वर्ष 1987 तथा 15,000 रु.वर्ष 1988 रू.15,000/- वर्ष 1989, रू.15,000/- वर्ष 1990) मिलने लगा है।

वैज्ञानिक साहित्य जुटाने का कार्य भी समस्याओं से भरा रहता है। प्रकाशन हेतु साधारणतः दो श्रेणियों के लेख प्राप्त होते रहे हैं;(i) हिंदी में लिखे मौलिक लेख तथा (ii) इस विभाग में एवं अन्यत्र कार्यरत अहिंदी भाषी विशेषज्ञों द्वारा टूटी-फूटी हिंदी अथवा अंग्रेजी में लिखे लेख। दूसरी श्रेणी में प्राप्त लेखों का हिंदी पाठकों के लिए रूपांतर करके सुरुचिपूर्ण एवं सरल बनाने में विशेष प्रयास की आवश्यकता होती है। शब्दों का चयन इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है कि विषयवस्तु पठनीय हो, भाषा सुगम्य रहे तथा विज्ञान के मौलिक शब्दों का क्लिष्ट हिंदी में अनुवाद करने के पचड़े से बचा जा सके।

लेखों को प्राप्त करने के लिए हम समय-समय पर देश के विभिन्न संस्थानों कालेजों / विश्वविद्यालयों में कार्यरत वैज्ञानिक एवं शिक्षण शास्त्रियों से भी संपर्क करते रहते हैं। प्रतिवर्ष अखिल भारतीय स्तर पर वैज्ञानिक लेखों से संबंधित एक प्रतियोगिता का भी आयोजन किया जाता है जिससे भी कुछ अच्छी किस्म की प्रकाशनीय सामग्री ऐसे लेखकों से मिल जाती है जिनके बारे में हमें जानकारी नहीं रहती है।

विषय-विशेष पर नवीनतम एवं पूर्ण जानकारी देने के उद्देश्य से "वैज्ञानिक" के विशेषांकों को प्रकाशित करने की शुरुआत कई वर्ष पूर्व (1972) की गयी। समय-समय पर निकाले गए इन विशेषांकों के प्रकाशन का अनुभव काफी रोचक रहा। चूँकि हमारी यह अपेक्षा रहती है कि विशेषज्ञ लेख हिंदी में दें, अतः यह देखा गया कि वे इस कार्य के लिए अधिक उत्साहित नहीं रहते। ऐसे समय में उन्हें प्रेरित कर समय पर लेखों का प्राप्त करना अपने आप में एक अनुभव रहता है। अब तक निकाले गये विशेषांकों की सूची तालिका-1 में दी गयी है। इन विशेषांकों के लेखक अधिकांशतः परमाणु ऊर्जा विभाग से संबद्ध रहे हैं। अपने लेखों में उन सभी जानकारियों का समावेश कर देते है जिन्हें वे अंतर्राष्ट्रीय शोध ग्रंथों में भी प्रकाशित करते हैं। इस प्रकार, नवीनतम शोध की जानकारी से हिंदी पाठक लाभान्वित हो पाते हैं।

शब्द संग्रह निर्माण :

वैज्ञानिक शब्दावली एवं अनुवाद आज एक बहुचर्चित विषय बना हुआ है क्योंकि इस बारे में एक मत नहीं है। कुछ लोग विशुद्ध संस्कृत निष्ठ एवं क्लिष्ट शब्दों के पक्ष में हैं तो कुछ यह चाहते हैं कि अनुवाद कुछ ऐसा हो जो पाठक को रुचिकर लगे तथा समझने में सरलता रहे। बहुचर्चित शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है, परंतु केवल सरलता या सुबोधता के आधार पर तकनीकी शब्दावली का मूल्यांकन तर्क संगत नहीं कहा जा सकता है। हिंदी में वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य का निर्माण जल्दी से जल्दी हो इसी भावना को ध्यान में रखकर परिषद ने इस ओर सराहनीय प्रयास किये हैं। शब्द संग्रह से संबंधित विषय में दक्ष वैज्ञानिकों की सहायता ली गयी है और विज्ञान के आधुनिक विषयों यथा घनावस्था विज्ञान, वर्णक्रमदर्शिकी, अंतरिक्ष विज्ञान, रेडियोरसायनिकी, न्यूक्लीय इंजीनियरी इत्यादि शब्दों के संकलन प्रकाशित किये गये हैं। शब्दावली आयोग, भारत सरकार के सहयोग से जून 1990 में एक शब्दावली कार्यशाला का आयोजन भी परिषद ने इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया है।

अनुवाद कार्य :

जैसा कि ऊपर बताया गया है अनुवाद कार्य से संबंधित विभिन्न मत हैं, परंतु परिषद की इस बारे में अपनी एक समन्वित नीति रही है। शब्दों के चुनाव में सरलता, बहुप्रचलितता एवं संस्कृत-मूलकता का विशेष ध्यान रखा जाता है ताकि पाठक को तकनीकी लेख समझने में सुविधा रहे। इस आधार पर संयुक्त राज्य अमेरिका के परमाणु ऊर्जा आयोग द्वारा प्रकाशित 'एटम बुकलेट्स सिरीज' तथा भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग की कुछ रिपोर्टों के अनुवाद-कार्य परिषद के तत्वावधान में किये गये। इसके अलावा, 'इंडिया बुक हाऊस' द्वारा दी गयी कुछ पुस्तकों का भी अनुवाद कार्य किया गया।

पुस्तक प्रकाशन :

हालांकि आरंभ में इस दिशा में काफी उत्साह के साथ कार्य किया गया परंतु किन्हीं अपरिहार्य कारणों से अधिक सफलता नहीं मिली। केवल 'महान भारतीय वैज्ञानिक', 'परमाणु सिद्धांत', विरल मृदा (रेअर अर्थ्स) तथा 'कंप्यूटिंग' नामक पुस्तकों का ही प्रकाशन संभव हो पाया।

विज्ञान वार्ताएं :

"वैज्ञानिक" प्रकाशन तथा अन्य कार्यों के साथ-साथ समसामयिक वैज्ञानिक विषयों पर वार्ताओं का सिलसिला आरंभ के दिनों से ही चलता आ रहा है। प्रति वर्ष कम से कम पांच या छः वार्ताएं परिषद के तत्वावधान में आयोजित की

जाती हैं। गत दो वर्षों से स्कूल के बच्चोंके लिए प्रश्न मंच कार्यक्रम का आयोजन भी किया जा रहा है।

विज्ञान संगोष्ठियाँ :

लोकप्रिय एवं सामयिक वैज्ञानिक वार्ताओं के अतिरिक्त परिषद द्वारा समय-समय पर वैज्ञानिक गोष्ठियों का आयोजन भी किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों में परमाणु ऊर्जा विभाग एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति से मिले आर्थिक सहयोग एवं प्रोत्साहन से अखिल भारतीय स्तर की संगोष्ठियों के आयोजन में भी परिषद को काफी सफलता मिली है। अब तक परिषद द्वारा आयोजित वैज्ञानिक संगोष्ठियों की सूची तालिका-2 में दी गयी है। इन संगोष्ठियों के आयोजनों का स्तर किसी भी रूप में अन्य भाषायी संगोष्ठियों के मुकाबले कम नहीं है।

अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता :

1970 से प्रति वर्ष परिषद अखिल भारतीय स्तर पर विज्ञान लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती रही है। प्रतियोगियों को न्यूक्लीय विज्ञान, भौतिकी रसायनिकी, जीव विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, अंतरिक्ष विज्ञान, मौसम विज्ञान, इंजीनियरी, चिकित्सा इत्यादि विषयों के अंतर्गत अपनी रुचि के विषय के चुनाव की स्वतंत्रता रहती है। मुख्य पुरस्कारों के अतिरिक्त अहिंदी भाषी प्रतियोगियों को विशेष पुरस्कार दिये जाने का भी प्रावधान रहता है। पुरस्कृत लेख "वैज्ञानिक" में प्रकाशित किये जाते हैं।

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के इन कार्यक्रमों की सफलता का श्रेय परमाणु ऊर्जा विभाग एवं भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के वरिष्ठ अधिकारियों के संरक्षण, प्रोत्साहन तथा उनकी व्यक्तिगत रुचि एवं प्रेरणा को जाता है। साथ ही, परिषद उन सभी कार्यकर्ताओं की सदैव ऋणी रहेगी जिन्होंने परिषद की गतिविधियों को अपना एक कार्य समझ कर निस्वार्थ भाव से उसे पूरा करने में यथा संभव प्रयत्न किये। यूं तो भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में हिंदी के लिए कार्य कर रही तीन संस्थाएं हैं, (i) केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद (ii) राजभाषा कार्यान्वयन समिति तथा (iii) हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, इनके कुछ कार्यक्रम लगभग एक ही प्रकार के थे। परंतु उनका आयोजन अलग अलग होता था। इससे वे अधिक प्रभावी नहीं बन पाते थे। बहरहाल, पिछले 3-4 वर्षों से इस दिशा में एक समन्वित दृष्टिकोण अपनाया गया तथा विज्ञान संगोष्ठियां, विज्ञान वार्ताएं, लेख प्रतियोगिता इत्यादि जैसे कार्य अब संयुक्त रूप से किये जाते हैं। फलस्वरूप, इन कार्यक्रमों की सफलता ने इस राष्ट्रीय आन्दोलन को उल्लेखनीय बल प्रदान किया है।

हिन्दी विज्ञान परिषद के मूल उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में, जहां तक हिंदी लेखकों एवं पाठकों को एक मंच प्रदान करने तथा तकनीकी साहित्य के प्रस्तुतीकरण के प्रश्न हैं, वे तो सफल कहे जा सकते हैं, परंतु वैज्ञानिक चिंतम हिंदी में किस सीमा तक संभव हो पा रहा है यह अभी एक प्रश्न बना हुआ है। इसका एक कारण यह लगता है कि प्रगत विज्ञान एवं तकनीकी का प्रथम अध्ययन हम अंग्रेजी में कर रहे हैं और फिर उसके रूपांतरण अथवा अनुवाद को हम हिंदी के माध्यम से पाठकों तक पहुंचाने का प्रयास कर रहे हैं। इस कारण कभी कभी तो विषय का मूल भाव ठीक से प्रसारित नहीं हो पाता है। दूसरा कारण हमारी संस्कृति एवं मानसिकता पर अंग्रेजी भाषा एवं साहित्य का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचार होता है। आज भी अंग्रेजी में बातचीत/प्रसारण इत्यादि का समाज में विशेष महत्व समझा जाता है। इस प्रकार हम सदियों की गुलामी के प्रभाव से ऊपर नहीं उठ पा रहे हैं। साथ ही हम देखते हैं कि संसार भर में विज्ञान संबंधित अधिकांश शोधग्रंथ (जरनल), पत्रिकाएं, रिपोर्ट इत्यादि अंग्रेजी में ही प्रकाशित होती हैं। अतः इन जानकारियों को ग्रहण करने के लिए अंग्रेजी की महत्ता स्वतः स्पष्ट है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अंग्रेजी भाषा का ज्ञान प्रगत विज्ञान की जानकारी ग्रहण करने का एक माध्यम समझ कर, एक भाषा के तौर पर अर्जित करें जिससे अपनी राष्ट्र भाषा तथा प्रादेशिक भाषाओं के विकास में अवरोध उत्पन्न न हो। प्रयत्न यह रहे कि तकनीकी साहित्य को प्रसारित करने में वे समर्थ होती चली जायें। यहीं पर यह भी आवश्यक हो जाता है कि हिंदी में हो रहे कार्यों को व्यावसायिक मान्यता एवं प्रोत्साहन मिले। हिंदी अथवा प्रादेशिक भाषाओं में प्रकाशित वैज्ञानिक लेख तथा शोध कार्य, और कार्यकर्ताओं को पदोन्नति/सम्मान के लिए बराबर का स्थान मिले ताकि इस राष्ट्रीय कार्य में जुटे लोग अपने इन कीर्तिमान/सफलताओं को समाज में बड़े गौरव के साथ बता सकें और अपने ज्ञान को अपनी भाषा में जन सामान्य तक पहुंचाने में कोई संकोच अनुभव न करें।

तालिका - 1

वैज्ञानिक विशेषांकों की सूची

	विशेषांक का नाम	वर्ष	अंक
1.	डा. विक्रम साराभाई स्मृति अंक	1972	4(1)
2.	खगोल भौतिकी	1972	4(3)
3.	टेलिविज़न	1972	4(4)
4.	हमारी पृथ्वी और ब्रह्माण्ड	1973	5(2)
5.	भारत में विज्ञान-कुछ उपलब्धियां	1975	7(1)
6.	अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष (महिला वैज्ञानिकों द्वारा लिखे गये लेख)	1975	7(4)
7.	शरीर विज्ञान	1978	10(2)
8.	जनहित में विज्ञान	1978	10(3)
9.	भूकंप विज्ञान	1978	10(4)
10.	पर्यावरण प्रदूषण (स्वर्ण जयंती अंक)	1981	13(1/2)
11.	अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष (विशेष सामग्री)	1981	13(3)
12.	पदार्थ विज्ञान	1981	13(4)
13.	जीव संरचना	1982	14(1)
14.	खगोल विज्ञान	1982	14(3/4)
15.	रेडियोरसायनिकी	1983	15(3/4)
16.	ध्रुव रिएक्टर	1984	16(2/3)
17.	भारतीय विज्ञान की भावी दिशाएं	1986	18(1/2)
18.	विकिरण सुरक्षा	1986	18(4)
19.	कृषि विज्ञान (भाग-1)	1987	19(2)
20.	कृषि विज्ञान (भाग-2)	1987	19(3)
21.	नाभिकीय शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	1989	21(1)
22.	लेसर	1990	22(1)
23.	नाभिकीय ऊर्जा	1990	22(4)

तालिका-2

परिषद द्वारा आयोजित / *सह-आयोजित संगोष्ठियां एवं कार्यशाला

	संगोष्ठी का नाम	संगोष्ठी का स्थल एवं दिनांक	संयोजक
1.	जनहित में विज्ञान (परिषद के 10 वें वर्ष के उपलक्ष्य में)	12 मार्च,1978	डा. भगवान कृष्ण गौड़
2.	पर्यावरण प्रदूषण ('वैज्ञानिक' की स्वर्ण जयंती के अवसर पर)	जून,1981	डा. भगवान कृष्ण गौड़
3.	*भारतीय विज्ञान की भावी दिशाएं	17 जनवरी,1986	डा. उमेश चन्द्र मिश्र
4.	*नाभिकीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी अध्यापन तथा अनुसंधान	1-2 दिसंबर,1986	डा. सूर्यदेव मिश्र
5.	कंप्यूटर क्षेत्र में नये विकास	18 जनवरी,1988	श्री एच. सी. कौरा
6.	*नाभिकीय ऊर्जा,	भोपाल,20-21 अप्रैल,1989	डा. ज्ञानेंद्र प्रसाद तिवारी
7.	* पर्यावरण प्रदूषण और उद्योग	18-19 सितंबर,1989	डा. उमेश चंद्र मिश्र
8.	लेसर का विकास एवं उपयोग	26 मार्च,1990	डा. एस. ए. अहमद एवं डा. हेमचंद्र पंत
9.	अतिचालकता	6 अप्रैल,1990	डा. जे. वी. यम्मी एवं श्री रामप्रसाद
10.	* शब्दावली कार्यशाला	26-29 जून,1990	श्री रमेशचंद्र पंत
11.	परमाणु ऊर्जा एवं विकास	12 जुलाई,1990	श्री सुधाकर कोकाटे
12.	* विज्ञान की भावी दिशाएं	इंदौर,7-8 दिसंबर,1990	डा. विजयकुमार मनचंदा
13.	आधुनिक जैविकी एवं जैव प्रौद्योगिकी (प्रस्तावित)		डा. सूर्य देव मिश्र
14.	परमाणु ऊर्जा एवं पदार्थ (प्रस्तावित)	पटना	डा. आर. विजयराघवन एवं डा. एस. ए. अहमद

नोट: क्रमांक 6, 12 व 14 के अतिरिक्त सभी आयोजन बंबई में संपन्न हुए हैं।

उद्घाटन भाषण

आप सब यह जानते हैं कि ज्ञान-विज्ञान के सहारे ही मनुष्य पत्थर-युग से ऊपर उठकर आज परमाणु एवं अंतरिक्ष युग तक पहुंच गया है । दुनियां के जो देश आज विकसित हैं, विज्ञान और टेक्नालाजी ही उनकी उन्नति के मुख्य साधन रहे हैं । यह एक यथार्थ है कि विज्ञान और टेक्नालाजी सामाजिक और आर्थिक बदलाव के शक्तिशाली साधन हैं । विज्ञान मनुष्य में हर बात को विश्लेषण करके सोचने, समझने व स्वीकार करने की मनोवृत्ति पैदा करता है और टेक्नालाजी उसे कार्य का रूप देती है । इस प्रकार विज्ञान एवं टेक्नालाजी मनुष्य की मानसिक व भौतिक प्रगति के साधन बन गये हैं ।

जन जीवन में वैज्ञानिक सोच पैदा करने और उसके लिए अनुकूल वातावरण बनाने में विज्ञान - संस्थानों और विश्वविद्यालयों की एक अहं भूमिका है । विज्ञान को आम आदमी और छात्र वर्ग तक पहुंचाने का दायित्व इन दोनों पर है । जब आम आदमी को साथ में लेना है तो तय है कि उससे उसकी भाषा में ही बात करनी होगी । भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बंबई इस दिशा में तीन स्तरों पर कार्य कर रहा है । एक है - वैज्ञानिक व तकनीकी विषयों पर हिंदी गोष्ठियों का आयोजन करना, जिनमें युवा वैज्ञानिकों को भाग लेने के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित किया जाता है । दूसरा, हिंदी की त्रैमासिक पत्रिकाओं 'परमाणु' व 'वैज्ञानिक' के माध्यम से नाभिकीय टेक्नालीजी और विज्ञान के विविध विषयों को प्रकाशित करना है । तीसरा, नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम से संबंधित अनेक पहलुओं पर आम जनता के साथ सीधा संवाद कायम करना है, जैसा कि इस गोष्ठी में प्रयास किया जा रहा है । इस प्रकार हमारा केंद्र वैज्ञानिक सोच और जागरूकता पैदा करने के अभियान में अपनी भूमिका निभा रहा है ।

आज भारत की गणना दुनिया के 6-7 अग्रणी एवं नाभिकीय देशों में होती है क्योंकि हमने पूरे नाभिकीय ईंधन चक्र में आत्मनिर्भरता हासिल कर ली है । हम यूरेनियम और थोरियम के अयस्कों के खनन से लेकर आक्साइड बनाने, उससे ईंधन छड़ें तैयार करने, रिएक्टर में लगाने और इस्तेमाल के बाद पुनर्संसाधन और अपशिष्ट प्रबंधन तक का सारा काम करते हैं । इस पूरी प्रक्रिया में रासायनिकी, धातुकी, भौतिकी और इंजीनियरी की तमाम विधाओं का समावेश होता है । इसलिए हमें अपने नाभिकीय कार्यक्रम के लिए अनेक प्रकार के प्रशिक्षित लोगों की जरुरत होती है । विविध विषयों में विशेष ज्ञान हासिल करने के लिए शोध एवं विकास का सक्रिय कार्यक्रम भी चल रहा है ।

हम यह चाहते हैं कि वे वैज्ञानिक जो विज्ञान की अन्य विधाओं में काम कर रहे हैं, नाभिकीय विज्ञान में भी रुचि लें । इससे नाभिकीय ऊर्जा के इर्दगिर्द बनी रहस्य की परतें खुल सकेंगी । साथ ही वह कितनी फायदेमंद व सुरक्षित हैं इसका भी अनुमान लोगों को हो जायेगा ।

बिजली उत्पादन के अलावा नाभिकीय कार्यक्रम में कई दूसरे महत्वपूर्ण लक्ष्य भी हैं, जैसे कि रेडियोआइसोटोप उत्पादन और उनका कृषि, उद्योग और चिकित्सा में उपयोग । कोबाल्ट-60 द्वारा कैंसर का इलाज और बीजों की नस्ल बदलकर बेहतर गुणोंवाले बीज बनाना आदि जाने माने उदाहरण हैं जिनमें भा. प. अ. केंद्र ने उल्लेखनीय योग दिया हैं । हमारे केंद्र में स्वास्थ्य और सुरक्षा पर भी विशेष बल

दिया गया है । इस क्षेत्र में न केवल गहन शोध होता है बल्कि देश में सभी विकिरण स्रोतों के साथ काम करने वाले लोगों की नियमित जांच भी की जाती है । हाल ही में ऐसा आभास हुआ है कि नाभिकीय उद्योग में अपनाये जाने वाले सुरक्षा प्रतिमानों को अन्य उद्योगों में भी लागू किया जाना चाहिए ।

हमें अधिक संख्या में प्रशिक्षित लोगों की जरुरत होगी । इसे पूरा करने के लिए आवश्यक है कि हम अधिक से अधिक छात्रों को विज्ञान व टेक्नालाजी के शिक्षण की ओर आकर्षित करें । विज्ञान के क्षेत्र में होने वाली उत्तेजनाओं और नये विचारों में हम उन्हें सहभागी बनायें और उनकी क्षमता के विकास का उन्हें पूरा पूरा अवसर दें । मुझे विश्वास है कि विज्ञान की गूढ़ बातों को उनकी भाषा में रखकर हम अधिक कुशलता से यह काम कर सकेंगे । दूसरे शब्दों में, विज्ञान व वैज्ञानिक सोच को बड़ी निकटता से उनके जीवन के संस्कारों के साथ जोड़ना होगा । इस प्रकार बनी वैज्ञानिक दृष्टि ही वैज्ञानिक संस्कृति का आधार बनेगी जो वैज्ञानिक विकास की एक अनिवार्य कड़ी होती है ।

यहां पर होने वाली दो दिन की गोष्ठी हमारे केंद्र द्वारा विज्ञान के प्रचार-प्रसार की एक अभिन्न और महत्वपूर्ण कड़ी है । मुझे आशा है और विश्वास भी है कि यह अपने उद्देश्य में सफल साबित होगी । इन शुभकामनाओं के साथ गोष्ठी के उद्घाटन की घोषणा करते हुए मुझे बड़ी खुशी हो रही है । आशा है कि इन दो दिनों में नाभिकीय ऊर्जा के तमाम पहलुओं पर विशेषज्ञों की वार्ताओं से आप सब लाभान्वित होंगे ।

डा. पी. के. अय्यंगार
अध्यक्ष, परमाणु ऊर्जा आयोग एवं
सचिव, परमाणु ऊर्जा विभाग, भारत सरकार
तथा संरक्षक, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, बंबई.

प्रमुख वार्ता :

नाभिकीय ऊर्जा के क्षेत्र में भारतीय अनुभव एवम् उपलब्धियां

एस. एल. काटी
प्रबंध निदेशक, न्यूक्लियर पॉवर कारपोरेशन,
बंबई

इस वार्ता में परमाणु विखंडन के प्रारंभिक प्रयोगों से लेकर परमाणु ऊर्जा से बिजली बनाने तक के प्रयासों का वर्णन है । परमाणु ऊर्जा आयोग के जन्म, उसकी नीतियों और कार्य प्रणाली का विवरण दिया गया है । अप्सरा, सायरस और पॉवर रिएक्टरों के इतिहास, विशेषताओं तथा भारतीय उद्योगों के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में योगदान की जानकारी दी गयी है ।

भारत में सन् 2000 तक 10,000 मेगावाट न्यूक्लियर बिजली की आपूर्ति करवाने वाले कार्यक्रम की रुपरेखा बतायी गयी है । परमाणु ऊर्जा के पूर्ण ईंधन चक्र में भारत की निपुणता के साथ-साथ वार्ता में सुरक्षा और रेडियोधर्मिता के बारे में सामान्य भ्रांतियों की भी चर्चा है । टी. एम. आई.-2 और चेरेनोबिल-4 की दुर्घटनाओं और उनसे मिली शिक्षा के बारे में बताया गया है ।

न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन की चर्चा के साथ-साथ परमाणु ऊर्जा परियोजनाओं के देर से पूरा होने के कारणों और उनके निवारण का वर्णन है । अंत में जीवन स्तर के उत्थान में ऊर्जा का योगदान, बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण अत्यधिक ऊर्जा की आवश्यकता और परमाणु ऊर्जा की परिपक्वता पर जोर देते हुए आने वाले दशकों में परमाणु ऊर्जा को असीमित ऊर्जा का सफल सुरक्षात्मक और सस्ता साधन बताया गया है ।

सन् 1989 परमाणु विखंडन की स्वर्ण जयंती का वर्ष है । जैसा कि आप सब को मालूम होगा परमाणु विखंडन की खोज 1939 में हुई । 12 दिसेंबर, 1942 में एन्रिको फर्मी ने 'शिकागो पाइल' नामक सबसे पहला प्रयोगात्मक न्यूक्लियर रिएक्टर बनाया । उसके बाद परमाणु ऊर्जा का प्रयोग सामरिक क्षेत्र में किया गया । यह एक विडम्बना ही है कि किसी भी नयी उपलब्धि का पहला प्रयोग अक्सर सैनिक क्षेत्र में ही हुआ करता है, यहां तक कि स्टील का पूरा प्रारंभिक उत्पादन भी सैनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित था । मैं आपको ऐसे उदाहरण भी दे सकता हूँ जिसमें शुरु-शुरु की बनी पक्की सड़कों का प्रयोग सैनिक टुकड़ियों के लिए सीमित था । परंतु जब सैनिक आवश्यकताएं पूरी हो जाती हैं तो इन नये आविष्कारों के फायदे जन-सामान्य के लिए भी उपलब्ध कराये जाते हैं ।

परमाणु ऊर्जा के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ । हीरोशिमा और नागासाकी के विनाश के बाद वैज्ञानिकों ने इसी परमाणु ऊर्जा का उपयोग बिजली बनाने की दिशा में करना चाहा और कई प्रयोगों के बाद सन् 1954 में सोविएत संघ के ओबिंस्क (Obinsk) शहर में 5 मेगावाट का न्यूक्लियर रिएक्टर पहली बार वाणिज्यिक रूप में चालू हुआ । उसके बाद परमाणु ऊर्जा दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करती गयी । सन् 1987 के अंत तक पूरे विश्व में 26 देशों में 417 न्यूक्लियर रिएक्टर लगभग 3 लाख मेगावाट बिजली का उत्पादन कर रहे थे । यह बिजली पूरे विश्व की बिजली उत्पादन का लगभग 16 प्रतिशत थी । सन् 1988 में पूरे विश्व में न्यूक्लियर रिएक्टरों ने लगभग 12,5000 टेरावाट पावर बिजली का उत्पादन किया । तुलना के लिए मैं आपको बता दूं कि इतनी बिजली उत्पन्न करने के लिए लगभग 5 अरब टन कोयला तथा लगभग तीन अरब टन तेल की आवश्यकता पड़ती । विश्व में अन्य 120 न्यूक्लियर रिएक्टर निर्माणाधीन हैं और इनके पूरे हो जाने पर न्यूक्लियर बिजली के उत्पादन की क्षमता में लगभग एक लाख मेगावाट की वृद्धि होगी ।

भारत और परमाणु ऊर्जा

इस अग्रिम तकनीकी क्षेत्र में भला भारत कहां पीछे रहने वाला था। डा. भाभा जैसे दूरदर्शी वैज्ञानिकों की सूझ-बूझ और प्रेरणा से स्वतंत्रता प्राप्त करने से पहले ही भारत ने परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में काम करना चालू कर दिया था । डॉ. भाभा ने सन् 1944 में सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट को अपने एक पत्र में इस क्षेत्र में एक अग्रणी स्कूल की स्थापना का अनुरोध किया था और इस तरह 1945 में टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान (TIFR) का जन्म हुआ। स्वतंत्रता के तुरंत बाद 15 अप्रैल, 1948 को परमाणु ऊर्जा अधिनियम लागू हुआ और इसके 4 महीने बाद 10 अगस्त, 1948 को परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना हुई। उस समय परमाणु ऊर्जा आयोग में 50 से भी कम व्यक्ति थे। शुरु-शुरु में परमाणु ऊर्जा आयोग ने अपना कार्य वैज्ञानिक अनुसंधान विभाग (Deptt. of Scientific Research) और बाद में प्राकृतिक संसाधन एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय (Ministry of National Resources and Scientific Research) के अधीन किया गया था । बाद में 3 अगस्त, 1954 को परमाणु ऊर्जा विभाग की स्थापना हुई। नवंबर, 1954 में " शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए परमाणु ऊर्जा का विकास " विषय पर दिल्ली में एक अधिवेशन हुआ जिसमें हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरु ने कहा," अगर आप किसी देश की उन्नति का मूल्यांकन करना चाहते हैं तो आपको केवल इतना पता करना पड़ेगा कि वह देश कितनी बिजली का उत्पादन और प्रयोग करता है ।" उन्होंने यह भी कहा कि " हम परमाणु ऊर्जा का इस्तेमाल बिजली उत्पादन के लिए करना चाहेंगे क्योंकि बिजली देश के विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है ।" उसी वर्ष डॉ. भाभा ने परमाणु ऊर्जा से बिजली बनाने के लिए तीन चरणीय योजना प्रस्तुत की । इसके अनुसार पहले चरण में प्राकृतिक यूरेनियम वाले रिएक्टरों का निर्माण था जो कि बिजली तो बनाएंगे ही, साथ में प्लूटोनियम भी पैदा करेंगे । दूसरे चरण के रिएक्टरों में देश में अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध थोरियम को इस्तेमाल करके यूरेनियम 233 तथा प्लूटोनियम और बिजली की पैदाइश होगी । तीसरे चरण में यू-233 ईंधन और थोरियम को ब्रीडर रिएक्टर में इस्तेमाल करके बिजली और ज्यादा यू-233 के उत्पादन की व्यवस्था है । डॉ. भाभा की यह योजना बहुत ही गूढ़ और दूरदर्शी थी क्योंकि उन्होंने यह भारत के यूरेनियम और थोरियम जैसे प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए पेश की थी । प्राकृतिक यूरेनियम ईंधन वाले रिएक्टरों में यूरेनियम की खपत भी कम होती है और इस तरह के रिएक्टर स्वदेशी साधनों से भी बनाये जा सकते हैं ।

सन् 1954 में ब्रिटेन ने भारत को तरल कुंड (स्वीमिंग पूल) प्रकार के रिएक्टर हेतु सम्पन्नीकृत (एनरिच्ड) यूरेनियम देने का प्रस्ताव पेश किया और अगस्त 1956 में भारत तथा एशिया का पहला रिएक्टर अप्सरा क्रांतिक (Critical) हुआ। डॉ. भाभा और पंडित नेहरु की विचारधारा एक जैसी होने के कारण परमाणु ऊर्जा आयोग को भारत सरकार का अत्यधिक प्रोत्साहन मिला। अप्रैल 1955 में कनाडा ने कोलंबो योजना के अंतर्गत भारत को एक न्यूक्लियर रिएक्टर बनाने में मदद का प्रस्ताव रखा। पंडित नेहरु के परमाणु ऊर्जा के प्रति पक्षीय झुकाव का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि डॉ. भाभा के तार का जवाब तार से देकर भारत सरकार ने 7 करोड़ रुपये की सायरस परियोजना की अनुमति केवल तीन दिन में भेज दी थी। सायरस (कनाडा-भारत रिएक्टर) 10 जुलाई, 1960 को क्रांतिक (Critical) हुआ । इस रिएक्टर का आधा ईंधन भारत में ही बना जबकि बाकी के आधे ईंधन की पूर्ति कनाडा ने की ।

भारतीय ऊर्जा कार्यक्रम को आत्मनिर्भर बनाने के लिए डॉ. भाभा ने और भी कई महत्वपूर्ण कदम उठाए । सन् 1957 में "परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान ट्रॉम्बे"(Atomic Energy Establishment Trombay) का उद्घाटन पंडित नेहरु के कर कमलों द्वारा हुआ । 1967 में इसी संस्था का नाम डॉ. भाभा की आकस्मिक मृत्यु के बाद उनको सम्मानित करते हुए " भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र " (B.A.R.C.) रखा गया । अगस्त 1957 में बी.ए.आर.सी. के ट्रेनिंग स्कूल का उद्घाटन हुआ । इस स्कूल में वैज्ञानिकों और इंजीनियरों को परमाणु ऊर्जा से जुड़े हुए विषयों की विस्तृत जानकारी दी जाती है और यही वैज्ञानिक और इंजीनियर बाद में भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की आधार-शिला बनते हैं। अब तक लगभग 5000 वैज्ञानिक और इंजीनियर इस स्कूल से प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं और ये लोग न केवल भारतीय परमाणु कार्यक्रम के महत्वपूर्ण पदों पर कार्यरत हैं बल्कि भारत सरकार के दूसरे विभागों में भी अपना योगदान दे रहे हैं ।

भारतीय न्यूक्लियर पॉवर रिएक्टर कार्यक्रम

जब डॉ. भाभा ने देखा कि भारतीय वैज्ञानिक और इंजीनियर प्रयोगात्मक रिएक्टरों को बनाने और चलाने में निपुण हो गये हैं तो उन्होंने अपना ध्यान पॉवर रिएक्टरों की तरफ दिया । अगस्त 1958 में योजना आयोग ने तीसरी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत एक 300 मेगावाट का परमाणु बिजली घर स्थापित करने के प्रस्ताव को अनुमोदित कर दिया और इस प्रकार पहले परमाणु बिजली घर को तारापुर में लगाने का निर्णय लिया गया । उस समय (1960) भारत के पास विभिन्न रिएक्टर प्रणालियों के प्रस्ताव आये थे पर समय की बारीकियों को ध्यान में रखते हुए तारापुर में 210 मेगावाट प्रत्येक के दो बॉयलिंग वॉटर प्रकार के रिएक्टर लगाने का निर्णय लिया गया। इन रिएक्टरों में संपन्नीकृत (एनरिच्ड) यूरेनियम का प्रयोग होता है । यद्यपि यह रिएक्टर प्रणाली भारत की दीर्घकालीन परमाणु ऊर्जा योजना से मेल नहीं खाती थी परंतु वित्तीय दृष्टिकोण से यह पेशकश बहुत आकर्षक थी और भारतीय वैज्ञानिकों और इंजीनियरों को न्यक्लियर रिएक्टर के डिजाइन और निर्माण में हिस्सा लेने का अवसर प्रदान करती थी । जल्दी-से-जल्दी न्यूक्लियर रिएक्टर लगाकर डॉ. भाभा यह सिद्ध करना चाहते थे कि परमाणु द्वारा बिजली का उत्पादन संभव है और ज्यादा महंगा नहीं है । तारापुर बिजली घर 1969 में चालू हुआ और महाराष्ट्र और गुजरात को न्यूक्लियर बिजली मिलने लगी ।

सन् 1962 में एटॉमिक एनर्जी ऑफ कनाडा के सहयोग से डगलस प्वाईंट (CANDU) किस्म के दाबित भारी पानी रिएक्टर (Pressurised Heavy Water Reactor) लगाने का निर्णय लिया गया । कोटा में चंबल नदी के किनारे रावतभाटा में 220 मेगावाट (प्रत्येक) क्षमता के दो रिएक्टर लगाये गये । इन रिएक्टरों में प्राकृतिक यूरेनियम का ईंधन इस्तेमाल किया जाता है और भारी पानी माडरेटर और कूलेंट के रूप में इस्तेमाल किया जाता है । पहला रिएक्टर दिसंबर 73 में दूसरा रिएक्टर अप्रैल 81 में वाणिज्यिक रूप से चालू हुआ । उल्लेखनीय बात यह है कि राजस्थान परमाणु बिजली घर की पहली इकाई (RAPS-1) में भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग और भारतीय उद्योगों का काफी योगदान रहा । RAPS-1 के लिए आधा न्यक्लियर ईंधन, 250 MVA जनरेटर ट्रांसफॉर्मर, जो उस वक्त देश में सब से बड़ा था, 220 KV स्विच गियर स्वदेशीय साधनों से प्राप्त किये गये । राजस्थान की दूसरी इकाई के लिए स्टीम जनरेटर, कलेंड्रिया, एण्ड शील्ड्स, डम्प और फ्युएलिंग मशीन हेड भारत में ही बने । इन दोनों इकाइयों के निर्माण की पूरी जिम्मेदारी भारत पर थी ।

तीसरा परमाणु बिजली घर मद्रास में महाबली पुरम के मंदिरों के पास कलपाकम में लगाया गया । इन दोनों इकाइयों (प्रत्येक) की क्षमता 235 मेगावाट है । मद्रास की पहली इकाई 27 जनवरी, 1984 और दूसरी इकाई 21 मार्च 1986 में वाणिज्यिक रूप से परिचालित हुई । मद्रास परमाणु बिजली घर का पूरा डिजाइन परमाणु ऊर्जा विभाग के इंजीनियरों द्वारा तैयार किया गया था । इस परमाणु बिजली घर की कई विषताएं हैं, जैसे कि सागर जल के कंडेंसर को ठंडा करने के लिए इस्तेमाल होने वाले, समुद्री पानी को लाने के लिए सागरगत सुरंग (सब-मरीन टनेल) और पूर्णतया आंतरिक स्विच यार्ड इत्यादि । इस बिजली घर की एक और विशेषता यह भी है कि डाउजिंग सिस्टम जिसके लिए कुछ वाल्वों का खुलना आवश्यक था, उसके स्थान पर एक ज्यादा सुरक्षात्मक वाष्प शमन कुंड (वेपर सप्रेशन पूल) लगाया गया है और साथ में ही आंशिक दोहरे संरोधन की व्यवस्था भी की गयी है ।

मद्रास के बाद उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर जिले में नरोरा में 235 मेगावाट प्रत्येक की दो इकाइयों का निर्माण किया गया । जैसा कि आप सभी को मालूम होगा कि नरोरा की पहली इकाई इस वर्ष 12 मार्च को क्रांतिक (Critical) हुई । दूसरी इकाई की मई 1990 में शुरू होने की आशा है । नरोरा डिजाइन सभी भावी 235 मेगावाट रिएक्टरों के लिए मानकीकृत डिजाइन है । इस डिजाइन की एक खास विशेषता यह भी है कि इस डिजाइन को भविष्य में बननेवाले 500 मेगावाट रिएक्टरों के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है । नरोरा भूकंपीय खंड में अवस्थित है, इसलिए इसके डिजाइन में ऐसी सभी सावधानियां बरती गयी हैं जिससे कि भूकंप की अवस्था में भी रिएक्टर प्रणाली को किसी क्षति या नुकसान की संभावना न हो । नरोरा डिजाइन में निरंतर विकसित हो रहे अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा मानकों का भी बारीकी से अनुपालन किया गया है । नरोरा डिजाइन की कुछ और विशेषताएं इस प्रकार है :

1. नरोरा में रिएक्टर बंद करने के लिए दो अलग तीव्र गति से काम करने वाले शट डाउन सिस्टम हैं ।
2. नरोरा में पूर्ण दोहरे संरोधन (डबल कन्टेनमेंट) की व्यवस्था है जिससे कि दुर्घटना की स्थिति में भूमि स्तर पर रेडियोधर्मिता न होने के बराबर होगी ।
3. नरोरा संयंत्र में उपस्करों और घटकों की संख्या कम करने के लिए बड़ी क्षमता वाले उपस्करों और घटकों का प्रयोग किया गया है । इस के दोहरे फायदे हैं - (i) सिस्टम लेआउट सरल हो गया है । (ii) वेल्डिंग जोड़ कम हो गये हैं, जिसके कारण भारी पानी के रिसने की संभावना भी बहुत कम हो गयी है ।
4. अनुरक्षण को सरल करने के लिए उपस्करों के बीच में अपेक्षित दूरियां रखी गयी हैं ।
5. भारी पानी की प्राप्ति को सरल बनाने के लिए रिएक्टर बिल्डिंग में भारी पानी और सामान्य जल के क्षेत्र, जहां तक संभव है, अलग किये गये हैं ।

नरोरा के बाद काकरापार (गुजरात) और राजस्थान के परमाणु बिजली घर के विस्तार के रूप में राजस्थान 3 एवं 4 में 235 मेगावाट की दो-दो इकाइयों पर काम शुरू हो गया है। कैगा में भी 235 मेगावाट क्षमता (प्रत्येक) के दो रिएक्टर निर्माणाधीन हैं ।

भावी कार्यक्रम

भारतीय ऊर्जा के इतिहास में पहली बार भारत सरकार ने एक ही समय में 4000 मेगावाट की न्यूक्लियर क्षमता स्थापित करने की अनुमति दी है । इसके अंतर्गत 235 मेगावाट के चार और रिएक्टर कैगा में लगाये जाएंगे। 500 मेगावाट के दो रिएक्टर तारापुर में और 500 मेगावाट के चार रिएक्टर रावतभाटा में लगाए जाएंगे । इन सबको मिलाकर परमाणु ऊर्जा की संस्थापित क्षमता लगभग 7000 मेगावाट हो जाएगी । छह और 500 मेगावाट यूनिटों की स्थलों का निर्णय भी इसी वर्ष होने की आशा है । इन छः रिएक्टरों पर आठवीं पंचवर्षीय योजना में काम शुरू हो जाएगा और इस तरह सन् 2000 तक स्वदेशीय परमाणु ऊर्जा की 10,000 मेगावाट की आपूर्ति होगी । बिजली की अत्यधिक मांग और कम पूर्ति को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने सन् 1988 में सोविएत संघ के साथ 1000 मेगावाट प्रत्येक के दो रिएक्टरों के आयात का समझौता किया है । ये रिएक्टर स्वदेशी कार्यक्रम के 10,000 मेगावाट के लक्ष्य के अतिरिक्त हैं ।

पूर्ण आत्मनिर्भरता

भारत संसार के उन गिने-चुने देशों में है जिनके पास परमाणु ऊर्जा के पूर्ण इंधन चक्र की सारी सुविधाएं विकसित रूप में उपलब्ध हैं । हमारे पास खानों में से यूरेनियम खनिज को निकालने और उसको न्यक्लियर ईंधन में परिवर्तित करने की क्षमता से लेकर इस्तेमाल हुए ईंधन के पुनर्संसाधन और अपशिष्ट प्रबंधन तक की सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं । भारी पानी जैसे दुर्लभ पदार्थ की प्राप्ति के लिए भी परमाणु ऊर्जा आयोग ने आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए सन् 1954 में ही निर्णय ले लिया था । भारी पानी संयंत्र नंगल, कोटा, बड़ौदा, ट्यूटीकोरिन, तलचर, थाल, हजीरा और मनुगुरू में लगाये गये हैं । जैसा कि मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि सायरस और RAPS-1 का आधा-आधा ईंधन भारतीय स्रोतों से ही प्राप्त किया गया था । हैदराबाद में स्थित न्यूक्लियर ईंधन सम्मिश्र भारतीय परमाणु ऊर्जा के सभी प्रकार के ईंधन बनाने में समर्थ है ।

सुरक्षा

न्यूक्लियर शिल्प वैज्ञानिकों ने न्यूक्लियर तकनीकी के सुरक्षा के सभी क्षेत्रों को शुरू से ही महत्व दिया है । परमाणु ऊर्जा नियामक बोर्ड 15 नवंबर, 83 में गठित किया गया और यह बोर्ड सभी न्यक्लियर सुविधाओं और संयंत्रों के औद्योगिक और रेडिओलाजिक सुरक्षा की समीक्षा करने के लिए प्राधिकृत है । समीक्षा कार्य को प्रभावी बनाने के लिए परमाणु ऊर्जा नियामक बोर्ड कार्य-समूह और सलाहकारी समितियों का गठन करता है । बोर्ड इस बात का भी खयाल रखता है कि उनकी समूची समीक्षा अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी की मार्गदर्शित सीमाओं से भी बेहतर हो । बोर्ड स्थल चयन के मार्गदर्शन और मानक डिजाइन, निर्माण, कमीशनिंग, परिचालन और डी-कमिशनिंग के सारे पहलुओं का बारीकी से अध्ययन करता है और इसके प्राधिकरण के बिना कोई कार्य नहीं किया जाता । हालांकि इस स्वतंत्र बोर्ड का गठन 1983 में हुआ, इसका यह मतलब नहीं है कि इससे पूर्व कोई सुरक्षा

समीक्षा नहीं की जाति थी । इससे पहले यह कार्य संयंत्र की आंतरिक सुरक्षा समिति और परमाणु ऊर्जा विभाग की सुरक्षा समिति किया करती थी। विश्व में सुरक्षा के प्रति बढ़ती हुई सतर्कता और भारत में न्यूक्लियर पावर संयंत्रों की बढ़ती हुई संख्या को ध्यान में रखते हुए एक स्वतंत्र परमाणु ऊर्जा नियामक बोर्ड की स्थापना की गयी ।

परमाणु ऊर्जा पर कोई भी वार्ता टीएमआई और चेरनोबिल की दुर्घटनाओं की चर्चा किये बिना संपूर्ण नहीं होगी। अमरीका के टीएमआई (थ्री माईल आइलैंड) परमाणु बिजली घर दूसरी इकाई और सोविएत संघ के चेरनोबिल परमाणु बिजली घर की चौथी इकाई की दुर्घटनाओं ने परमाणु बिजली के प्रति जन सामान्य में एक नये विरोध की चेतना को जन्म दिया है । जबकि टीएमआई-दो की दुर्घटना में किसी भी व्यक्ति की जान की हानि नहीं हुई, चेरनोबिल-4 की दुर्घटना में आग बुझाने की क्रिया में 31 व्यक्तियों की मृत्यू हुई । वास्तव में टीएमआई दुर्घटना ने यह सिद्ध कर दिया कि परमाणु बिजली घर में शटडाउन सिस्टम की सारी प्रक्रियाएं सुचारु रुप से चालू होकर रिएक्टर को बंद, या शटडाउन करने में सफल हुईं। टीएमआई की दुर्घटना के कारण हमने भी अपने रिएक्टरों में रिएक्टर कोर को हर स्थिति में ठंडा करने के लिए उपाय विकसित किये है ।

चेरनोबिल दुर्घटना की पूरे विश्व और भारत में बारीकी से समीक्षा की गयी और हम इस निर्णय पर पहुंचे हैं कि भारत के पी एच डब्ल्यू आर (PHWR) के मूल डिजाइन में इतनी विशेषताएं हैं कि चेरनोबिल जैसे आरबीएमके (RBMK) प्रकार के रिएक्टर में हुई दुर्घटना हमारे रिएक्टरों में संभव ही नहीं है और चेरनोबिल दुर्घटना में मानवीय लापरवाही का भी काफी योगदान था। चेरनोबिल ने आपरेटर ट्रेनिंग और री-ट्रेनिंग और आपातकालीन परिस्थितियों के लिए योजनाओं के प्रति हमें जागरुक किया है ।

मैं परमाणु ऊर्जा के प्रति व्याप्त कुछ और भ्राँतियों या गलतफहमियों को दूर करना चाहूंगा । जनसाधारण की ऐसी धारणा है कि परमाणु बिजली घर के आस पास रेडियोधर्मिता या रेडिओएक्टिविटी या रेडिएशन बहुत मात्रा में होती है और उसके करीब रहना या बसना खतरनाक है । यह बिलकुल गलत है । इसके प्रतिकूल हमें रोजमर्रा की जिंदगी में दूसरे स्रोतों से कहीं अधिक मात्रा में रेडिएशन लेनी पड़ती है । जैसे कि भोजन, पानी और हवा में प्राकृतिक रुप में विद्यमान तत्वों से हमें 25 मिलिरेम प्रतिवर्ष की विकिरण डोज लेनी ही पड़ती है । नैसर्गिक किरणों से इससे लगभग दुगुनी मात्रा में रेडिएशन मिलती है । कुल मिलाकर सभी प्राकृतिक स्रोतों से प्रतिवर्ष लगभग 200-250 मिली रेम रेडिएशन मिलती है । तुलना के लिए में आपको बता दूं कि परमाणु बिजली घर से मिलने वाली रेडिएशन डोज की सीमा प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष पांच सौ मिली रेम ही निर्धारित की गयी है और वास्तविक मात्रा इससे बहुत ही कम मापी गयी है । सच तो यह है कि कोयला इस्तेमाल करने वाले ताप बिजलीघरों के आस-पास की रेडियोधर्मिता न्यूक्लियर बिजली घरों के आस-पास की रेडियोधर्मिता से चार गुनी अधिक पायी गयी है ।

एन. पी. सी.

अब मैं आप को संक्षेप में न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन के इतिहास के बारे में बताना चाहूंगा । 1964 में राजस्थान परमाणु ऊर्जा परियोजना (RAPP) कार्यालय की स्थापना बंबई में की गयी । शुरु-शुरु में परमाणु ऊर्जा का कार्य बी.ए.आर.सी. के अंतर्गत किया जाता था । जब नाभिकीय ऊर्जा के कार्यक्रम में बढ़ौत्री की योजनाएं बनीं तो अप्रैल 1967 को पावर प्रोजेक्ट इंजीनियरिंग डिवीजन (P.P.E.D.)की स्थापना की गयी । भारत में बनने वाले सारे नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों के पूर्ण डिजाइन, इंजीनियरिंग, माल और उपस्करों की आपूर्ति, निर्माण, कमिशनिंग, परिचालन और अनुरक्षण का उत्तरदायित्व पी.पी.ई.डी. पर था ।

नाभिकीय ऊर्जा को वाणिज्यिक रुप में चलाने के लिए जुलाई 1970 में परमाणु ऊर्जा प्राधिकरण (Atomic Power Authority) का स्थापन किया गया, पर 1 जुलाई को परमाणु ऊर्जा प्राधिकरण का पी.पी.ई.डी में विलय कर दिया गया ।

परमाणु ऊर्जा के प्रस्तावित विस्तार को ध्यान में रखते हुए 17/8/84 को न्यूक्लियर पावर बोर्ड की स्थापना की गयी। इस बोर्ड का लक्ष्य परमाणु ऊर्जा आयोग के 15 वर्षीय कार्यक्रम अर्थात् सन् 2000 तक 10,000 मेगावाट बिजली को जल्द से जल्द लागू करना था । इतने बड़े और विशाल कार्यक्रम के लिए लगभग 14,000 करोड़ रुपये के संसाधनों की आवश्यकता थी। इसलिए 1987 में परमाणु ऊर्जा अधिनियम

में संशाधन करके 3 सितंबर 1987 को न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन की स्थापना की गयी । एन.पी.सी. भारत सरकार का उपक्रम है । इसकी प्राधिकृत पूंजी 2000 करोड़ है। परमाणु ऊर्जा संयंत्रों के रोजमर्रा के निर्णय अब पूर्णतया कारपोरेशन ले सकती है । कारपोरेशन बनाने का दूसरा फायदा यह है कि सामान्य जनता से पूंजी उधार लेकर भारत सरकार का वित्तीय बोझ कम किया जा सकता है । अब कारपोरेशन लगभग एक तिहाई पूंजी खुद पैदा करेगी, एक तिहाई भारत सरकार से और एक तिहाई पूंजी सामान्य जनता और संस्थानों से ऋण के रुप में लेगी । कारपोरेशन ने अपने पहले वर्ष में लगभग 60 करोड़ रूपये का लाभ कमाया ।

परियोजनाओं में विलम्ब — कारण और उपाय

परमाणु ऊर्जा परियोजनाएँ निर्धारित समय में पूरी नहीं हो पातीं, इस बात पर काफी नुक्ता चीनी होती है । हमको इस बात को ध्यान में रखना पड़ेगा कि इस क्षेत्र में स्वावलंबी होना अत्यंत आवश्यक है । शुरु-शुरु में हमारे इंजीनियर और उद्योग, दोनों इस उच्च टैक्नोलाजी के क्षेत्र को सीख रहे थे । परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में सुरक्षा के कारण गुणवत्ता का विशेष ध्यान रखना पड़ता है । हमारे औद्योगिक प्रतिष्ठानों में उस समय इस तरह की कड़ी गुणवत्ता-परीक्षण की क्षमता नहीं थी। पर धीरे-धीरे उद्योगों ने कमर बांध कर इन चुनौतियों का सामना किया और कसौटी पर खरे उतरे । उदाहरण के तौर पर केलेंड्रिया बनाने का समय 6-7 वर्ष से कम हो कर तकरीबन 3 वर्ष हो गया है ।

हमने भी परियोजनाओं का समय कम करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं । इनमें कुछ इस प्रकार है :

(i) डिजाइन का मानकीकरण

(ii) लंबी आपूर्ति अवधि वाले उपस्करों और खास पदार्थों (Materials) के लिए पहले से ही आपूर्ति प्रक्रिया का आरंभ

(iii) एक ही प्रतिष्ठान को अधिक मात्रा में उपस्करों का आर्डर (batch ordering)

(iv) निर्माण प्रक्रिया में सुधार (ज्यादा क्षमता वाली क्रेनों का प्रयोग)

(v) अधिक कुशल निगरानी

(vi) अधिक कुशल परिचालन और आपूर्ति एवं निर्माण पैकेज इत्यादि-इत्यादि।

परमाणु ऊर्जा ही क्यों ?

किसी भी राष्ट्र के रहन-सहन के स्तर का जायजा उस राष्ट्र की बिजली उत्पादन और खपत के आंकड़ों से किया जा सकता है । पर्याप्त मात्रा में बिजली उपलब्ध होने से न केवल रहन-सहन की गुणवत्ता बढ़ती है बल्कि जन साधारण को कोल्हू के बैल की तरह काम करने से छुटकारा भी मिलता है । ऐसा माना जाता है कि सामान्य व अच्छे रहन-सहन के लिए व्यक्ति के लिए प्रतिवर्ष कम से कम 1000 किलो वाट पावर बिजली का उपयोग आवश्यक है । इसके लिए हमें अधिक मात्रा में बिजली का उत्पादन करना पड़ेगा । ऐसा अनुमान है कि सन् 2000 तक भारत की जनसंख्या 100 करोड़ तक पहुंच जाएगी जिसके लिए हमें वर्तमान में स्थापित 56000 मेगावाट की क्षमता को लगभग तीन गुना बढ़ाना पड़ेगा। परंतु पैसे व संसाधन सीमित होने के कारण ऐसा अनुमान है कि सन् 2000 में भारत में बिजली की संस्थापित क्षमता 1,00,000 - 1,20,000 मेगावाट तक ही पहुंच पाएगी। इस प्रकार परमाणु ऊर्जा का योगदान वर्तमान के 3% से बढ़कर सन् 2000 में लगभग 10% तक पहुँच जाएगा। ताप, जल या न्यूक्लियर क्षेत्र जैसे सभी साधनों से विद्युत उत्पादन करना आवश्यक है। ऊर्जा के इन वाणिज्यिक स्रोतों में कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है । हवा, सौर और जैवमांश जैसे अपरंपरागत स्रोतों का भी दोहन होना चाहिए। परंतु हर टेक्नोलॉजी को फलदायी होने के लिए 30 से 40 वर्ष तक की परिपक्वता अवधि चाहिए। न्यूक्लियर टेक्नोलॉजी अपनी परिपक्वता अवधि पूरी करके अभी एक सफल, सुरक्षित एवं वाणिज्यिक विद्युत प्रणाली के रुप में उपलब्ध है । मुझे पूर्ण आशा है कि आने-वाले दशकों में बिजली उत्पादन के लिए परमाणु ऊर्जा का प्रयोग बढ़ता ही जाएगा ।

धन्यवाद ! जयहिंद !

नाभिकीय ऊर्जा और परमाणु बिजलीघर

अनिल काकोडकर
निदेशक, रिएक्टर वर्ग
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र
ट्रांबे, बंबई - 400 085

प्रस्तावना

औद्योगिक युग में ऊर्जा की उपलब्धि का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है । ऐसा माना जाता है कि किसी देश की समृद्धि का मापदंड उस देश की ऊर्जा की प्रति व्यक्ति खपत से है। औद्योगिक उपयोग के अलावा, ऊर्जा की उपलब्धि से कई प्रकार की सामाजिक सेवाएं विकसित करने में भी सुविधा होती है। शुद्ध जल की आपूर्ति, अच्छे निवास की सुविधाएं सामाजिक स्वच्छता, स्वास्थ्य सेवाएं, रहने की बस्तियों के आस पास का प्रदूषण और उसका नियंत्रण इत्यादि सभी कार्यों में ऊर्जा का योगदान महत्वपूर्ण है। प्रति व्यक्ति ऊर्जा उत्पादन क्षमता और संभावित आयु का सीधा संबंध, कई अध्ययनों के बाद अब सर्वसम्मत हो चुका है (चित्र-1)।

भारत एक घनी आबादी वाला देश है । देश की समृद्धि तथा उसकी जनता के अच्छे स्वास्थ्य, दोनों ही दृष्टियों से हमें हमारी ऊर्जा की खपत बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। आज अमेरिका में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष लगभग 10,000 यूनिट विद्युत ऊर्जा की खपत हो रही है। सोवियत संघ में यह मात्रा 4500 यूनिट के आसपास है। इस तुलना में भारत में यह परिमाण केवल 178 युनिट है। अगर हम ऐसा मानें कि हमारी आबादी वर्ष 2000 तक 100 करोड़ के आसपास होगी और विद्युत ऊर्जा खपत का लक्ष्य हम 5000 युनिट के आसपास रखें तो हमें हमारी उत्पादन क्षमता 20 से 25 गुना बढ़ानी पड़ेगी। हमारे संसाधनों को देखते हुए यह एक असंभव सा लक्ष्य लगता है । ऊर्जा के बारे में हमारी असहाय सी परिस्थिति को दर्शाने के लिए मेरे ख्याल से यह एक ही मुद्दा पर्याप्त है ।

अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि हम अपनी पूरी क्षमता के साथ ऊर्जा के विकास की सभी संभावनाएं आगे विकसित करें ।

दूसरी बात ऊर्जा के मामले में आत्मनिर्भरता की आती है। आज देश में बिजली का करीब सारा उत्पादन देशी कोयले से और जलविद्युत परियोजनाओं से हो रहा है। यह ऊर्जा स्वावलंबन, आने वाले दशकों में बनाये रखना आवश्यक है। विदेशी मुद्रा और संतुलित विदेशी व्यापार की दृष्टि से ही नहीं बल्कि देश की आर्थिक स्थिति को अंतर्राष्ट्रीय तनाव से बचाये रखने की दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण है। चूंकि परमाणु ऊर्जा के मामले में, तकनीकी तथा संसाधनों का आदान प्रदान, अभी से हर प्रकार के विनियमों से बंधा है, आने वाले वर्षों में जब पूरे विश्व के स्तर पर ऊर्जा साधनों में तंगी महसूस होगी, यह नियंत्रण और भी बढ़ने की संभावना है । अगर हम थोड़ा रुककर विचार करें कि जैसे-जैसे पारंपरिक ऊर्जा के भंडार कम होते जायेंगे, हमें परमाणु ऊर्जा का योगदान बढ़ाना होगा । इस ऊर्जा का उत्पादन उचित पैमाने पर भविष्य में बनाये रखने के लिए हमें आत्मनिर्भर रहने की अत्यंत आवश्यकता है ।

यह आत्मनिर्भरता कैसे प्राप्त हो। हमारे नाभिकीय ईंधनों के भंडारों को ध्यान में रखते हुए एक कार्यक्रम तय किया गया है। हमारे यूरेनियम, जो प्रचलित परमाणुभट्टियों में नाभिकीय ईंधन के रूप में इस्तेमाल होता है, के भंडार काफी सीमित हैं । दूसरी तरफ हमारे पास थोरियम के विशाल भंडार मौजूद हैं । अतः हमें ऐसी तकनीक विकसित करनी है जो हमारे थोरियम के भंडारों का उपयोग करके भविष्य में ऊर्जा की आपूर्ति कर सके ।

अगर हम अन्य विकसित देशों की ऊर्जा स्थिति की ओर देखें तो यह प्रतीत होता है कि थोरियम पर चलने वाली परमाणु भट्टियों का विकास उनके लिए किसी भी प्रकार की प्राथमिकता नहीं रखता। अतः यह विकास हमें अपने ही वैज्ञानिक और तकनीकी बल पर करना है। और यह क्षमता हमारे देश में मौजूद है।

नाभिकीय ऊर्जा

विकास की इस प्रक्रिया को समझने से पहले नाभिकीय ऊर्जा के कुछ प्राथमिक पहलुओं को समझ लेना आवश्यक है।

जब एक न्यूट्रॉन, यूरेनियम-235 के नाभिक से टकराता है तो यूरेनियम-235 के नाभिक का विखंडन किया जा सकता है । इसी विखंडन से काफी ऊर्जा का निकास होता है । ऊर्जा के स्थायी उत्पादन के लिए इस विखंडन अभिक्रिया को बनाये रखना आवश्यक है । विखंडन अभिक्रिया में ऊर्जा के निकास के साथ-साथ कुछ (2 या 3) न्यूट्रॉन भी निकलते हैं । विखंडन अभिक्रिया को बनाये रखना इन्हीं न्यूट्रॉनों से संभव होता है ।

विखंडन अभिक्रिया की संभावना न्यूट्रॉनों की गति और परमाणु भट्टी में यूरेनियम-235 व अन्य पदार्थों के अनुपात पर निर्भर रहती है । इस अभिक्रिया से निकलने वाले न्यूट्रॉन काफी तेज होते हैं । इन तेज न्यूट्रॉनों का उपयोग दो तरह से किया जा सकता है । परमाणु भट्टी में यूरेनियम-235 का अनुपात इतना रखा जाये कि विखंडन अभिक्रिया जारी रखने की संभावना बढ़े या श्रंखलाबद्ध अभिक्रिया के लिए न्यूट्रॉनों की गति को कम किया जाये । पहला मार्ग द्रुत रिएक्टरों में अपनाया जाता है और दूसरा तापीय रिएक्टरों में (चित्र-2)।

प्राकृतिक यूरेनियम में यूरेनियम-235 की मात्रा केवल 0.7 प्रतिशत होती है । बाकी मात्रा यूरेनियम-238 की होती है । यूरेनियम-238 का विखंडन आसानी से संभव नहीं होता । अतः शुरु में विकसित परमाणु भट्टियां तापीय रिएक्टर अभिकल्पना पर आधारित थीं जिनमें प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग किया जा सके और अगर यूरेनियम को यूरेनियम-235 में समृद्ध करना ही पड़े तो भी उसका परिमाण अल्प मात्रा में हो ।

न्युट्रॉनों की गति कम करने के लिये जिन पदार्थों का उपयोग किया जाता है उन्हें विमंदक कहते है । इन पदार्थों के परमाणु छोटे और हल्के होते हैं । न्यूट्रॉन उदासीन होने के कारण इन पदार्थों में काफी आसानी से प्रवास कर सकते हैं । अपने प्रवास के दौरान ये कण विमंदक के नाभिकों से टकराते हैं और उनकी कम मात्रा के कारण अपनी गति में काफी घटाव महसूस करते हैं । विमंदक पदार्थों का एक और गुणधर्म यहां जानना ज़रुरी है । न्युट्रॉनों के इन पदार्थों में प्रवास के दौरान, उनमें प्रग्रहण हो जाने की संभावना जितनी कम हो, उतनी ही विखंडन अभिक्रिया जारी रखने में मदद मिलती है । न्यूट्रॉन अपने प्रवास के दौरान परमाणु भट्टी से बाहर भी निकल सकते हैं । ऐसे बाहर निकलने वाले न्यूट्रॉनों की संख्या अगर बहुत अधिक होतो श्रंखलाबद्ध अभिक्रिया संभव नहीं है । अतः परमाणु भट्टी एक विशिष्ट परिमाण की बनानी पड़ती है, जिसमें न्यूट्रॉनों का रिसाव जितना आवश्यक हो उतना ही हो ।

परमाणु भट्टी में कुछ न्यूट्रॉनों का प्रग्रहण भट्टी में मौजूद अन्य पदार्थों में भी हो सकता है । यूरेनियम-238 में भी यह प्रग्रहण काफी पैमाने पर होता है । और इसी अभिक्रिया में प्लूटोनियम-239 का निर्माण होता है जो आसानी से विखंडित होता है । इस तरह परमाणु भट्टी में न केवल ऊर्जा का उत्पादन होता है बल्कि और ईंधन भी तैयार होता है । जिस प्रकार यूरेनियम-238 से प्लूटोनियम-239 का निर्माण होता है उसी प्रकार थोरियम-232 से यूरेनियम-233 का निर्माण होता (चित्र-3) है यूरेनियम-233 भी आसानी से विखंडित हो सकता है । हमारी भावी ऊर्जा समस्या में परमाणु ऊर्जा का उचित योगदान इसी प्रकार के तकनीकी विकास पर निर्भर है ।

यद्यपि प्यूटोनियम-239 या यूरेनियम-233 का उत्पादन रिएक्टर और द्रुत रिएक्टर दोनों में किया जा सकता है, द्रुत रिएक्टर में प्लूटोनियम-239 का उत्पादन ईंधन की खपत की तुलना में काफी ज्यादा होता है । अतः नाभिकीय ईंधन की मात्रा बढ़ाने की दृष्टि से हमारे लिये द्रुत रिएक्टर काफी महत्व रखते हैं ।

इतनी प्राथमिक बातें समझ लेने के बाद हम एक बार फिर अपने परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम पर पहुंचते हैं । सर्वप्रथम हमें हमारे सीमित यूरेनियम के भंडारों को ध्यान में रखते हुए उसका उपयोग करते समय अधिक से अधिक प्लूटोनियम-239 के उत्पादन का लक्ष्य हमारे सामने रखना होगा । दूसरे, इस प्लूटोनियम-239 की मात्रा को द्रुत रिएक्टर के द्वारा जितना बढ़ाया जा सके उतना बढ़ाना आवश्यक है । तीसरे, प्लूटोनियम-239 के इस प्रकार निर्मित भंडार से प्रचालित परमाणु भट्टी में थोरियम का यूरेनियम-233 में परिवर्तन किया जा सकता है। चौथे, थोरियम के यूरेनियम-233 में परिवर्तन के लिए अन्य प्रणालियाँ भी विकसित की जा सकती हैं ।

यूरेनियम-233 का पर्याप्त मात्रा में निर्माण, हमारे विशाल थोरियम के भंडारों का उपयोग एवं हमारी भविष्य ऊर्जा समस्या के समाधान में सहायक होगा ।

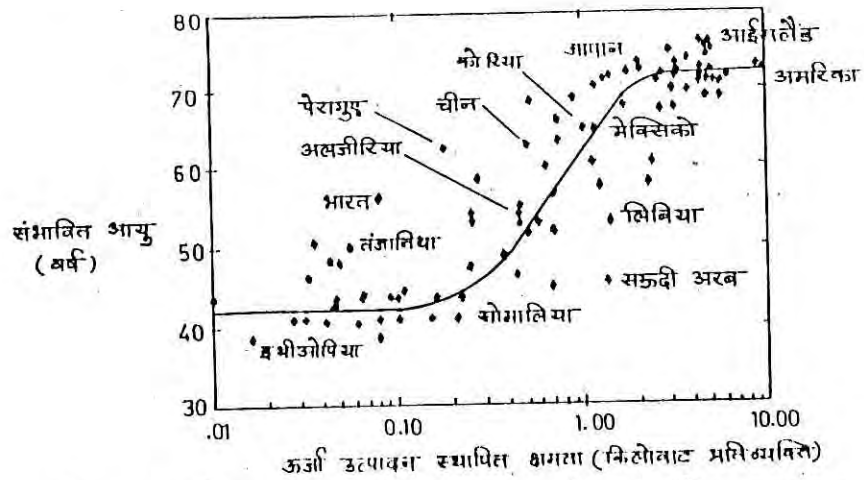

चित्र 1-ऊर्जा उत्पादन स्थापित क्षमता और संभावित आयु का संबंध

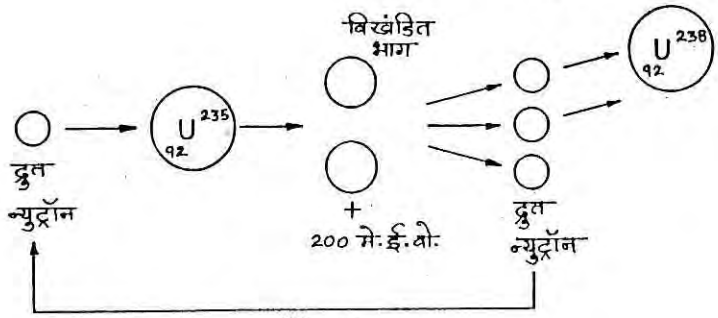

2अ- द्रुत रिएक्टर

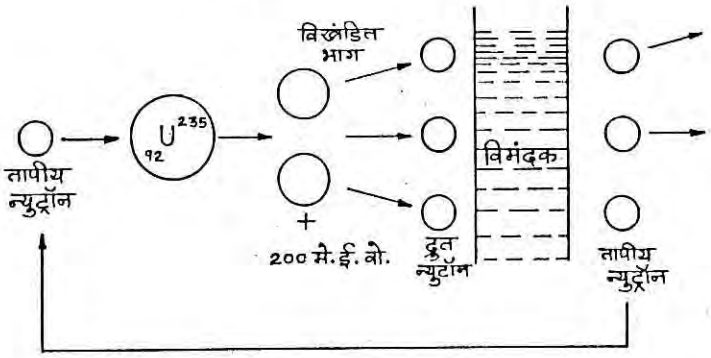

2ब- तापीय रिएक्टर

चित्र 2- विखंडन अभिक्रिया

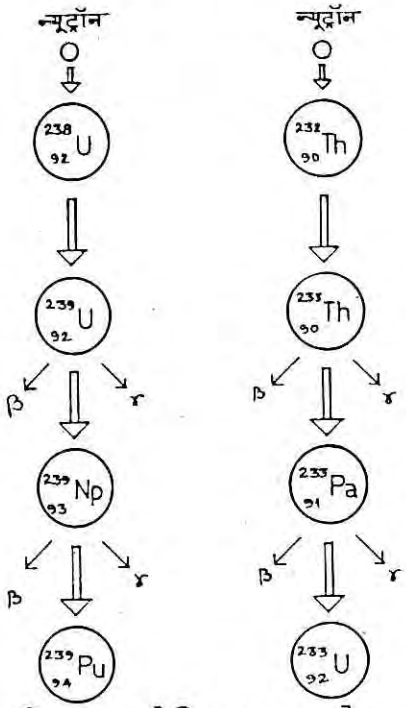

चित्र 3- प्लूटोनियम -239 और यूरेनियम -233 का निर्माण

स्वदेशी संसाधनों पर आधारित पहले चरण में 10000 MWe विद्युत उत्पादन क्षमता खड़ी करने का लक्ष्य है । दूसरे चरण में द्रुत रिएक्टर के माध्यम से इस क्षमता को केवल यूरेनियम से 300,000 MWe तक बढ़ाना संभव है । थोरियम का उपयोग पूर्ण विकसित हो जाने के बाद और अधिक उत्पादन क्षमता निर्माण की जा सकती है जो दूर भविष्य में काम आ सकेगी । भारत में उपलब्ध ऊर्जा के विभिन्न स्रोतों की क्षमता चित्र- 4 में दिखाई गई है ।

परमाणु बिजली घर

नाभिकीय ऊर्जा के कार्यक्रम को साध्य करने के लिये हमें विभिन्न प्रकार की परमाणु भट्टियों का निर्माण करने की क्षमता प्राप्त करनी होगी । अतः हम पहले परमाणु भट्टी की रचना के बारे में जानकारी हासिल करलें, तो अच्छा रहेगा ।

जैसा कि हम देख चुके हैं, ईंधन व विमंदक, ये दोंनों तापीय रिएक्टर के मुख्य अंग है । नाभिकीय ऊर्जा को बाहर निकालने के लिये तथा परमाणु भट्टी के अंदर का तापमान नियंत्रण में रखने के लिये रिएक्टर में शीतलक का बहते रहना भी रिएक्टर अभिकल्पन का एक महत्वपूर्ण अंग है । रिएक्टर के निर्माण में जो संरचनात्मक पदार्थ लगते हैं, वह भी विशेष होते हैं । अच्छी कार्यक्षमता हासिल करने के लिए यह जरूरी है कि इन पदार्थों में कम से कम न्यूट्रॉनों का अवशोषण हो और न्यूट्रॉनों के बार बार टकराने से इन पदार्थों में क्षति भी कम से कम हो । जर्कोनियम एक ऐसा धातु है जिस पर आधारित मिश्रधातु ऐसे गुणधर्मों से युक्त है । इसलिये इस प्रकार की मिश्र-धातुओं का रिएक्टर की संरचना में काफी प्रयोग किया जाता है ।

किसी भी परमाणु भट्टी में शीतलक बहने की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि ईंधन से पर्याप्त मात्रा में तापीय ऊर्जा को निकाला जा सके । इसी तापीय ऊर्जा से भाप का निर्माण कर टरबाइन को चलाया जाता है । टरबाइन के साथ जनरेटर घूमता है जो बिजली पैदा करता है (चित्र-5)।

तापीय रिएक्टरों के कई प्रकार प्रचलित है । इन सभी का विवरण यहां संभव नहीं है किंतु जो डिजाइन हमारे लिये महत्वपूर्ण है उसे जान लेना उचित होगा ।

प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग करने वाले रिएक्टरों में प्रायः भारी पानी का प्रयोग आवश्यक होता है । दूसरी तरफ अगर साधारण पानी का प्रयोग करना हो तो यूरेनियम को समृद्ध करना आवश्यक है । यह दूसरे प्रकार के रिएक्टर संख्या में सबसे अधिक हैं, लेकिन इनके लिए समृद्ध यूरेनियम की आवश्यकता तो होती ही है साथ ही न्यूट्रॉनों के उपयोग की दृष्टि से भी यह रिएक्टर पूरे नहीं उतरते हैं । अतः इनमें प्लूटोनियम-239 का निर्माण कम मात्रा में होता है । इसी कारण हमने इन्हें अपने स्वदेशी कार्यक्रम के लिये नहीं अपनाया है । चित्र- 6 क में इस प्रकार के रिएक्टर की रचना को दर्शाया गया है । इस प्रकार के रिएक्टरों पर आधारित सर्वाधिक प्रचलित परमाणु बिजलीघरों में दो प्रकार के परिपथ होते हैं, प्राथमिक और भाप पानी परिपथ । प्राथमिक परिपथ में शीतलक परमाणु भट्टी में नीचे से ऊपर की ओर प्रवाहित होता है जो ऊपर स्थित ईंधन छड़ों, जो कई छोटी छोटी नलिकाओं की बनी होती हैं व जिनमें ईंधन छोटे छोटे टुकड़ों में रखा होता है, से ऊष्मा लेकर भाप जनित्र में जाता है । यहां यह शीतलक अपनी ऊष्मा से पानी को भाप में बदलता है और पुनः परमाणु भट्टी में पम्प की सहायता से प्रवाहित किया जाता है । इस परिपथ का मुख्य घटक दाबक होता है जो शीतलक को निर्धारित दाब पर रखता है ताकि शीतलक भाप में परिवर्तित न हो । रिएक्टर का नियंत्रण ऊर्ध्व स्थित नियंत्रक छड़ों द्वारा किया जाता है । दूसरे भाप-पानी परिपथ में भाप जनित्र द्वारा उत्पादित भाप से टरबाइन और जनरेटर द्वारा बिजली उत्पन्न की जाती है । टरबाइन से प्राप्त भाप को द्रवणित्र में शीतलक पानी द्वारा ठंडा कर के पानी में बदला जाता है । भाप-पानी परिपथ सभी प्रकार के परमाणु बिजलीघरों में समान होता है ।

भारी पानी वाले रिएक्टरों में (चित्र-6 ख) प्लूटोनियम - 239 का निर्माण सर्वाधिक होता है । जैसा कि हम पहले देख चुके हैं हमारे कार्यक्रम की सफलता के लिये अधिकाधिक प्लूटोनियम - 239 की आवश्यकता है । यही कारण है कि इस रिएक्टर प्रणाली को हमने अपने कार्यक्रम के प्रथम चरण के लिये अपनाया है । इन रिएक्टरों में विमंदक काफी कम दाब और तापमान पर नियंत्रित किया जाता है । अतः ऐसा भारी घटक, जो कि उच्च दाब सह सके, की आवश्यकता नहीं रहती । शीतलक को, जो भारी पानी ही होता है, उच्च दाब पर जर्कोनियम के मिश्रधातु की शीतलक नलिकाओं में से रिएक्टर

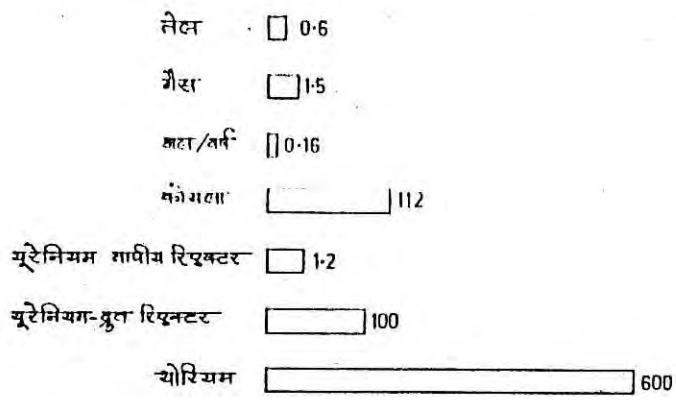

चित्र 4-भारतमें ऊर्जा स्त्रोतों की क्षमता
(सौ करोड़ टन कोयले के बराबर)

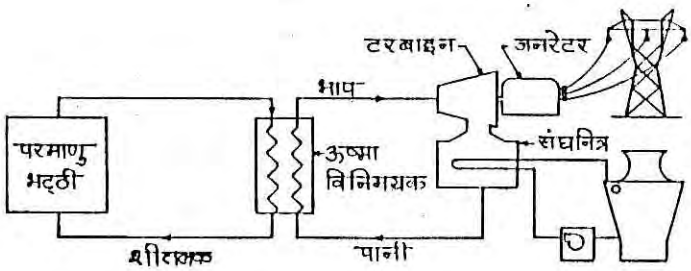

चित्र 5 - परमाणु बिजली घर

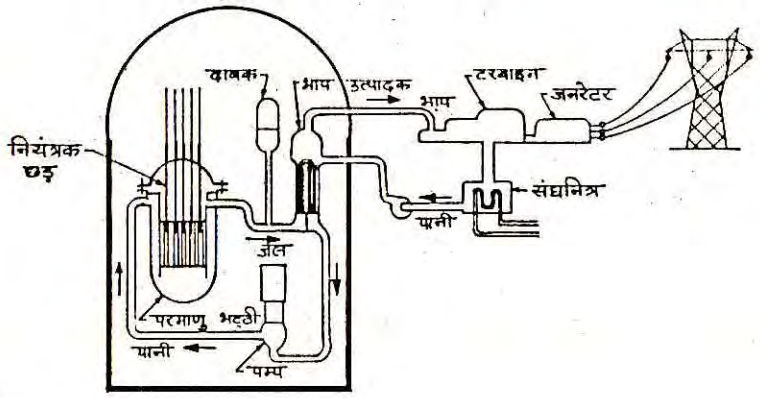

चित्र 6क-तापीय रिएक्टर (समृद्ध यूरेनियम-पानी) परमाणु बिजली घर

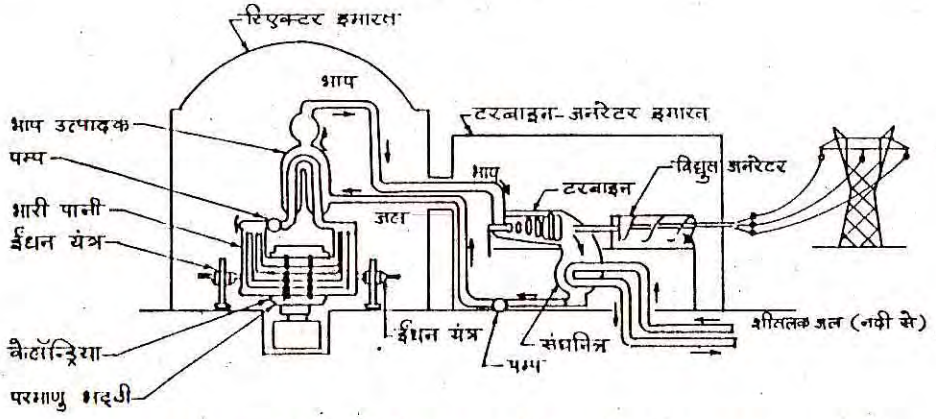

चित्र 6ख- प्राकृतिक यूरेनियम-भारी पानी रिएक्टर-परमाणु बिजली घर

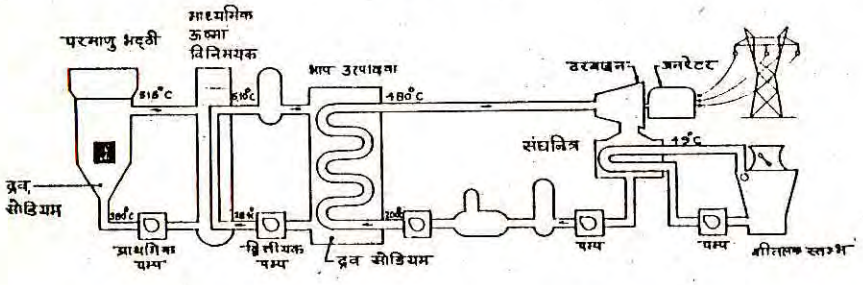

चित्र 6ग - द्रुत रिएक्टर परमाणु बिजली घर

के अन्दर से प्रवाहित किया जाता है । ईंधन को भी इन्हीं नलिकाओं में रखा जाता है ताकि इसमें उत्पन्न ऊष्मा को शीतलक रिएक्टर से बाहर निकाल सके । ये शीतलक नलिकाएं एक बेलनाकार पात्र, जिसे केलन्ड्रिया कहा जाता है, में भूसमांतर जुड़ी हुई केलन्ड्रिया नलिकाओं में से निकलती हैं । विमंदक केलंड्रिया में केलॅन्ड्रिया नलिकाओं के चारों ओर भरा होता है । शीतलक नलिकाओं से, शीतलक भाप जनित्र में पम्प द्वारा प्रवाहित किया जाता है जो भाप - पानी परिपथ के पानी को भाप में बदल देता है । रिएक्टर में ईंधन डालने और निकालने के लिए शीतलक नलिकाओं के दोनों ओर यंत्र लगाये जाते हैं । इस प्रकार के रिएक्टरों का नियंत्रण, नियंत्रक छड़ों द्वारा केलॅन्ड्रिया में विमंदक के स्तर द्वारा और विमंदक में विखंडन अभिक्रिया-विष के विलयन से किया जाता है ।

द्रुत रिएक्टर रचना में तापीय रिएक्टर जैसा ही होता है (चित्र- 6 ग)। इसमें विमंदक की आवश्यकता नहीं होती । जैसा कि हम पहले देख चुके हैं, इन रिएक्टरों में शीतलक के रूप में द्रव सोडियम का उपयोग किया जाता है । सोडियम के परमाणु भारी होने से न्युट्रॉन की गति काफी समय तक तेज रख सकते हैं । सोडियम काफी तापमान तक बिना अधिक दाब के उपयोग में लाया जा सकता है । अतः द्रुत रिएक्टरों में दाब बहुत कम होता है । द्रुत रिएक्टरों में मुख्यतः तीन प्रकार के परिपथ होते हैं - प्राथमिक, माध्यमिक और भाप-पानी परिपथ । प्राथमिक शीतलक जो द्रव सोडियम होता है, परमाणु भट्टी में नीचे से ऊपर की ओर प्रवाहित किया जाता है जो ईंधन छड़ों से ऊष्मा लेकर माध्यमिक परिपथ के ऊष्मा विनिमायक में दूसरे शीतलक, जो भी द्रव सोडियम होता है, को दे देता है और उसे पुनः पम्प द्वारा रिएक्टर में प्रवाहित किया जाता है । माध्यमिक परिपथ का शीतलक भाप जनित्र से प्रवाहित होकर अपनी ऊष्मा भाप-पानी परिपथ के पानी को देकर उसका भाप में परिवर्तन कर देता है । इस प्रकार के रिएक्टरों का नियंत्रण और शमन नियंत्रक एवं शमन छड़ों द्वारा किया जाता है । इन छड़ों में बोरॉन का यौगिक होता है जो न्यूट्रॉनों का अवशोषण कर विखंडन अभिक्रिया को रोक देता है । ऐसा एक छोटा रिएक्टर, परीक्षण के तौर पर कलपाक्कम में विकसित किया गया है । इसे हम अपने परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के दूसरे चरण का आरंभ कह सकते हैं । 500 मेगावाट बिजली निर्माण की क्षमता वाले द्रुत रिएक्टर के अभिकल्पन पर भी इस समय कार्य जारी है ।

थोरियम पर आधारित रिएक्टरों के बारे में भी अब तक काफी कार्य किया जा चुका है । आशा है शीघ्र ही इस काम में भी हम ठोस सफलता दर्शा सकेंगे ।

परमाणु ऊर्जा में सुरक्षा

भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के अन्य देशों में भी कुछ लोग परमाणु ऊर्जा का विरोध करते हैं। यदि हम विभिन्न तकनीकों की उत्पत्ति और विकास की कथा देखें तो दुर्भाग्यवश हम यह पायेंगे की लगभग सभी तकनीकी उपलब्धियों के साथ शुरू में सैनिक उपयोगितायें लगी रही हैं। इससे जनसाधारण के मन में आशंका पैदा होती रही है जो धीरे-धीरे उन उपलब्धियों की सार्थकता सिद्ध होने के बाद कम होती गई । इसके कई उदाहरण हैं - इस्पात का उपयोग विध्वंसकारी तोपों के साथ जुड़ा हुआ है, संगणक शुरू में रोजगार नष्ट करने वाला समझा गया और परमाणु का प्रथम उपयोग बम बनाने में हुआ। आज किसी को इस्पात, संगणकों इत्यादि के गुण समझाने की जरूरत नहीं है । निष्कर्ष स्पष्ट है कि समय के साथ डर धीरे धीरे कम हो गया और नई तकनीकें स्वीकृत हो गईं।

इस संदर्भ में देखें तो परमाणु ऊर्जा तुलनात्मक दृष्टि से नई तकनीक है और पूर्ण जानकारी के अभाव में स्वीकारने के विरोध से गुज़र रही है। परमाणु भट्टियों की सुरक्षा का संदेह जनता को रेडियाएक्टिवता के फैलने के डर के कारण उत्पन्न हुआ है। इसलिए परमाणु विशेषज्ञ आरंभ से ही बहुत सावधानी अपना रहे हैं। सुरक्षा से संबंधित पहलुओं, जैसे कि भट्टी के स्थान का चुनाव, पर्याप्त अभिकल्पन, सुरक्षा संबंधित अवयवों का निर्माण, सुविधाओं के चलाने की प्रणाली, भट्टी को किसी भी छोटी कमी के पाये जाने पर उसके शीघ्र बन्द करने के साधन आदि का भरपूर समावेश किया जाता है।

अत्यधिक रेडियोएक्टिवता के रिसाव से कर्मचारियों और जनता को बचाने के लिये विभिन्न पद्धतियों में से कुछ इस प्रकार हैं :

(1) रिएक्टर अभिकल्पना में अंतर्निहित सुरक्षा उपायों का समावेश

(2) कार्यरत कर्मचारियों के लिये उपयुक्त विकिरण सुरक्षा और अन्तर्राष्ट्रीय रेडियोएक्टिव विकिरण स्वीकार्य सीमाओं का कड़ाई से पालन

(3) रेडियोएक्टिव तरल और गैस अपशिष्टों के निकाय और वायुमंडल में उसके रिसाव का सावधानीपूर्वक निरीक्षण और नियंत्रण

इसके अलावा अभिकल्पन, निर्माण और प्रचालन के प्रत्येक स्तर पर बाहरी विशेषज्ञों द्वारा पुनरावलोकन किया जाता हैं और उनके दिये हुए सुझावों को अपनाया जाता है ।

पर्यावरण संबंधित प्रश्न

आजकल भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में पर्यावरण और प्रदूषण पर जागरूकता बढ़ रही है। यह एक स्वागत योग्य घटना है । परमाणु विशेषज्ञों की यह धारणा है कि यदि परमाणु बिजलीघरों द्वारा स्थापित कड़े नियमों की तरह अन्य उद्यमों ने भी उच्च मानक प्रयोग में लाये होते तो पृथ्वी का वायुमंडल आज मानवजाति के लिये अधिक स्वच्छ और उपयोगी होता। आपको यह जानकर शायद हैरानी होगी कि परमाणु ऊर्जा पर्यावरण को बिगाड़ने के विपरीत उसको संवारने में अपना बहुत बड़ा योगदान दे सकती है । परन्तु यह कथन तभी सही सिद्ध होगा जब हम अन्य सभी ऊर्जा उत्पादन प्रणालियों के मूलभूत रूपों का पुनरावलोकन करें । यदि एक क्षण के लिये हम यह मान भी लें कि सभी ऊर्जा उत्पादन प्रणालियां बंद कर दी जायें तो भी यह मान्यता मिथ्या होगी कि हम पर्यावरण को बचा पायेंगे। पीढ़ियों से जलाने लायक लकड़ी प्राप्त करने के लिए वृक्ष काटे गये हैं। मकान बनाने में भी लकड़ी का बहुत उपयोग होता है । हम यह भी जानते है कि वृक्षों का होना हमारे पर्यावरण के लिये कितना आवश्यक है । इसलिये ऊर्जा के दूसरे स्रोतों की उपलब्धि इस प्रवृति को रोकने में बहुत सहायक होगी ।

कोयला, लकड़ी इत्यादि ईंधन के दीर्घकालीन उपयोग से अम्ल वर्षा और "ग्रीन हाऊस इफेक्ट" जैसे भयंकर परिणाम होना अब असंभव बात नहीं रह गयी है । अतः इस संदर्भ में परमाणु ऊर्जा का पर्यावरण संरक्षण में बहुत बड़ा योगदान हो सकता है ।

अंत में, मैं आपको यह बतलाना चाहूंगा कि हाल ही में नरोरा परमाणु बिजलीघर की पहली इकाई के शुरू होने से एक बार फिर यह सिद्ध हो गया है कि अब हम रिएक्टर के अभिकल्पन, इंजीनियरी, उसकी संरचना और संचालन में आत्मनिर्भर हो गये हैं तथा आने वाले वर्षों में हम और मजबूती से अपने परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम को आगे ले जा सकेंगे । नाभिकीय ऊर्जा ही ऐसा एकमात्र रास्ता दिखता है जो हमें जनसाधारण के जीवन को सुधारने के लिये पर्याप्त मात्रा में और आने वाले अनेक दशकों तक ऊर्जा की जरूरतों को पूरा कर सकेगा ।

नाभिकीय बिजलीघरों की अभिकल्पन विशेषताएं

एस. एस. बजाज
न्यूक्लियर पावर कार्पोरेशन लि., बंबई

प्रस्तावना

देश में बिजली की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए जल विद्युत, तापीय विद्युत तथा नाभिकीय विद्युत आदि सभी स्रोतों का दोहन आवश्यक है । भारत के नाभिकीय कार्यक्रम में आगामी 15 वर्षों में दाबित भारी पानी पर आधारित अनेक नये नाभिकीय बिजलीघरों की स्थापना की योजना है । इन बिजलीघरों की स्थापना से देश में 10,000 मेगावाट नाभिकीय बिजली का उत्पादन होने लगेगा। ये बिजलीघर स्वदेशी तकनीक से स्थापित किये जायेंगे तथा उस समय देश के कुल बिजली उत्पादन में 10 प्रतिशत का योगदान देंगे ।

कोटा व कलपाक्कम में इस प्रकार के दो संयंत्र पहले ही काम कर रहे हैं । नरोरा संयंत्र, जिसकी पहली इकाई ने हाल ही में कार्य करना प्रारंभ किया है, में भी इसी प्रकार के रिएक्टर लगाए गये हैं ।

हमारे देश में 235 मेगावाट व 500 मेगावाट क्षमता के दाबित भारी पानी रिएक्टरों का अभिकल्पन किया गया है । नरोरा संयंत्र के दो रिएक्टर देश में विकसित 235 मेगावाट मानकीकृत डिज़ाइन का उपयोग करने वाले पहले रिएक्टर हैं। इस श्रेणी के दस अन्य रिएक्टरों का डिजाइन कार्य जारी है और इस प्रकार के 12 रिएक्टर स्थापित करने की योजना है। दोनों क्षमताओं के रिएक्टरों का मूल डिज़ाइन एक ही प्रकार का है।

इस वार्ता में नाभिकीय रिएक्टर के काम करने के सिद्धांत और दाबित भारी पानी रिएक्टरों की डिज़ाइन विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। इस प्रकार के रिएक्टरों के मूलभूत सुरक्षा सिद्धांत के बारे में भी चर्चा की जायेगी ।

नाभिकीय रिएक्टर की कार्यप्रणाली

कोयले पर आधारित तापीय बिजलीघर की भांति नाभिकीय संयंत्र में भी भाप पैदा की जाती है जिससे टर्बो-जेनरेटर चला कर बिजली का उत्पादन होता है। भाप बनाने के लिए ऊष्मा उत्पन्न करने की विधि ही इनका मुख्य अंतर है। नाभिकीय रिएक्टर में यूरेनियम या प्लूटोनियम ईंधन प्रयुक्त होता है । इन तत्वों के कुछ आइसोटोप न्यूट्रानों द्वारा विखंडित हो कर ऊर्जा विमुक्त करते हैं। इन आइसोटोपों को "विखंडनीय पदार्थ" कहा जाता है। प्रत्येक परमाणु के विखंडन में दो या तीन न्यूट्रान भी पैदा होते हैं। जब ये न्यूट्रान दूसरे विखंडनीय परमाणु से टकराते हैं तो उस परमाणु का विखंडन करते हैं जिससे और ऊर्जा व न्यूट्रान मिलते हैं। इस प्रकार "श्रृंखला अभिक्रिया" स्थापित होती है।

प्राकृतिक रूप से उपलब्ध विखंडनीय पदार्थ केवल U-235 है । इस प्रक्रिया में एक समस्या यह है कि प्राकृतिक यूरेनियम में U-235 की मात्रा केवल 1/139 होती है । इसका शेष भाग U-238 होता है। U-238 की उपस्थिति अवांछित है क्योंकि यह बिना ऊर्जा या न्यूट्रान उत्पन्न किये न्यूट्रानों का अवशोषण करता है। इसलिए बिना विशेष उपायों के प्राकृतिक यूरेनियम में "श्रृंखला अभिक्रिया" स्थापित करना कठिन है। इस समस्या के दो हल संभव हैं :

(i) ईंधन में विखंडनीय पदार्थ की मात्रा बढ़ाना, अर्थात प्राकृतिक यूरेनियम का U-235 में समृद्धिकरण। इन रिएक्टरों में समृद्ध ईंधन प्रयुक्त होता है ।

(ii) प्राकृतिक या अल्पसमृद्ध यूरेनियम का प्रयोग। दूसरी विधि में न्यट्रानों के संरक्षण के विशेष उपाय करने आवश्यक हैं ताकि उत्पन्न न्यूट्रानों का एक बड़ा हिस्सा U-238 में अवशोषित होने के बावजूद "श्रृंखला अभिक्रिया" के लिए आवश्यक न्यूट्रान उपलब्ध रहें । इस विधि में न्यूट्रानों को, दूसरे यूरेनियम परमाणु से टकराने से पहले विमंदित किया जाता है क्योंकि द्रुत न्यूट्रानों की अपेक्षा, विमंदित न्यूट्रानों द्वारा विखंडन की संभावना बहुत अधिक है। इसके लिए ईंधन को बंडल या समूह के रूप में बनाया जाता है जो विमंदक पदार्थ से घिरे रहते हैं। विमंदक न्यूट्रानों को अवशोषित किए बिना उनकी ऊर्जा कम करता है। साधारण पानी अच्छा विमंदक है और उसका उपयोग अल्पसमृद्ध यूरेनियम ईंधन वाले रिएक्टरों में किया जाता है। परंतु प्राकृतिक

यूरेनियम ईंधन के लिए साधारण पानी काफी नहीं होता और ऐसे रिएक्टरों में भारी पानी का उपयोग विमंदक के रूप में होता है । साधारण पानी में 1/7000 भाग भारी पानी होता है और विशेष संयंत्रों में ड्यूटीरियम के समृद्धिकरण से भारी पानी बनाया जाता है ।

विखंडन से प्राप्त ऊष्मा को शीतलक की सहायता से वाष्पित्रों में पहुँचाया जाता है। शीतलक के रूप में साधारण पानी, भारी पानी या गैस का उपयोग हो सकता है। शीतलक व विमंदक का परिपथ (Circuit) एक या अलग हो सकता है।

ईंधन, विमंदक व शीतलक के उपयोग के अनुसार, आज कई प्रकार के व्यावसायिक रिएक्टर बनाए जा चुके हैं । विश्व में एक बड़ी संख्या साधारण पानी रिएक्टरों (LWR) की है जिन का ईंधन अल्पसमृद्ध (3-4%) यूरेनियम है । इन में एक ही परिपथ में विमंदक व शीतलक के रूप में साधारण पानी का प्रयोग होता है । दूसरे प्रकार के मुख्य रिएक्टर दाबित भारी पानी रिएक्टर (PHWR) है और भारत के नाभिकीय कार्यक्रम में मुख्यतः इन्हीं का उपयोग हो रहा है । इन रिएक्टरों का ईंधन प्राकृतिक यूरेनियम है । साधारण ताप और दाब पर भारी पानी इनमें विमंदक का कार्य करता है । शीतलक के रूप में भारी पानी का उपयोग एक अलग परिपथ में किया जाता है परंतु शीतलक उच्च ताप और दाब पर कार्य करता है। इन रिएक्टरों में बिना बंद किये ईंधन का भरण किया जा सकता है। इस लेख के अगले भाग में PHWR की अभिकल्पन विशेषताओं की चर्चा की गई है ।

रिएक्टर एवं ईंधन

यूरेनियम डाइआक्साड "पेलेटों" को एक ज़र्केलाय ट्यूब में बंद करके ईंधन बंडल बनाया जाता है। 235 MW रिएक्टर के बंडल में 19 ऐसी ट्यूबें होती हैं। इसकी लम्बाई लगभग 50 सेंमी., व्यास 8.2 सेंमी. और भार लगभग 15 किग्रा. होता है। यहां बताना उचित होगा कि ऐसा एक बंडल, रिएक्टर में अपने लगभग $1^1/_2$ साल के जीवन काल में 24 लाख ऊष्मा इकाई का उत्पादन करता है जो लगभग 300 टन कोयला जलाने के बराबर है ।

इस ईंधन में विखंडन श्रृंखला अभिक्रिया व ऊष्मा का उत्पादन कुछ विशेष परिस्थितियों में ही संभव है :

1. यूरेनियम की एक न्यूनतम मात्रा की उपस्थिति (40-50 टन) ।
2. यूरेनियम के चारों ओर भारी पानी विमंदक होना चाहिए जिसकी शुद्धता कम से कम 99.8 प्रतिशत हो ।
3. ईंधन बंडलों को भारी पानी के अंदर सुनिश्चित विन्यास में स्थापित होना चाहिए और ईंधन चैलनों में एक उपयुक्त दूरी रहनी चाहिए ।

रिएक्टर एक क्षैतिज बेलनाकार पात्र (कैलेंड्रिया) होता है जिसमें भारी पानी भरा होता है। इस पात्र में सैकड़ों ईंधन चैनल (235 MW के लिए 306 चैनल) होती हैं । इसमें ज़र्केलाय की दाबनलिका होती है जो दोनों सिरों पर इस्पात मिश्रधातु की बनी एसेंब्लियों के साथ जुड़ी रहती है। हर ईंधन चैनल में 12 ईंधन बंडल होते हैं। प्रत्येक ईंधन चैनल में उच्च दाब पर गर्म भारी पानी को प्रवाहित किया जाता है जो शीतलक का कार्य करता है । प्रत्येक ईंधन चैनल के चारों ओर एक ज़र्केलाय कैलेंड्रिया ट्यूब होती है जो चैनल को कैलेंड्रिया पात्र में रखे ठंडे भारी पानी विमंदक से अलग रखती है। ईंधन चैनल के दोनों सिरों को शील्ड प्लग व सील प्लग द्वारा बंद किया जाता है । विशेष प्रकार की ईंधन भरण मशीनों द्वारा इन प्लगों को हटाया या लगाया जा सकता है ।

कैलेंड्रिया के दोनों सिरों पर उससे जुड़ी हुई "एंड शील्ड एसेंबली" होती है जो रिएक्टर से निकलने वाले विकिरण को रोकती है। ईंधन चैनल की "एंड फिटिंग", "एंड शील्ड" पर टिकी होती है ।

कैलेंड्रिया को इस्पात के अस्तर वाले कंक्रीट के कक्ष में रखा जाता है। कक्ष को ठंडा रखने के लिए तथा विकिरण रोकने के लिए कक्ष में साधारण पानी भरा होता है। "एंड शील्ड" इस कक्ष की दीवारों पर स्थापित होता है।

ईंधन व्यवस्था

इस प्रकार के रिएक्टर में जले हुए ईंधन बंडल निकाल कर कुछ नए बंडल डालने का काम बार बार किया जाता है, परन्तु इस प्रक्रिया में रिएक्टर को बंद करने की आवश्यकता

नहीं पड़ती । इस कार्य के लिए विशेष प्रकार की ईंधन हस्तन मशीनें प्रयोग की जाती हैं ।

रिएक्टर शीतलन तंत्र

ईंधन चैनलों में उत्पन्न ऊष्मा को दाबित भारी पानी (प्राथमिक शीतलक) प्रवाहित कर, भापजनित्र में भाप बनाने के लिए पहुंचाया जाता है । इस प्रणाली के मुख्य घटक हैं - ईंधन चैनल, 'फीडर', 2 रिएक्टर प्रवेशिका 'हेडर', 2 रिएक्टर निर्गम 'हेडर', 4 पंप, 4 भाप जनित्र, नलिकाएं तथा वाल्व । 'हेडर' अलग अलग 'फीडर' नलियों द्वारा जुड़े रहते हैं ।

रेडियोएक्टिवता रोधक

यूरेनियम परमाणु के विखंडन से जो उत्पाद बनते हैं, वे काफी रेडियाएक्टिव होते हैं । रिएक्टर सुरक्षा का मुख्य उद्देश्य यह है कि ये उत्पाद हर हालत में रिएक्टर के अंदर ही रहें । इसके लिए रिएक्टर की डिज़ाइन में कई प्रकार के रोधक शामिल किये जाते हैं ।

सर्वप्रथम, विखंडन उत्पाद UO_2 ईंधन में उत्पन्न होते हैं और लगभग सारे उत्पाद ईंधन मैट्रिक्स में बने रहते हैं । ईंधन के ऊपर ज़र्कोनियम मिश्रधातु का आवरण होता है । ईंधन बंडलों को बंद ऊष्मांतरण तंत्र में रखा जाता है जो उच्च कोटि के इस्पात या मज़बूत संरोधक बिल्डिंग में रखा जाता है । भारत में प्रयुक्त डिज़ाइन में संरोधक बिल्डिंग का एक विशेष पहलू है, दोहरा संरोधन । इसके बारे में बाद में चर्चा की जायेगी । इस के अतिरिक्त सुरक्षा के दृष्टिकोण से संयंत्र के चारों ओर 1.6 किमी. त्रिज्या का क्षेत्र बिल्कुल खाली रखा जाता है । इस क्षेत्र में किसी को रहने की आज्ञा नहीं दी जाती ।

इस प्रकार रिएक्टर से रेडियोएक्टिवता को बाहर आने के लिए चार रोधकों को पार करना पड़ेगा - ईंधन, आवरण, ऊष्मांतरण तंत्र तथा संरोधन बिल्डिंग । किसी भी परिस्थिति में रेडियोएक्टिवता रिएक्टर से बाहर न फैलने पाये, इसलिए इन रोधकों के डिज़ाइन, घटकों, बिल्डिंग व अन्य संरचनाओं के निर्माण में गुणवत्ता आश्वासन और पूरी निगरानी अत्यंत उच्च कोटि की रखी जाती है ।

ईंधन व ईंधन आवरण की अखंडता

यह पहले ही कहा जा चुका है कि रिएक्टर सुरक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है रेडियोएक्टिव विखंडन उत्पादों को ईंधन के अंदर ही सीमित रखना । इसके लिए ईंधन व ईंधन आवरण की अखंडता बनाए रखना आवश्यक है । इसका दूसरा अर्थ है ईंधन को एक निश्चित सीमा के ऊपर गर्म न होने देना । इस दृष्टिकोण से दो बातें आवश्यक हो जाती हैं :

1. रिएक्टर की अभिक्रियता (reactivity), क्रोड़ में न्यूट्रान संतुलन पर नियंत्रण, जिससे ऊर्जा में अनियंत्रित वृद्धि न होने पाये ।
2. रिएक्टर की चालू अथवा बंद दोनों अवस्थाओं में ईंधन का उपयुक्त शीतलन । रिएक्टर बंद होने पर भी विखंडन उत्पादों के क्षय से काफी समय तक ऊर्जा उत्पन्न होती रहती है जिसका स्थानांतरण आवश्यक है । भारतीय डिज़ाइन के PHWR में यह कार्य निम्न प्रकार से किया जाता है -

अभिक्रियता नियंत्रण

साधारणतः अभिक्रियता व रिएक्टर में उत्पन्न शक्ति का नियंत्रण रिएक्टर की विभिन्न नियंत्रण प्रणालियों द्वारा संपन्न होता है । इस प्रणाली में नियंत्रक छड़ों का उपयोग होता है जिनके स्थान परिवर्तन द्वारा रिएक्टर की शक्ति को वांछित स्तर पर रखा जा सकता । संसूचकों और नियंत्रक युक्तियों में अतिरिक्त प्रणालियों के समावेश से इस तंत्र को अत्यंत विश्वसनीय बनाया जाता है । किसी एक प्रणाली के असफल होने पर अतिरिक्त प्रणालितां वही कार्य अपने आप संभाल लेती हैं ।

इसके अतिरिक्त रिएक्टर प्रचालन के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण प्राचलों की सीमाएं निर्धारित कर ली जाती हैं और रिएक्टर डिज़ाइन में ऐसा प्रावधान रखा जाता है कि इन सीमाओं के उल्लंघन होने पर रिएक्टर अपने आप तुरंत बंद हो जाता है । नरोरा के डिज़ाइन में इस प्रकार रिएक्टर को तुरंत बंद करने की दो स्वतंत्र शमन प्रणालियों का प्रयोग किया गया है । यद्यपि एक ही प्रणाली इसके लिए काफी है तथापि दुर्घटनाओं को नगण्य करने के लिए यह दोहरी व्यवस्था की गयी है ।

PHWR डिज़ाइन में, शीतलक का क्रोड़ में क्वथन नहीं होता अतः रिक्ति अभिक्रियता के प्रभाव से संबंधित रिएक्टर नियंत्रण समस्याएं उत्पन्न ही नहीं होतीं । इसके बावजूद रिएक्टर को बंद करने की प्रणालियां इस प्रकार डिज़ाइन की

जाती हैं कि किसी प्रकार की संभावित दूर्घटनाओं (जैसे शीतलक की कमी से संभावित दुर्घटना) के कारण अभिक्रियता बढ़ने पर रिएक्टर तुरंत बंद हो जाये ।

ईंधन शीतलन व्यवस्था

यह पहले ही बताया जा चुका है कि सामान्य स्थिति में ईंधन का शीतलन प्राथमिक शीतलक (भारी पानी) द्वारा किया जाता है जो अपनी ऊष्मा साधारण पानी की दे देता है जिससे भाप बनती है । जब रिएक्टर बंद होता है तो विखंडन उत्पादों के क्षय से उत्पन्न ऊष्मा बहुत थोड़ी होती है और इसके लिए शीतलन के कई विकल्प उपलब्ध हैं । ऊष्मा को ईंधन से हटाने के लिए सामान्य भाप जनित्र पथ का उपयोग प्राथमिक शीतलक पंपों के बंद होने पर भी किया जा सकता है, क्योंकि प्राकृतिक संचरण से ही वांछित प्रवाह मिल जाता है । विकल्प के रूप में एक अन्य शीतलक तंत्र भी उपलब्ध होता है जिसका उपयोग रिएक्टर बंद होने की अवस्था में ही किया जाता है । पूरे तंत्र में कई अतिरिक्त पंप व ऊष्मा विनिमयित्र शामिल किये जाते हैं ताकि शीतलन के कार्य में किसी प्रकार की रूकावट न आने पाये ।

यदि किसी कारवश प्राथमिक ऊष्मांतरण तंत्र फट जाये और रिएक्टर का भारी पानी काफी मात्रा में बाहर आ जाये, ऐसी स्थिति में भी ईंधन के उचित शीतलन के लिए विशेष उपाय रखे जाते हैं । ऐसी स्थिति में एक आपात्कालीन क्रोड़ शीतलन प्रणाली के द्वारा क्रोड़ में पानी भेजकर, ईंधन को ठंडा रखा जा सकता है ।

इसके अतिरिक्त, यदि प्राथमिक शीतलक व आपात्कालीन क्रोड़ शीतलन प्रणाली, दोनों ही एक साथ विफल हो जायें तो रिएक्टर पात्र में उपस्थित ठंडा भारी पानी विमंदक, ईंधन को ठंडा करने का कार्य कर सकता है ।

रिएक्टर को बाहर से विद्युत आपूर्ति बंद होने की स्थिति में आपात्कालीन बैटरियों व डीज़ल जनित्रों के द्वारा सभी सुरक्षा शीतलक प्रणालियों को बिजली उपलब्ध रहती है ताकि ईंधन के शीतलन का कार्य निर्बाध रूप से चलता रहे ।

संरोधन तंत्र

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि डिज़ाइन में अंतर्निहित इतने सुरक्षा प्रबंधों के कारण किसी दुर्घटना की संभावना नगण्य है परंतु रिएक्टर के चारों ओर की संरोधन बिल्डिंग सुरक्षा की एक और दीवार प्रदान करती है । यह बिल्डिंग इस प्रकार बनाई जाती है कि असंभावित दुर्घटनाओं के कारण भी ईंधन से निकली रेडियोएक्टिवता वातावरण में बिल्कुल ही न पहुंचने पाये ।

इस डिज़ाइन की एक प्रमुख विशेषता है दोहरा संरोधन । यदि भीतरी बिल्डिंग से कुछ रेडियोएक्टवता निकल भी आये तो वह दोनों बिल्डिंगों के बीच के स्थान तक ही सीमित रहेगी । इससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि बड़ी से बड़ी दुर्घटना में भी वातावरण में रेडियोएक्टिवता का रिसाव नगण्य होगा ।

सुरक्षा डिज़ाइन सिद्धांत

नाभिकीय रिएक्टर टेक्नालाजी में पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने के लिए जिन सुरक्षा डिज़ाइन सिद्धांतों को सामान्यतः अपनाया जाता है, उनमें से कुछ ऊपर के वर्णन से स्पष्ट हैं । कुछ सिद्धांत इस प्रकार हैं :

1. रिएक्टर की सुरक्षा से संबंधित तंत्रों के डिज़ाइन, निर्माण, संरचना व परीक्षण की अपेक्षाएं अत्यंत कठोर तथा सुरक्षा में उनके महत्त्व के अनुकूल होती हैं ।
2. सुरक्षा तंत्र में एक ही विचार निहित है - "गहन सुरक्षा" सुरक्षा की कई पंक्तियां एक के बाद एक रखी जाती हैं । सुरक्षा संबंधी किसी भी कार्य संपादन के लिए एक से अधिक साधन अपनाए जाते हैं । एक प्रणाली के विफल होने पर अन्य प्रणालियां उस सुरक्षा कार्य को संपन्न करती हैं ।
3. विभिन्न प्रणालियों तथा घटकों को भौतिक और प्रकार्यात्मक रूप से इस प्रकार से अलग रखा जाता है कि कोई एक स्थानीय घटना (आग, मिसाइल, पाइप का टूटना आदि) रिएक्टर के सुरक्षा तंत्र को बरबाद न कर सके ।
4. विभिन्न सुरक्षा तंत्रों में इतने अतिरिक्त घटक रखे जाते हैं कि किसी घटक के अचानक खराब हो जाने पर भी न्यूनतम सुरक्षा कार्यों का संपादन संभव हो सके । इसके अतिरिक्त सुरक्षा तंत्रों को निर्धारित अनुपलब्धता लक्ष्य भी पूरे करने पड़ते हैं ।

5. और असुरक्षित विफलताओं की संभावना को न्यूनतम रखने के लिए उपकरण आदि इस प्रकार डिज़ाइन किये जाते हैं कि वे सुरक्षित दिशा में ही विफल हों ।

निष्कर्ष

इस लेख में नाभिकीय रिएक्टर के सिद्धांतों तथा उन सिद्धांतों के PHWR के संदर्भ में व्यवहारिक उपयोग की चर्चा की गई है । नाभिकीय रिएक्टरों के डिज़ाइन में सुरक्षा को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता है । कई सुरक्षात्मक पहलू डिज़ाइन में अंतर्निहित हैं । इसके अतिरिक्त अभिक्रियता (रिएक्टिविटी) के विश्वसनीय नियंत्रण व ईंधन के हर परिस्थिति में शीतलन के लिए, सुरक्षा प्रणालियों की अनेक पंक्तियां बनाई जाती हैं । इसके अतिरिक्त रिएक्टर के चारों ओर रिसाव रहित दोहरा संरोधक होता है । इन विशिष्टताओं के कारण नाभिकीय रिएक्टर पूर्णतया सुरक्षित होते हैं ।

नाभिकीय पदार्थ

प्रदीप रंजन राय
निदेशक, पदार्थ वर्ग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
ट्रांबे, बंबई - 400 085

प्रस्तावना

नाभिकीय ऊर्जा दो प्रकार से प्राप्त की जा सकती है - भारी नाभिकों के विखंडन (fission) अथवा हल्के नाभिकों के संलयन (fusion) द्वारा। नियंत्रित नाभिकीय विखंडन नाभिकीय ऊर्जा का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है और नाभिकीय संलयन, स्वच्छ, सुरक्षित व असीमित ऊर्जा स्रोत की संभावनाओं को प्रस्तुत करता है। विखंडन नाभिकीय रिएक्टर की अभिकल्पना व संरचना में हमें आज निपुणता प्राप्त है। संलयन संबंधित अनुसंधान तथा विकास में भी काफी प्रगति हुई है। परन्तु संलयन रिएक्टर से औद्योगिक स्तर पर विद्युत उत्पादन में अभी बहुत समय लगेगा।

मानव सभ्यता के विकास से पदार्थ- विज्ञान का घनिष्ट संबंध रहा है। वैज्ञानिक उपलब्धियों को व्यवहार में लाने हेतु समय-समय पर नये-नये पदार्थों की खोज होती रही है। नाभिकीय ऊर्जा के क्षेत्र में पदार्थों की विशेष भूमिका है। इस क्षेत्र में पदार्थों के चयन का मुख्य आधार, उनके नाभिकीय गुणधर्म हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के विकिरणों के प्रभाव से उनके गुणधर्मों में परिवर्तन का भी ध्यान रखा जाता है। इस वार्ता में मुख्यतः भारतीय संदर्भ में, नाभिकीय पदार्थों का संक्षिप्त सर्वेक्षण प्रस्तुत किया गया है।

रिएक्टर वर्गीकरण

नाभिकीय रिएक्टर में, इंधन के विखंडन द्वारा निर्मुक्त ऊर्जा को, शीतलक ग्रहण करता है। बादमें यह, परंपरागत तापीय बिजलीघर की भांति, भाप उत्पादन के लिए इस्तेमाल होती है। रिएक्टर के मुख्य घटक हैं : क्रोड़, नाभिकीय ईंधन, विमंदक, शीतलक, परावर्तक, नियंत्रक और परिरक्षक आदि। ईंधन, विमंदक, नियंत्रक तंत्र, शीतलन व्यवस्था और विन्यास आदि के आधार पर नाभिकीय रिएक्टरों की अनेक अभिकल्पनाए की गई हैं। अतः रिएक्टर वर्गीकरण के कई तरीके हैं। इन सबका वर्णन यहां संभव नहीं है। उदाहरण के तौर पर इन्हें इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है - समांगी या विषमांगी, द्रुत, अधितापीय या तापीय, दाहक, परिवर्तक या अभिजनक, उच्च, मध्यम या निम्न फ्लक्स रिएक्टर, शक्ति या अनुसंधान रिएक्टर आदि। इसके अलावा ईंधन, शीतलक व विमंदक के आधार पर भी रिएक्टरों का वर्गीकरण किया जाता है। विमंदक पर आधारित वर्गीकरण चित्र -1 में दिखाया गया है।

आज हल्का पानी रिएक्टर (LWR) का प्रभुत्व है। दाबित जल रिएक्टर (PWR) व क्वथन जल रिएक्टर (BWR) इसके दो भेद हैं। यहां पर पानी शीतलक, विमंदक और ऊष्मा-विनिमयक तीनों का काम करता है। भारत अर्जेनटिना, कनाडा और ग्रेट ब्रिटेन को छोड़कर, अमेरिका व अन्य लगभग सभी देशों के परमाणु बिजलीघर, इन दोनों प्रकार के रिएक्टर सिद्धांतों पर आधारित हैं।

ग्रेट ब्रिटेन में गैस-शीतित रिएक्टर नाभिकीय विद्युत उत्पादन का मुख्य अंग रहे हैं। धात्विक यूरेनियम (U) ईंधन और कार्बनडाइआक्साइड शीतलक इस्तेमाल करने वाले मैग्नाक्स (Magnox) रिएक्टर इस दिशा में पहली पीढ़ी के रिएक्टर हैं। समृद्ध यूरेनियम डाइआक्साइड (UO_2) ईंधन व कार्बनडाइआक्साइड शीतलक वाले प्रगत गैस शीतित रिएक्टर (AGR) इनकी दूसरी पीढ़ी है। उच्चताप गैस शीतित रिएक्टर (HTGR) उस संकल्पना को प्रस्तुत करते हैं जो प्रगत गैस शीतित रिएक्टर की सीमाओं के बाद आरम्भ होती है और (AGR) से आगे का क्षेत्र प्रस्तुत करती है। विश्व के कई देशों में इस रिएक्टर प्रणाली के विकास पर बड़े जोरों से कार्य चल रहा है। दाबित भारी पानी रिएक्टर (PHWR) की अभिकल्पना सर्वप्रथम कनाडा में की गई थी। इस का ईंधन प्राकृतिक यूरेनियम डाइआक्साइड है। भारी पानी यहां विमंदक व शीतलक, दोनों का काम करता है। आत्मनिर्भरता की दृष्टि से और औद्योगिक स्तर पर यूरेनियम समृद्धिकरण सुविधा के अभाव में कनाडा, भारत, अर्जेनटिना, रूमानिया

विमंदक पर आधारित परमाणु बिजली घरों का वर्गीकरण

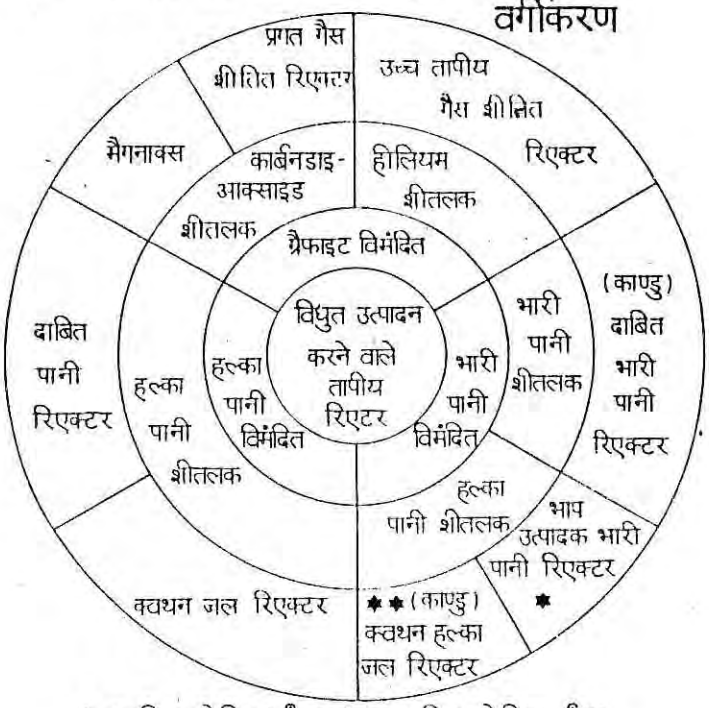

* समृध्दित यूरेनियम ईंधन ** प्राकृतिक यरेनियम ईंधन

चित्र - 1

आदि देशों ने इस रिएक्टर प्रणाली को अपनाया है। द्रुत रिएक्टरों का एक मुख्य वर्ग है : द्रव धात्विक अभिजनक रिएक्टर (LMFBR), इसका ईंधन प्लूटोनियम युक्त पदार्थ व शीतलक द्रव सोडियम है। तापीय रिएक्टरों में प्रयुक्त पदार्थ सारिणी-1 में दिखाए गये हैं ।

नाभिकीय ईंधन

यूरेनियम ही एक ऐसा नाभिकीय ईंधन है जो प्राकृतिक रूप से पाया जाता है । प्राकृतिक यूरेनियम में मुख्यतः U-238 के परमाणु और एक प्रतिशत से कम U-235 के परमाणु होते हैं । परन्तु U-235 के परमाणु ही विखंडन से ऊर्जा-उत्पादन में सक्षम हैं । यूरेनियम ईंधन वाले सभी रिएक्टर,ऊर्जा उत्पादन के साथ-साथ, अनिवार्य रूप से प्लूटोनियम भी बनाते हैं । Th 232 के तत्वांतरण से विखंडनीय U-233 का उत्पादन भी रिएक्टर में किया जाता है। U-233 और Pu जैसे नाभिकीय ईंधन का स्रोत रिएक्टर से निष्कासित भुक्तशेष ईंधन है । भुक्तशेष ईंधन के रासायनिक संसाधन से इस प्रकार के कृत्रिम ईंधन का निष्कर्षण किया जाता है। भौतिकी के दृष्टिकोण से सर्वाधिक प्रचलित ईंधन धात्विक यूरेनियम है, क्योंकि यौगिकों की अपेक्षा इसके उतने ही आयतन में अधिक यूरेनियम परमाणु होते हैं। औद्योगिक स्तर पर मैग्नाक्स और अनुसंधान रिएक्टरों का ईंधन धात्विक यूरेनियम रहा है । धात्विक यूरेनियम ईंधन के कार्यक्षेत्र में समायोजित (adjusted) यूरेनियम छड़ का इस्तेमाल प्रमुख घटना रही है। किरणीयन के प्रभाव में इसकी कार्यक्षमता बेहतर है। तथापि धात्विक यूरेनियम में कुछ कमियां है। निष्क्रिय धात्विक आवरण के बावजूद यह यूरेनियम ईंधन अत्यधिक

सारणी- 1(अ)

भिकीय रिएक्टर प्राथमिक घटक और मुख्य पदार्थ

प्राथमिक घटक	मुख्य पदार्थ	प्रकार्य
ईंधन	यूरेनियम, प्लूटोनियम	ऊर्जा उत्पादन हेतु विखंडन अभिक्रिया
संरचनात्मक तत्व	एलूमिनियम, स्टेनलैस स्टील, मृदु इस्पात, जर्कोनियम मिश्रधातु, निकेल	ईंधन के संरोधन व रिएक्टर क्रोड़ के लिए भौतिक आधार प्रदान करने के लिए
विमंदक	ग्रैफाइट, हल्का पानी भारी पानी, बेरिलियम	द्रुत विखंडन न्यूट्रानों को विमंदन द्वारा तापीय बनाना
परावर्तक		न्यूट्रान रिसाव कम करने हेतु
ब्लैंकेट	अवक्षयित यूरेनियम, थोरियम	नये विखंडनीय ईंधन के अभिजनन हेतु

तथा इसकी ऊष्मा चालकता बहुत कम है। फिर भी कार्यक्षमता की दृष्टि से यह अवगुण बहुत गंभीर नहीं है। घनत्व की कमी U-235 में समृद्धिकरण द्वारा पूरी की जा सकती है। यद्यपि भंगुरता, कम सामर्थ्य व कम ऊष्मा चालकता UO_2 में जल्दी ही दरार पैदा कर देते हैं तथापि संरचनात्मक धात्विक आवरण के अंदर इसका अत्यधिक विघटन स्वीकार्य है। इसमें गलनांक (2800^0 से.) तक प्रावस्था परिवर्तन नहीं होता और इतने उच्चताप पर भी इसका किरणीयन आचरण अच्छा है। अतएव आजकी नाभिकीय रिएक्टर पीढ़ी के लिए UO_2 अति उपयुक्त सिद्ध हुआ है। दाबित भारी पानी रिएक्टर में प्राकृतिक UO_2 और हल्के पानी व प्रगत गैस शीतित रिएक्टरों में इसे 2-3 प्रतिशत U-235 से समृद्ध करके प्रयुक्त किया जाता है। UO_2 की नन्हीं सिंटरित गुटिकाएं ईंधन के रूप में इस्तेमाल की जाती हैं।

तापीय रिएक्टर ईंधन के पुनःसंसाधान से प्राप्त प्लूटोनियम को, प्राकृतिक यूरेनियम अथवा समृद्ध यूरेनियम

सारणी - 1(ब)

नाभिकीय रिएक्टर प्राथमिक घटक और मुख्य पदार्थ

प्राथमिक घटक	मुख्य पदार्थ	प्रकार्य
नियंत्रक अवयव	कैडमियम, बोरानकार्बाइड, हैफनियम, गैडोलिनियम, बोरिकएसिड, सिल्वर - इंडियम	क्रांतिकता व शक्ति नियत्रंण हेतु
शीतलक	हल्का पानी, भारी पानी कार्बनडाइआक्साइड, हीलियम, द्रवधातु (सोडियम, सोडियम - पोटैशियम)	रिएक्टर क्रोड़ से ऊष्मा ऊर्जा निष्कासन हेतु
परिरक्षक	हल्के, माध्यमिक, भारी तत्व / यौगिक (कंक्रीट, स्टील, शीशा, पानी, पालीएथिलीन,	कर्मचारियों की आयनकारी विकिरण से सुरक्षा
सुरक्षा तंत्र	दाब दमन / उन्मूलन तंत्र, आपत्कालीन क्रोड़ शीतलन तंत्र, यंत्र मानीटरन तंत्र	नाभिकीय रिएक्टर के प्रचालन सुरक्षा उपायों को निश्चित करने के लिए

अभिक्रियाशील है। इससे शीतलक के चयन में कठिनाई आती है और उच्चताप पर पानी का इस्तेमाल असंभव सा हो जाता है। यूरेनियम के प्रावस्था परिवर्तन गुणधर्म, किरणीयन प्रेरित क्रिया, और वृद्धि, विखंडन उत्पादों का जमाव आदि सभी मिलजुल कर ईंधन प्रचालन तापमान को 600^0 से. और शीतलक तापमान को 400^0 से. तक सीमित करते हैं। इनका बर्नअप अपेक्षाकृत कम (3000-4000 मेगावाट दिन प्रति टन) है।

धात्विक यूरेनियम के प्रतिस्थापन के लिए आवश्यक गुणधर्म ये हैं - कम रासायनिक अभिक्रियाशीलता व बेहतर उच्चताप स्थायित्व, किरणीयन क्षय एवं तापीय परिसंचरण को कम रखने के लिए क्यूबिक क्रिस्टलीय संरचना और ईंधन विरचन विधि सुगम होनी चाहिए। ये सभी बातें सिरेमिक ईंधन में पायी जाती हैं। UO_2 काफी हद तक इन शर्तों को पूरा करता है। यद्यपि इसमें भी कुछ कमियां हैं - इसका सैद्धांतिक घनत्व 9.67 ग्रा/से.मी.^{3} है जो यूरेनियम से आधा है। यह भंगुर है

के साथ लगभग 7 भार प्रतिशत अधिमिश्रित करके दोबारा तापीय रिएक्टर में इस्तेमाल किया जाता है। इसे मिश्रित आक्साइड ईंधन (MOX) का नाम दिया गया है। कई देशों में PWR और BWR में MOX का सफलतार्वक उपयोग किया गया है। MOX के तापीय और नाभिकीय गुणधर्म UO_2 के समान हैं। MOX के उपयोग से लगभग 20% यूरेनियम की बचत संभव है । तापीय रिएक्टर में प्लूटोनियम के पुनः चक्रण की यह प्रणाली, उन देशों के लिए विशेषतः उपयोगी है जहां समृद्धिकरण संयंत्र नहीं हैं। Pu की ज्वलन क्षमता तापीय रिएक्टर की अपेक्षा द्रुत रिएक्टर में बेहतर है। यहां बिजली उत्पादन के साथ-साथ, रिएक्टर में अभिजनन प्रक्रम द्वारा समकक्ष ईंधन का उत्पादन भी होता है। जैसे कि पहले बताया जा चुका है, LMFBR अत्यधिक लोकप्रिय हैं। LMFBR की औद्योगिक सफलता का रहस्य ऐसे प्लूटोनियम आधारित ईंधन के विकास में है, जो उच्च बर्नअप (1,00,000 मेगावाट दिन प्रति टन) तक, सुरक्षात्मक ढंग से इस्तेमाल किया जा सके और जिसका अभिजनन अनुपात 1.2 से अधिक हो। LMFBR के लिए मिश्रित यूरेनियम-प्लूटोनियम (MOX, 25% Pu) काफी उपयुक्त पाया गया है। इस दिशामें (U,Pu)C, (U,Pu)N और U-Pu-Zr जैसे अन्य ईंधनों को LMFBR केलिए प्रगत ईंधन की संज्ञा दी गई है क्योंकि इनकी ऊष्मा चालकता अधिक व द्विगुणन काल कम ($\leq$10 वर्ष) है।

ईंधन के रूप में पिछले दो दशकों से PWR, BWR, और PHWR के संचालक जर्केलाय आवरण तथा उच्च घनत्व ($\geq$94% सैद्धान्तिक घनत्व) UO_2 गुटिका ईंधन-पिन की कार्यक्षमता संतोषजनक रही है । इनकी विफलता दर भी बहुत कम (10 पिनों में 1) रही है । प्राकृतिक UO_2 ईंधन वाले PHWR में बर्नअप लगभग 7000 MWD/t है । प्रारंभिक चरणों में जल रिएक्टरों में ईंधन पिन की विफलता के मुख्य कारण निम्न थे -

- आवरण की बाह्य व आंतरिक हाइड्राइडिंग
- किरणीयन से ईंधन का घनत्व बढ़ जाने के कारण आवरण का दब जाना
- पावर रैम्पिंग के दौरान प्रतिबल और I, Cs, Cd, Te आदि विखंडन उत्पादों की क्रिया से जर्केलाय में गुटिका आवरण पारस्परिक क्रिया (PCI) एवं
- प्रतिबल संक्षारण भंजन (S.S.C.) का होना। आज इन सभी समस्याओं को संतोषजनक ढंग से हल किया जा चुका है ।

ईंधन विरचन प्रक्रम और विकास

हल्के पानी रिएक्टरों के लिए UO_2 ईंधन गुटिकाओं का उत्पादन चूर्ण-गुटिका (POP) विधि से किया जाता है । UO_2 चूर्ण तैयार करने के मुख्य चरण इस प्रकार हैं -

- यूरेनियम हैक्साफ्लोराइड (UF_6) अथवा यूरेनाइल नाइट्रेट हैक्साहाइट्रेट (UNH) से अमोनियम डाइयूरेनेट (ADU) का अवक्षेप
- अवक्षेप का 600^0-800^0 से. पर तापीय अपघटन
- 600^0 से. पर हाइड्रोजन अपचयन तथा स्थिरीकरण

भारत में तारापुर के BWR के लिए समृद्ध UO_2 पाउडर UF_6 से और कोटा, कल्पाक्कम व नरोरा आदि के PHWR के लिए प्राकृतिक UO_2 पाउडर UNH से इस विधि द्वारा तैयार किया जाता है ।

इस UO_2 पाउडर को बहुत बारीक (1 माइक्रोन) होने के कारण, गुटिकाएं बनाने से पहले हैमर मिलिंग, पूर्व संहनन व कणीकरण आदि प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है । रेडियो विषैली धूल इस प्रक्रम का प्रमुख खतरा है । जर्मनी में प्रयुक्त अमोनियम यूरेनिल कार्बोनेट (AUC) विधि से अपेक्षाकृत दानेदार (10-20 माईक्रोन) पाउडर बनता है जो गुटिकाएं बनाने के लिए अधिक उपयुक्त है । इन गुटिकाओं को उच्चताप (1700^0 से.) पर अपचायक वातावरण (Ar + 8% H_2, N_2 + 8% H_2 या भंजित NH_3) में सिंटरित करके इनका घनत्व बढ़ाया जाता है। जर्मनी में प्रयुक्त निकूसी (NIKUSI) विधि से चूर्ण तथा भट्टी के वातावरणमें कुछ परिवर्तन करके लगभग 1100^0 से. पर ही उच्च घनत्व वाली गुटिकाओं को बनाया जाता है ।

सोल जेल माइक्रोस्फीअर पेलेटाइजेशन (SGMP) ईंधन निर्माण की एक नई विधि है। इसके द्वारा उच्च घनत्व व नियंत्रित छिद्र संरचना वाली UO_2, ThO_2, ThO_2-UO_2, UO_2-PuO_2, ThO_2-PuO_2 गुटिकाओं का विरचन किया गया है । इस प्रक्रम का प्रारंभिक पदार्थ यूरेनियम, प्लूटोनियम और थोरियम का नाइट्रेट घोल है । SGMP में आक्साइड के

जेल माइक्रोस्फीअर तैयार करने हेतु अमोनिया जेलीकरण का उपयोग होता है। यह प्रक्रिया अत्यधिक रेडियोविषालु व β,γ एवं न्यूट्रानएक्टिव, ThO_2-UO_2, UO_2-PuO_2 और ThO_2-PuO_2 ईंधनों की सूदूर और स्वचालित विरचन विधियों के लिए अति उपयुक्त है ।

द्रव धात्विक अभिजनक रिएक्टर (LMFBR) के लिए प्रगत कार्बाइड और नाइट्राइड ईंधनों का उत्पादन अभी तक विश्व के किसी भी देश में औद्योगिक स्तर तक नही पहुंच पाया है । इस क्षेत्र में भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र तथा कुछ ही अन्य प्रयोगशालाओं ने लघु स्तर पर इस का विकास किया है। अनुभव के आधार पर भा.प.अ. केंद्र ने LMFBR के लिए सोडियम शीतलक के साथ सुसंगत प्लूटोनियम समृद्ध (Pu 0.7 U 0 .3 C और Pu 0.7 U 0.3 N) ईंधन गुटिकाओं का प्रक्रम चित्र तैयार किया है ।

संरचनात्मक पदार्थ

रिएक्टर घटकों को संरचनात्मक आधार, यांत्रिक सामर्थ्य और ईंधन संरोधन प्रदान करने के लिए संरचानात्मक पदार्थों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। मूलरुप से ईंधन आवरण, दाब पात्र, ईंधन शीतलक चैनल क्रोड़ आधार पट्टिकाएं, शीतलक नलिका तंत्र, नियंत्रक छड़ आधार आदि इन पदार्थों के अंतर्गत आते हैं । इन पदार्थों का चयन प्रकार्यात्मक (function) आवश्यकताओं व रिएक्टर अभिकल्पना के अनुसार किया जाता है ।

अनेक शिक्षण और अनुसंधान रिएक्टरों में धात्विक यूरेनियम के आवरण हेतु आज भी एल्युमिनियम 1 का उपयोग होता है। कम तापीय न्यूट्रान अवशोषण परिक्षेत्र, अच्छी ऊष्मा चालकता, किरणीयन के प्रभाव में अच्छा स्थायित्व, अच्छा संक्षारण प्रतिरोध, कम कीमत, प्रचुर उपलब्धि और विरचन व वेल्डन में आसानी जैसी अनेकों विशेषताओं के कारण इसका चयन किया गया है। कम गलनांक व उच्चताप पर कम यांत्रिक सामर्थ्य इसके अवगुण हैं ।

शक्ति रिएक्टर के ईंधन आवरण हेतु सबसे पहले मैग्नीशियम (Mg) का नाम आता है। इसका तापीय न्यूट्रान अवशोषण परिक्षेत्र, Al से लगभग एक तिहाई है । यूरेनियम के साथ इसकी संगतता भी Al से बेहतर है । इन्हीं कारणों से मैग्नीशियम मिश्रधातुओं का आवरण पदार्थ के रूप में विस्तृत इस्तेमाल हुआ है तथा ऐसे रिएक्टरों को मैग्नाक्स का नाम दिया गया है ।

जलीय शक्ति रिएक्टरों में प्रयुक्त संरचनात्मक पदार्थों में जर्केलाय प्रमुख हैं। नाभिकीय ईंधन आवरण, ईंधन चैनलों और रिएक्टर क्रोड़ की दाब नलियों के लिए इसका प्रयोग सफलतापूर्वक किया गया है। रिएक्टर क्रोड़ अनुप्रयोग के लिए जर्कोनियम का उपयोग बेजोड़ है । इसकी न्यूट्रान पारदर्शिता को क्षति पहुंचाये बगैर, सामर्थ्य और संक्षारण प्रतिरोध की आवश्यकताओं के अनुसार, इसकी मिश्रधातु बनाई जा सकती है। जर्कोनियम मिश्रधातु (Zr, Sn, Cr, Fe, Ni) को जर्कोलाय - 2 का नाम दिया गया है। इसका संक्षारण प्रतिरोध व सामर्थ्य काफी अच्छा है। BWR में ईंधन आवरण के रूप में, SGHWR में ईंधन आवरण, दाब नलिकाओं व कैलेन्डरिया नली के लिए और PHWR में कैलेन्डरिया नली के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। जर्कोनियम की दूसरी मिश्रधातु, निकल रहित, जर्केलाय - 4 है। इसकी हाइड्रोजन उद्ग्राह्यता कम है, जो इसकी विशेषता है। BWR में ईंधन चैनलों के लिए और PWR व PHWR में ईंधन आवरण के लिए इसका उपयोग होता है। Zr-2.5 Nb मिश्रधातु PHWR की दाब नलिकाओं के लिए प्रयोग की जा रही है। इसमें Cu के मिश्रण से हवा व CO_2 वातावरण में इसके संक्षारण प्रतिरोध और लचीलेपन (Resilience) में सुधार होता है । इसलिए PHWR में कैलेन्डरिया और दाब नलिकाओं के बीच के स्थान में अंतरालक पदार्थ के लिए Zr-2.5 Nb-0.5 Cu को अति उपयुक्त पाया गया है। इसके अतिरिक्त कई अन्य जर्कोनियम मिश्रधातुओं का विकास किया जा रहा है ।

जल शीतित रिएक्टरों के लिए जो महत्व जर्कोनियम मिश्रधातुओं का है, LMFBR के लिए आस्टेनिटिक स्टेनलैस स्टील का वही महत्व है । परन्तु फुल्लन व दूसरी संबंधित समस्याओं के कारण द्रुत रिएक्टर के लिए स्टेनलैस स्टील का उपयोग केवल सीमित समय के लिए ही किया जा सकता है । इन समस्याओं के निराकरण हेतु आजकल आपरिवर्तित संघटनों (Modified composition) का विकास-कार्य प्रगति पर है। ऐसा एक नया प्रस्तावित संघटन Ti मिश्रण के

साथ 316 स्टेनलैस स्टील का है । आवरण पदार्थ के लिए इसका उपयोग किये जाने की काफी संभावनाएं हैं ।

गैस शीतित रिएक्टरों की श्रृंखला में, ईंधन अवयव अभिकल्पना की दृष्टि से HTGR की संकल्पना अत्यंत प्रगत है । इस रिएक्टर का प्रचालन उच्चताप पर होता है । इसमें धात्विक आवरण का प्रयोग नहीं होता, बल्कि ईंधन कर्णों में सिरेमिक लेपन किया जाता है । इन कणों पर क्रमशः एक सरंध्र परत, पायरोकार्बन परत, सिलिकान कार्बाइड परत तथा पुनः पायरोकार्बन परत चढ़ाई जाती है । यह परतें विखंडन उत्पादों व विखंडन गैसों को ईंधन कण के अंदर रखने में सहायता करती है, और उसे गैसीय धारा से अलग भी रखती हैं ।

नियंत्रक और परिरक्षक पदार्थ

नियंत्रक व परिरक्षक पदार्थ न्यूट्रॉन के अत्यधिक अवशोषक होते हैं । यद्यपि न्यट्रान अवशोषण का यह गुणधर्म बहुत से पदार्थों मे पाया जाता है तथापि दूसरे भौतिक-रासायनिक और नाभिकीय गुणधर्मों के कारण यह चयन थोड़े से पदार्थों तक ही सीमित रह जाता है । बोरान व हैफनियम का इस श्रेणी में काफी बोलबाला है ।

बोरान का उपयोग, बोरान कार्बाइड के रूप में, नियंत्रण के लिए किया जाता है । बोरान कार्बाइड पाउडर ऐसे ही पैक करके या तप्त संपीडित सिंटरित स्थिति में प्रयोग में लाया जाता है । बोरान कार्बाइड-युक्त विभिन्न पदार्थों का परिरक्षण के लिए प्रयोग किया जाता है । इसके लिए बोराल (बोरान कार्बाइड सम्मिश्र) या कंक्रीट, सिलिकेट, पी.वी.सी. पालीएथिलीन, एपाक्सी रेजिन और सिलिकान रबर आदि दूसरे संरचनात्माक पदार्थों में बोरान कार्बाइड का समाबेश करके, इनका उपयोग होता है ।

शुद्ध धात्विक हैफनियम में आवश्यक यांत्रिक और संक्षारण प्रतिरोध गुणधर्म पाये जाते हैं पर कीमत अधिक होने के कारण, इसका उपयोग केवल सबमैरिन जैसे संकुलित (Compact) रिएक्टर तक ही सीमित है ।

बोरान कार्बाइड और कई बोरान कार्बाइड पदार्थों का भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में उत्पादन किया जा रहा है । इससे केंद्र के 100 MW ध्रुव रिएक्टर और तारापुर बिजलीघर की आवश्यकताओं को काफी हद तक पूरा किया जाता है । संकुलित शक्ति रिएक्टरों की प्रायोजित आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु हैफनियम उत्पादन व विरचन सुविधाओं की स्थापना भी की गई है ।

संलयन रिएक्टर पदार्थ

नाभिकीय संलयन पर अभी तक पूर्ण नियंत्रण नहीं पाया जा सका है । हाइड्रोजन बम इस तरह का सर्वाधिक खौफनाक व अवांछनीय तंत्र है । नियंत्रित संलयन तंत्र, जिसे ताप नाभिकीय रिएक्टर का नाम दिया गया है, की परिस्थितियां व आवश्यकताएं अत्यंत कठिन हैं । इन रिएक्टरों में हाइड्रोजन के आइसोटोपों, ड्यूटीरियम और ट्रिशियम, की थोड़ी सी मात्रा को तारों के तापमान तक गर्म किया जाता है और ऊर्जा-लाभ मिलने तक इस अभिक्रिया का संपोषण किया जाता है । इन विधियों में से एक विधि चुंबकीय परिसीमन संलयन प्रणाली "टोकामैक" पर विस्तृत अध्ययन किया गया है ।

संलयन का ईंधन ड्यूटीरियम है । यह भारी पानी का रासायनिक घटक है और भारी पानी स्वयं प्राकृतिक जल का एक अंग है । इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि नाभिकीय संलयन ऊर्जा का स्रोत अनन्त है ।

संलयन रिएक्टर (उदाहरणतः D-D) में विमंदक, परावर्तक, और ब्लैंकेट पदार्थ एक साथ काम कर सकते हैं । उदाहरण के लिए, द्रव लीथियम (Li) ऊर्जावान संलयन न्यूट्रानों का विमंदन व परावर्तन और अवशोषण द्वारा ट्रिशियम का अभिजनन भी कर सकता है । दूसरे शब्दों में D-T रिएक्टरमें द्रव Li एक साथ विमंदक, परावर्तक और ब्लैंकेट का काम करता है ।

संलयन रिएक्टर शीतलक के गुणधर्म इस प्रकार हैं - उच्च ऊष्मा चालकता, अत्यधिक विशिष्ट ऊष्मा, निम्न गलनांक, उच्च क्वथनांक, निम्न घनत्व, निम्न श्यानता और अच्छा संक्षारण प्रतिरोध आदि । इसके अतिरिक्त शीतलक को संरचनात्मक चैनल और नलिका पदार्थों के साथ सुसंगत होना चाहिए । इसके लिए लीथियम, लीथियम युक्त संगलित लवण (fused salt), जैसे फ्लिब (Ui_2BeF_4) हीलियम और पानी पर अनुसंधान हो रहा है । इनमें द्रव Li अधिक उपयुक्त है क्योंकि यह शीतलन व अभिजनन दोनों कार्यों को पूरा करने में समर्थ है ।

संलयन पदार्थ समस्याओं में से प्रथम भित्ति पदार्थ की समस्या सबसे कठिन है । निर्वात पात्र में ताप नाभिकीय प्लाज्मा के परिसीमन हेतु प्रथम भित्ति पदार्थों को अत्यंत विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है । उच्चतापसह धातु व मिश्रधातु, लौह मिश्रधातु, निकेल मिश्रधातु, अल्युमिनियम पर आधारित पदार्थ और कार्बन पर आधारित पदार्थ आदि इस कार्य के लिए संभावित पदार्थों की गिनती में आते हैं ।

प्लाज्मा परिसीमन में चुंबकीय पदार्थ एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । चुंबकों का मुख्य काम विश्वसनीय, स्थायी और अस्थायी चुंबकीय क्षेत्र प्रदान करना है। अब तक 'टोकामैक' के लिए उच्च चुंबकीय क्षेत्र प्रदान करने हेतु अतिचालक चुंबकों का प्रयोग हो रहा है पर प्रायोजित औद्योगिक संलयन रिएक्टरों के लिए NbTi और Nb_3Sn जैसे अतिचालक पदार्थों का प्रयोग अनिवार्य है । उच्च क्रांतिक तापमान (Tc) वाले सिरेमिक अतिचालक, जिनकी खोज हाल में ही हुई है, इस क्षेत्र में विशेष भूमिका निभा सकते हैं ।

निष्कर्ष

विश्व की ऊर्जा आवश्यकता में निरंतर वृद्धि के कारण, नाभिकीय ऊर्जा की मांग में वृद्धि अवश्यंभावी है । इसमें तापीय व द्रुत रिएक्टर एक दूसरे के पूरक हैं । द्रुत रिएक्टर में प्लूटोनियम के साथ U-235 अवक्षयित (depleted) अपशिष्ट यूरेनियम का इस्तेमाल किया जाता है । इस तरह से नये यूरेनियम के निवेश व समृद्धिकरण की आवश्यकता नहीं रहती । नाभिकीय कार्यक्रम के संबंध में यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है । इससे विश्व के यूरेनियम स्रोतों का संरक्षण होता है । फिर भी बिजली उत्पादन की भावी योजनाओं के लिए मानव को, ब्रह्माण्ड के सूर्य व तारों को शक्ति प्रदान करनेवाली, संलयन प्रक्रिया पर विजय प्राप्त करनी होगी । यूरोप, रूस, अमेरिका और जापान में इस पर काफी काम हो रहा है ।

नाभिकीय ऊर्जा संबंधी संक्षिप्त विवरण से यह स्पष्ट है कि समय के साथ-साथ नाभिकीय ऊर्जा संबंधी पदार्थों की मांग भी बढ़ती जाएगी । वास्तव में उत्कृष्ट गुणवत्ता, गुणधर्म, सुनिश्चित निष्पादन वाले पदार्थों का समावेश, नये पदार्थों का विकास और पदार्थ उत्पादन के लिए नई प्रौद्योगिकी के विकास आदि के रूप में एक बहुत बड़ी चुनौती हमारे सामने है । संलयन के नियंत्रण हेतु ऐसे नई पीढ़ी के पदार्थों की आवश्यकता है जो अत्यधिक ताप, दाब और विकिरण की भीषणतम परिस्थितियों में कार्य करने में सक्षम हों । आशा है कि विखंडन की भांति नियंत्रित संलयन अभिक्रिया भी संभव हो सकेगी ।

भारत के नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम में भारी पानी का महत्व एवं इसका उत्पादन

सु. शर्मा
कार्यकारी निदेशक, एवं
स्वं. प्र. श्रीवास्तव
परियोजना अभियन्ता (इंस्ट्रुमेंटेशन)
भारी पानी बोर्ड, विक्रम साराभाई भवन, बम्बई - 400 094.

इससे पहले कि हम उपरोक्त विषय पर व्यापक चर्चा शुरू करें हमें यह जानना आवश्यक है कि भारी पानी क्या है, यह महत्वपूर्ण क्यों है तथा इसके क्या उपयोग हैं । इन मूलभूत प्रश्नों का उत्तर देने के लिए हम हाइड्रोजन गैस पर विचार करेंगें जो सबसे हल्की गैस है तथा जिसकी द्रव्यमान संख्या 1 है । पानी, हाइड्रोजन का एक आक्साइड यौगिक है जो पृथ्वी पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। हाइड्रोजन गैस का एक आइसोटोप ड्यूटीरियम है जिसकी द्रव्यमान संख्या २ तथा इसका आक्साइड यौगिक भारी पानी कहलाता है । भारी पानी के बारे में एक भ्रम यह है कि यह भारी होता है तथा पारे या अन्य किसी अधिक घनत्व वाले द्रव को हटाकर प्राप्त किया जा सकता है । वस्तुतः यह धारणा निराधार है । एक बार विनोदात्मक लहजे में किसी ने टिप्पणी की थी कि भारी पानी के पृथक्करण अथवा समृद्धिकरण संबंधी कार्य पर इतना अनावश्यक व्यय करने की क्या जरूरत है जबकि पानी की निचली सतह को पृथक कर भारी पानी प्राप्त किया जा सकता है । सामान्य जन के मष्तिस्क में यह एक गलत धारणा है । इसमें कोई शक नहीं कि भारी पानी, सामान्य पानी से थोड़ा भारी है क्योंकि यह ड्यूटीरियम का आक्साइड है । जो हाइड्रोजन से भारी है । यह पानी में पूर्णतः विलेय है । भारी पानी, सामान्य पानी से 10 प्रतिशत भारी है और इसका घनत्व 1.1 है तथा इसका क्वथनांक (ब्बायलिंग प्वाइंट) सामान्य पानी से थोड़ा अधिक (101.40 सेंटीग्रेड) है । यह एक रंगहीन एवं स्वादहीन द्रव है । इसके पीने से नपुंकसता हो सकती है, परन्तु यह रेडियोएक्टिव नहीं है । सामान्य पानी के दस लाख भागों में भारी पानी की उपस्थिति लगभग 140-160 भाग तथा गैस के दस लाख भागों में इसकी उपस्थिति 100-115 भाग है । यह उपस्थिति इस तथ्य पर निर्भर करती है कि इसे किस स्रोत से प्राप्त किया जाता है । इसे पानी अथवा अमोनिया के आसवन, विद्युत विश्लेषण अथवा रासायनिक विनिमय जैसी पद्धतियों से पृथक किया जा सकता है ।

भारी पानी का उपयोग एवं महत्व जाने के लिए हमें नाभिकीय अभिक्रिया के मूल सिद्धान्तों को जानना आवश्यक है । एक नाभिकीय रिएक्टर में नाभिकीय प्रक्रिया शुरू करने के लिए यूरेनियम-235 जैसी विखंडनीय सामग्री का प्रवर्तन बाह्य न्यूट्रान स्रोत द्वारा किया जाता है। इससे अतिरिक्त द्रुत न्यूट्रोनों तथा ऊर्जा की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार से उत्पन्न हुए न्यूट्रान और अधिक न्यूट्रान उत्पन्न करके नाभिकीय अभिक्रिया को आगे बढ़ाने में सहायक होते हैं तथा और अधिक नाभिकीय ऊर्जा उत्पन्न होती है । इस प्रकार एक श्रृंखलाबद्ध अभिक्रिया की स्थापना के फलस्वरूप नाभिकीय ऊर्जा का अनवरत उत्पादन होता है । नाभिकीय अभिक्रिया में उत्पन्न द्रुत न्युट्रोनों की गति को धीमा करके अभिक्रिया से स्थायी परिमाण में अनवरत ऊर्जा का उत्पादन होता है । द्रुत न्यूट्रानों को धीमा करने सम्बंधी कार्य पानी, भारी पानी, ग्रेफाइट अथवा सोडियम के द्वारा किया जा सकता है । यह इस बात पर निर्भर करता है कि उपयोग की गई नाभिकीय ईंधन सामग्री तथा रिएक्टर किस प्रकृति का है। इस प्रकार भारी पानी का प्रयोग द्रुत न्यूट्रानों की गति को कम करके अभिक्रिया को मन्द रखने के लिए किया जाता है । अतः भारी पानी को विमन्दक अथवा परावर्तक भी कहा जाता है । भारी पानी का अन्य प्रयोग दाबानुकूलित भारी पानी रिएक्टरों में किया जाता है, जहाँ इसे प्राथमिक शीतलक के रूप में प्रयोग किया जाता है । यह अपनी ऊष्मा का स्थानान्तरण वाष्प उत्पादक अथवा ठंडे पानी के ऊष्मा विनिमयक को करता है। इससे बाष्प उत्पन्न होती है जो टरबाइन को संचालित करती है तथा विद्युत ऊर्जा उत्पन्न होती है । इसे चित्र -1 में दिखाया गया है ।

हमारे देश में प्रयुक्त अथवा भविष्य में प्रयोग किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के रिएक्टर नीचे दिए गए हैं :

(1) दाबानुकूलित क्वथन रिएक्टर जिस में समृद्ध यूरेनियम का ईंधन (2 प्रतिशत यूरेनियम- 235 में समृद्ध) तथा विमन्दक एवं शीतलक के रूप में ठंडे जल का प्रयोग किया जाता है । यह पद्धति तारापुर विद्युत केन्द्र में स्थित जैसे रिएक्टरों में प्रयोग की जा रही है ।

(2) दाबानुकूलित भारी पानी रिएक्टर (जिन में प्राकृतिक यूरेनियम 0.7% यूरेनियम-235 ईंधन सामग्री के रूप में) एवं विमंदक तथा शीतलक के रूप में भारी पानी का प्रयोग किया जाता है । कोटा, कल्पाक्कम एवं नरोरा आदि में स्थित रिएक्टरों में इस पद्धति का उपयोग किया जाता है ।

(3) फास्ट ब्रीडर रिएक्टर जिस में यूरेनियम-238 एवं प्लूटोनियम के मिश्रण का प्रयोग ईंधन के रूप में तथा सोडियम को विमंदक एवं शीतलक के रूप में प्रयोग किया जाता है । इस पद्धति का प्रयोग कल्पाक्कम स्थित एफ.बी.टी.आर. में हो रहा है। तापीय रिएक्टर में नाभिकीय अभिक्रिया में प्लूटोनियम प्राप्त किया जाता है । प्लूटोनियम के स्थान पर थोरियम का प्रयोग भी किया जा सकता है । अगली पीढ़ी के रिएक्टरों में नाभिकीय ऊर्जा के उत्पादन के लिए विखंडन पद्धति के बजाय संलयन पद्धति का उपयोग किया जाएगा तथा प्रवर्तन (ट्रिगरिंग) का कार्य ताप रिएक्टरों के द्वारा किया जाएगा जहाँ पुनः भारी पानी अत्यन्त उपयोगी होगा, जैसा कि ऊपर बताया गया है ।

यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि भारी पानी का प्रयोग केवल दाबानुकूलित भारी पानी रिएक्टरों में किया जाता है । इस शताब्दी के अन्त तक नाभिकीय कार्यक्रम के अन्तर्गत 10,000 मेगावाट विद्युत ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य है, वह मुख्यतः इन तापीय भारी पानी रिएक्टरों पर ही आधारित है जिनके संचालन के लिए भारी पानी की आवश्यकता होगी ।

विभिन्न प्रकार की ऊर्जाएं जिनका विद्युत ऊर्जा में रूपान्तरण किया जा सकता है, वे हैं ऊष्मा, नाभिकीय, ज्वारीय, सौर, पवन, बायोमास और बायोगैस इत्यादि । इनमें से केवल नाभिकीय, ज्वारीय और पवन ऊर्जा इत्यादि का विद्युत ऊर्जा के उत्पादन हेतु असीमित स्रोत के रूप में उपयोग किया जा सकता है ।

इस शताब्दी के अन्त तक देश में लगभग 100,000-120,000 मेगावाट विद्युत ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य होगा । इसमें से 8-10% नाभिकीय विद्युत रिएक्टरों से मिलने की आशा है । वर्तमान में कुल विद्युत ऊर्जा की मांग का लगभग 3 प्रतिशत नाभिकीय ऊर्जा से प्राप्त किया जा रहा है । पूरे विश्व में नाभिकीय रिएक्टरों से उत्पादित कुल विद्युत ऊर्जा लगभग 2,00,000 मेगावाट है जबकि देश में 1987 के आंकड़ों के अनुसार नाभिकीय ऊर्जा की कुल स्थापित क्षमता 1230 मेगावाट है ।

नाभिकीय ऊर्जा से प्राप्त विद्युत ऊर्जा की प्रति यूनिट कीमत (ऊष्मा ऊर्जा द्वारा प्राप्त) भविष्य में कम होगी क्योंकि ताप ऊर्जा के स्रोत अत्यन्त सीमित हैं ।

दाबानुकूलित भारी पानी रिएक्टरों में भारी पानी की आवश्यकता प्रारम्भिक चार्जीकरण प्रक्रिया के साथ-साथ भरण आदि अन्य आवश्यकताओं के लिए भी होगी । 235 मेगावाट तथा 500 मेगावाट क्षमता वाले रिएक्टरों में प्रारंभिक आवश्यकता क्रमशः 255 टन तथा 485 टन होगी । मेक-अप के लिए भारी पानी की वार्षिक आवश्यकता क्रमशः 8 टन एवं 15 टन प्रति वर्ष होगी । नाभिकीय ऊर्जा से 10,000 मेगा वाट विद्युत ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कुल अनुमानित भारी पानी की आवश्यकता लगभग 13000 टन होगी तथा भारी पानी की इस आवश्यकता की आपूर्ति के लिए कई भारी पानी संयन्त्रों की आवश्यकता होगी ।

जैसा कि पहले बताया गया है, कि भौतिक और रासायनिक गुणों में भारी पानी और साधारण पानी में कोई अधिक अन्तर नहीं है, फिर भी भारी पानी की समृद्धि के लिए इन्हीं गुणों के सीमित अन्तर का उपयोग करना पड़ता है । शुद्धता से इसू आइसोटोप को बड़ी मात्रा में अलग करने के लिए अनेक चरण आवश्यक हैं ।

भारी पानी के समृद्धिकरण और उत्पादन के लिए निम्न विधियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं :

1. आसवन प्रक्रिया
2. विद्युत विश्लेषण प्रक्रिया
3. रासायनिक विनिमय प्रक्रिया

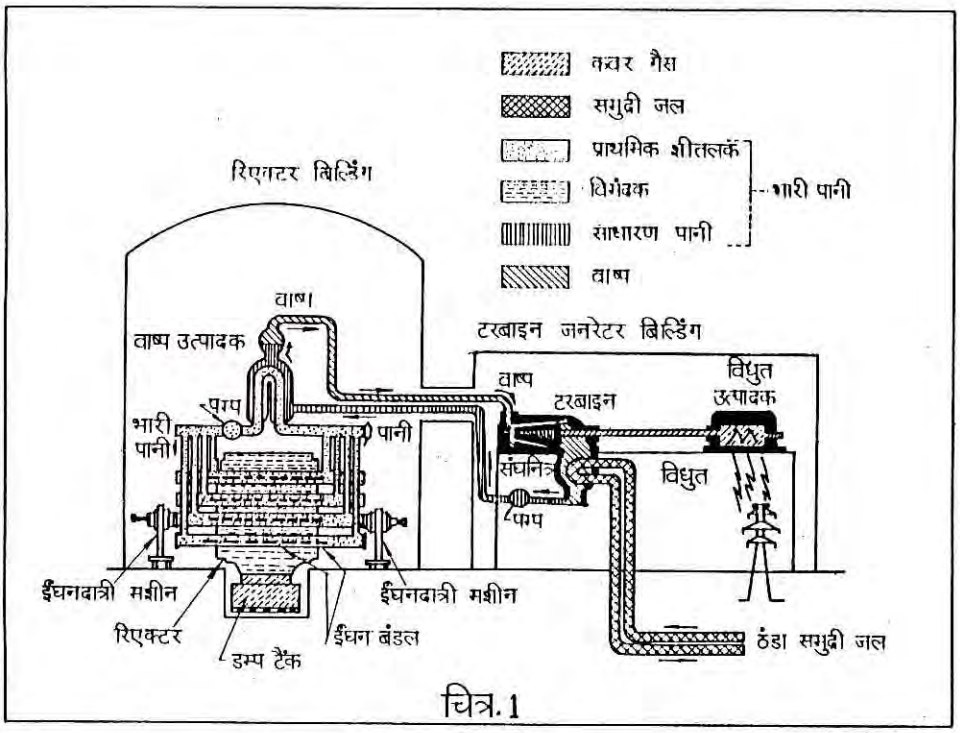

चित्र. 1

P H W R-परमाणु विद्युत केन्द्र

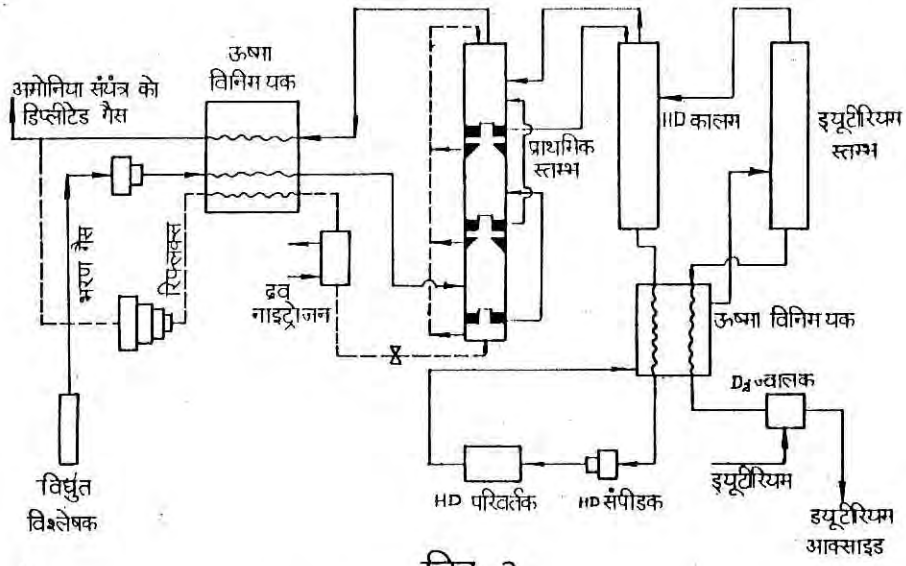

चित्र - 2

आरेखीय प्रवाह चित्र भापास नंगल

हमारे देश का अधिकतम भारी पानी उत्पादन रासायनिक विनिमय प्रक्रिया द्वारा ही किया जाता है । रासायनिक विनिमय में H_2S-H_2O तथा NH_3-H_2 ही मुख्य स्रोत हैं । विद्युत विश्लेषण द्वारा भारी पानी उत्पादन के लिए यह आवश्यक है कि प्रचुर मात्रा में सस्ती विद्युत उपलब्ध हो। इस प्रकार H_2S - H_2O विनिमय विधि के लिए अधिक मात्रा में पानी और वाष्प की उपलब्धि आवश्यक है । अतः यह संयंत्र किसी नदी या बड़ी नहर के किनारे ही लगाया जा सकता है, जहाँ कोयले की खान भी समीप हो,जिस से ब्वायलर द्वारा भाप प्राप्त की जा सके, या फिर भाप का कोई अन्य स्रोत मौजूद हो।

अमोनिया हाईड्रोजन विनिमय विधि के संयंत्र के लिए अमोनिया और हाईड्रोजन का होना अत्यंत आवश्यक है । अतः इसे उर्वरक संयंत्र के पास ही लगाया जाता है ।

विभिन्न भारी पानी संयंत्रों का वर्णन

1. **नंगल भारी पानी संयंत्र** : इस संयंत्र में पानी का अपघटन और बाद में ड्यूटीरियम के अधिक सांद्रण के लिए द्रव अमोनिया का आसवन प्रयोग में लाया जाता है । पानी के अपघटन से मिली हाईड्रोजन गैस अपघटकों के कासकेडों में नियोजित कर ड्यूटीरियम में समृद्ध की जाती है। शुद्धिकरण के बाद इसे द्रव में बदला जाता है। अधिक समृद्धिकरण के लिए इसे तीन चरणों वाले आसवन स्तंभों से गुजारा जाता है । इस संयंत्र का एक सरल प्रवाह चित्र-2 में दिया गया है ।

   ये संयंत्र 1962 से अच्छी तरह से काम कर रहा है। इसकी उत्पादन क्षमता 14 टन भारी पानी प्रति वर्ष है। इस विधि से अधिक उत्पादन इसलिए नहीं किया जा रहा है क्योंकि इसमें बिजली अधिक खर्च होती है ।

2. **कोटा भारी पानी संयंत्र** : यह संयंत्र प्राथमिक समृद्धिकरण के लिए H_2S-H_2O द्वि-तापीय विनिमय विधि पर आधारित है,जहां पानी को स्वाभाविक 144 PPM से 15% तक भारी पानी में समृद्ध किया जाता है । यह इकाई तीन चरणों वाले कासकेड में बनाई गई है और जिसे चित्र-3 में दिखाया गया है । इस इकाई से समृद्ध भारी पानी से हाईड्रोजन सल्फाइड गैस निकालने के बाद अधिक समृद्धिकरण के लिए इसे आसवन इकाई में भेजा जाता है और इस 5 चरण वाली इकाई में 6 स्तंभ हैं । इस इकाई में 1985 से भारी पानी का उत्पादन हो रहा है । इसकी उत्पादन क्षमता 85 टन प्रति वर्ष है ।

   इस संयंत्र के लिए हाईड्रोजन सल्फाइड गैस का उत्पादन भी संयंत्र में ही किया जाता है तथा भाप और बिजली की आवश्यकता की पूर्ति राजस्थान परमाणु बिजली घर से की जाती है ।

   भाप का एक भाग प्रक्रम द्रव (Process Fluid) के रूप में और शेष मुख्य रूप से प्रक्रम को गर्म रखने के काम में आता है । प्रक्रम द्रव के रूप में प्रयोग में लाई गई भाप के बराबर ब्वायलर भरण जल,भारी पानी संयंत्र के एक इकाई में उत्पादित होता है । ऊष्मा विनिमयक के खराब हो जाने पर अपरोक्ष रूप से गर्म करने के लिए प्रयोग में लाई भाप के इस भाग में H_2S गैस मिल जाने की संभावना होती है । आर.ए.पी.एस. को दूषित द्रव न भेजने के लिए कोटा भारी पानी संयंत्र में एक ISG इकाई लगाई गई है । जिस में आर.ए.पी.एस. से प्राप्त प्राथमिक भाप से कम दबाव वाली गौण भाप उत्पन्न की जाती है और यह गौण भाप भारी पानी संयंत्र के प्रक्रम द्रव को गर्म करने के काम में लाई जाती है । इस प्रकार राजस्थान परमाणु बिजली घर को भेजा गया द्रव ISG से प्राप्त द्रव व भारी पानी संयंत्र के पूर्तिकारक ब्वायलर भरण जल का मिश्रण होता है । इस तरह इस द्रव के H_2S गैस से दूषित होने की संभावना नहीं के बराबर होती है। चित्र-3ख में कोटा भारी पानी संयंत्र का विहंगम चित्र दिखाया गया है। इस संयंत्र में रासायनिक विनिमय दो भिन्न तापक्रमों पर होता है। 30^0C पर ड्यूटीरियम का गैस से पानी में स्थानांतर होता है जब कि 130^0C तापक्रम पर ड्यूटीरियम का द्रव से समृद्धिकरण होता है। इस संयंत्र में कोल्ड टावर और हाट टावर का दाब क्रमश : 20 kg और 21 kg प्रति वर्ग सें.मी. होता है।

3. **बड़ौदा भारी पानी संयंत्र** : इस संयंत्र में एक तापीय NH_3 - H_2 विनिमय विधि प्रयोग में लाई जाती है। चित्र-4 में इसका सरल प्रवाह चित्र दिखाया गया है। उर्वरक से प्राप्त 650 ata वाली सिन गैस से ड्यूटीरियम निकाला

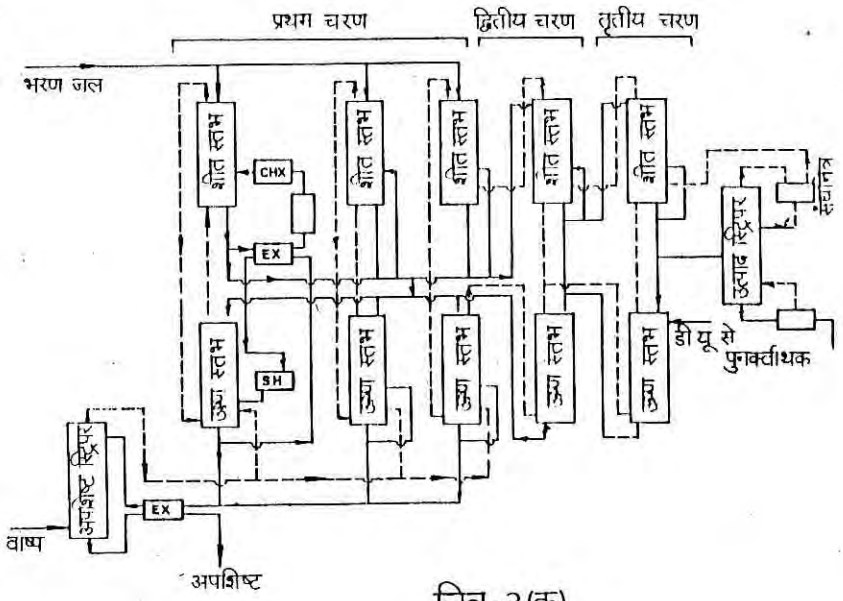

चित्र-3(क)

सरल प्रवाह चित्र भापांस कोटा

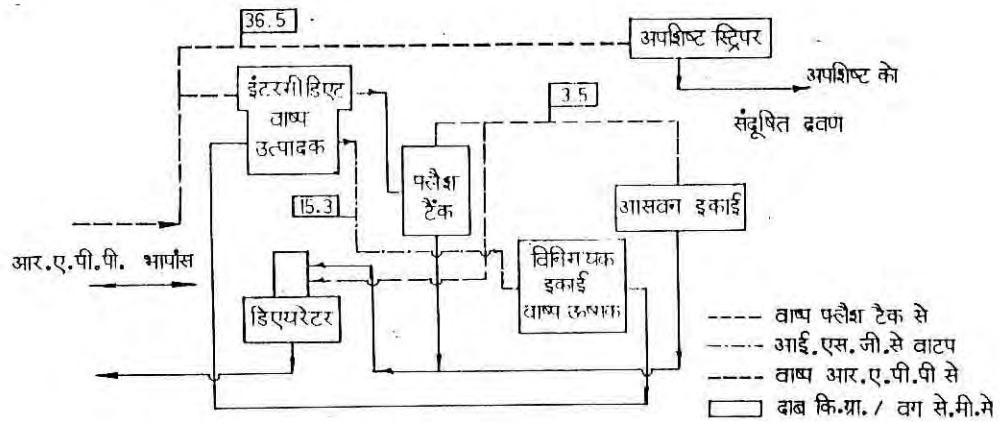

चित्र-3(ख)

आरेखीय वाष्प प्रवाह चित्र भापांस कोटा

जाता है । ठंडी और शुद्ध की गई सिन गैस एक्स्ट्रैक्शन वाले हिस्से से गुजारी जाती है, जहाँ वह ऊपर से आती द्रव अमोनिया के संसर्ग में आती है और अपने ड्यूटिरियम गैस को द्रव में स्थानांतरित कर देती है । सी.टी.1 से निकली समृद्ध अमोनिया सी.टी.2, सी.टी.3 और सी.टी.4 में भेजी जाने पर 99.2% ND_3 में समृद्ध हो जाती है । बाद में इसे भारी पानी में बदला जाता है । इस संयंत्र में बहु-भित्तीय एक्स्टैक्शन टावर का भार लगभग 600 टन, लम्बाई 30 मीटर, और व्यास 2.5 मीटर है । इसको बड़ौदा तक ले जाने के लिए विशेष प्रयास किए गए थे । यह संयंत्र वर्ष 1977 से भारी पानी का उत्पादन कर रहा है । इसकी उत्पादन क्षमता 45 टन प्रति वर्ष है ।

4. **तूतीकोरिन भारी पानी संयंत्र** : इस संयंत्र का सिद्धान्त भी बड़ौदा के जैसा ही है लेकिन यहाँ प्रयोग में आने वाली सिन गैस का दाब 200 कि.ग्रा. प्रति वर्ग से.मी. है । इस कारण यह बड़ौदा संयंत्र से बड़ा है । यह संयंत्र 1978 से लगातार उत्पादन कर रहा है । इसकी उत्पादन क्षमता 49 टन प्रति वर्ष है ।

5. **तलचर भारी पानी संयंत्र** : इस संयंत्र में अमोनिया हाईड्रोजन द्वितापीय रासायनिक विनिमय विधि का प्रयोग होता है (चित्र-5)। इस संयंत्र को तीन भागों में बांटा जा सकता है :

(1) **शुद्धिकरण और अंतरण चरण** : उर्वरक संयंत्र द्वारा प्राप्त सिन गैस को पहले शुद्ध किया जाता है, उसके बाद उसको स्थानांतरण स्तंभ में भेजा जाता है । इस स्तंभ में ड्यूटिरियम का स्थानांतरण सिन गैस से द्रव अमोनिया में होता है ।

(2) **समृद्धि चरण** : समृद्धि इकाई में तीन चरण वाला एक कासकेड होता है, अन्तर केवल इतना है कि इसके पहले चरण में एक ठंडा और एक गर्म हिस्सा स्ट्रिपिंग स्तम्भ में अध्यारोपित होता है । यह परिवर्तन ड्यूटीरियम की अधिक उपलब्धि के लिए किया गया है । समृद्धि चरण के उत्पादक के रूप में इस अमोनिया का एक हिस्सा अन्तिम सांद्रण चरण में भेजा जाता है, जहाँ उस से नाभिकीय ग्रेड वाले भारी पानी का उत्पादन होता है ।

(3) **अन्तिम सांद्रण चरण** : यहां द्रव अमोनिया में उत्प्रेरक को अलग करने के बाद उसे पानी के संसर्ग में लाया जाता है । इस तरह ड्यूटिरियम का एक हिस्सा अमोनिया से पानी में स्थानान्तरित हो जाता है। इस पानी से अमोनिया को अलग करने के पश्चात् आसवन द्वारा नाभिकीय ग्रेड वाला भारी पानी प्राप्त किया जाता है । चित्र-5 में तलचर भारी पानी संयंत्र का सरल प्रवाह चित्र दिखाया गया है । यह संयंत्र 1985 से उत्पादन कर रहा है । इसकी वार्षिक उत्पादन क्षमता 62 टन है बशर्ते एफ.सी.आई. तलचर से 230 ata पर 99,600 NM^3/hr की लगातार दर से भरण सिन गैस की आपूर्ति की जाए । भरण सिन गैस की मात्रा कम होने पर भारी पानी का उत्पादन उसी अनुपात में कम हो जाएगा ।

उर्वरक संयंत्र के साथ NH_3-H_2 विनिमय विधि पर आधारित संयंत्र के गठन में भरण सिन गैस में ड्यूटीरियम की मात्रा भरण सिन गैस की शुद्धता, एक तापीय विनिमय विधि, अतिरिक्त अमोनिया की संश्लेषण क्षमता की आवश्यकता और भारी पानी संयंत्र में दाब ह्रास का भी ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि इन संयंत्रों की उत्पादन क्षमता इन गुणों पर विशेष रूप से निर्भर करती है ।

6. **थाल भारी पानी संयंत्र** : यह संयंत्र भी तूतीकोरिन संयंत्र की भांति ही काम करता है । यह संयंत्र 1987 से लगातार उत्पादन कर रहा है । इसकी वार्षिक उत्पादन क्षमता 110 टन भारी पानी है ।

7. **हजीरा भारी पानी संयंत्र** : इस संयंत्र की कार्य विधि भी थाल संयंत्र की भांति है। यह संयंत्र कृ. भ. को. के सहयोग से बनाया जा रहा है । 1989 के अन्त तक इस में भारी पानी का उत्पादन शुरू हो जाएगा, ऐसी सम्भावना है । इसकी उत्पादन क्षमता भी थाल संयंत्र की भांति 110 टन प्रति वर्ष होगी ।

8. **भारी पानी संयंत्र, मनुगुरू** : यह संयंत्र कोटा भारी पानी संयंत्र की भांति ही H_2S - H_2O द्वितापीय रासायनिक विनिमय विधि पर आधारित है । अन्तर केवल इतना है कि 1990 में पूरा होने पर इसकी उत्पादन क्षमता 185 टन प्रति वर्ष होगी और भाप तथा बिजली की

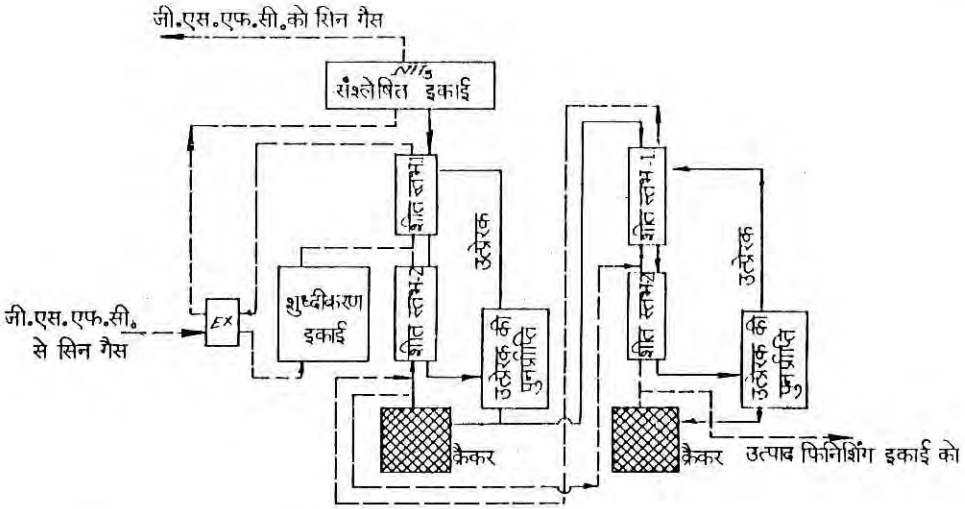

चित्र - 4

आरेखीय प्रवाह चित्र भापांस बड़ौदा / तूतीकोरिन

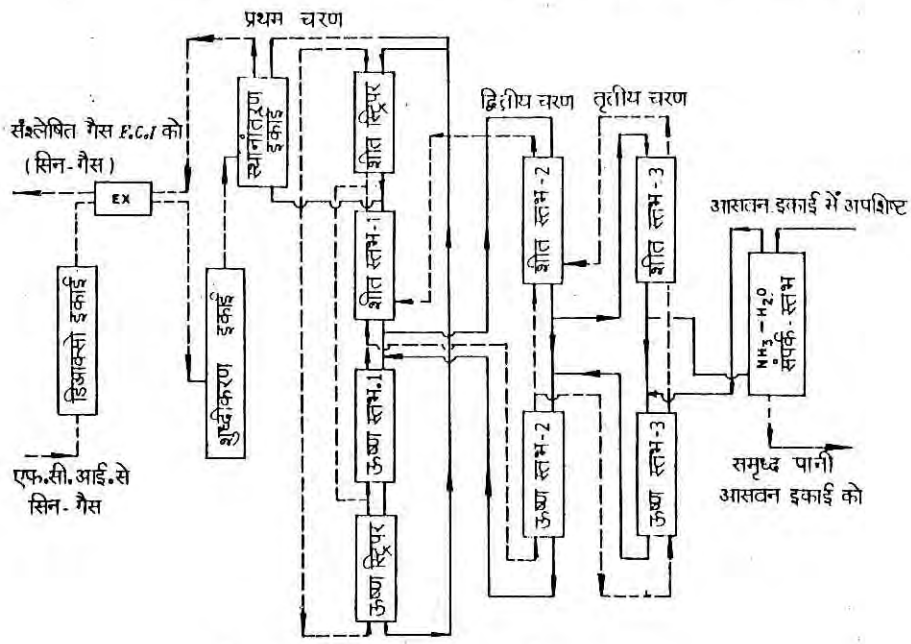

आरेखीय प्रवाह चित्र भापांस, तलचर

चित्र - 5

आवश्यकता कैप्टिव संयंत्र द्वारा जो मुख्य संयंत्र के पास ही है, उस से पूरी की जाएगी। इस संयंत्र में मुख्य क्रिया के लिए दो इकाईयाँ लगाई गई हैं, जबकि उपयोगिता (यूटिलिटि) इकाई दोनों यूनिटों के लिए केवल एक ही है।

कैप्टिव ऊर्जा संयंत्र के लिए कोयला समीप की भंडारगुड़ा (मनुगुरू) खान से प्राप्त किया जाता है। इस इकाई के 1990 तक पूरा हो जाने की सम्भावना है और इसकी उत्पादन क्षमता 185 टन भारी पानी प्रति वर्ष होगी।

भविष्य के भारी पानी संयंत्रों में सम्भावित सुधार

अभी हाईड्रोजन सल्फाइड गैस के उत्पादन के लिए जिसकी आवश्यकता H_2S-H_2O विनिमय विधि में होती है, पारम्परिक Na_2S और सल्फ्यूरिक एसिड की प्रतिक्रिया प्रयोग में लाई जाती है। हाईड्रोजन सल्फाइड गैस उत्पादन के लिए हाईड्रोजन गैस के वातावरण में सल्फर को जला कर उत्पन्न करने की सम्भावना पर अध्ययन किया जा रहा है।

इसी प्रकार NH_3-H_2 विनिमय विधि की उर्वरक संयंत्र पर निर्भरता को दूर करने के लिए भी अध्ययन हो रहा है। भविष्य में बनने वाले भारी पानी संयंत्रों में इस प्रक्रिया का प्रयोग किया जाएगा। अन्य विधियों पर भी काफी काम हो रहा है और यदि वह प्रक्रिया व्यवहारिक सिद्ध हुई तो भविष्य में इसे भी प्रयोग में लाया जा सकेगा।

ऊपर बताए गए भारी पानी संयंत्रों की कुल उत्पादन क्षमता जब सब तैयार हो जाएंगे तो लगभग 650 टन प्रति वर्ष होगी। 10,000 मेगावाट नाभिकीय विद्युत ऊर्जा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भविष्य में 8वीं और 9वीं पंचवर्षीय योजनाओं में और बहुत से भारी पानी संयंत्र लगाने पड़ेंगे। ये H_2S-H_2O और NH_3-H_2/H_2O की रासायनिक विनिमय विधि पर आधारित होंगे, और शताब्दी के अन्त तक उत्पादन करना शुरू कर देंगे। इन सभी भारी पानी इकाईयों के पूरी तरह उत्पादन में आने के बाद हम 10,000 मेगावाट विद्युत ऊर्जा के उत्पादन के लिए आत्मनिर्भर हो जाएंगे।

आभार

अन्त में लेखकगण, श्री. एस. एम. सुन्दरम्, प्रधान कार्याध्यक्ष, भारी पानी बोर्ड का आभार प्रकट करते हैं जिनके निर्देशन और सहयोग के बिना ये वार्ता इस रूप में प्रस्तुत न हो पाती।

अनुसंधान रिएक्टर प्रचालन

एस. के. शर्मा
सह निदेशक प्रचालन एवं अनुरक्षण वर्ग
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, बंबई.

नाभिकीय रिएक्टर प्रचालन के क्षेत्र में भारत ने 1956 में प्रवेश किया । उस वर्ष हमारे प्रथम अनुसंधान रिएक्टर 'अप्सरा' ने कार्य करना शुरु किया था । तत्पश्चात् 1960 में 'सायरस' व 1961 में 'जर्लिना' का प्रचालन प्रारंभ हुआ । भारी पानी मंदित 'सायरस' रिएक्टर प्रचालन के अनुभवों ने हमारे आगामी नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम को, जो मुख्यतः दाबित भारी पानी रिएक्टरों पर आधारित है, सुदृढ़ नींव प्रदान की । इसके फलस्वरूप पूर्णतः स्वदेशी तकनीकी पर आधारित 100 मेगावाट अनुसंधान रिएक्टर 'ध्रुव' का अभिकल्पन व निर्माण किया गया । इस रिएक्टर ने वर्ष 1985 में कार्य करना शुरु किया ।

इन रिएक्टरों के प्रचालन अनुभव हमारे परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं । इनमें हमें कार्मिकों के प्रशिक्षण में, प्रारंभिक न्यूट्रॉन स्रोतों के उत्पादन में और रिएक्टर ईंधन के किरणीयन परीक्षणों इत्यादि में बहुत सहायता मिली है ।

इस वार्ता में इन अनुसंधान रिएक्टरों के प्रचालन अनुभवों का वर्णन किया गया है ।

भारत का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम व राजस्थान परमाणु बिजलीघर प्रचालन का अनुभव

जी. वी. नाडकर्णी
परियोजना निदेशक,
राजस्थान परमाणु विद्युत परियोजना - 3 एवं 4 , एवं
निदेशक, पर्यावरण एवं जन जागरूकता

विद्युत उत्पादन भारत के औद्योगीकरण व कृषि उत्पादकता का मूल आधार है। देश में बिजली उत्पादन की स्थिति सुखद नहीं है और बिजली उत्पादन के सभी स्रोतों का विकास हमारी पहली आवश्यकता है ।

देश में बिजली बनाने के पारंपरिक साधन ताप व पन बिजलीघर एक पूर्ण औद्योगिक भारत की दीर्घकालीन विद्युत आवश्यकता को पूरा करने में असमर्थ हैं । इन साधनों के असमान वितरण व इनसे होने वाले पर्यावरण दुष्प्रभावों को देखते हुए ऐसे क्षेत्रों के लिए जो इन दोनों स्रोतों से दूर हैं, नाभिकीय ऊर्जा एक विकल्प है। अतः ऊर्जा के इन तीनों साधनों के समन्वित विकास की आवश्यकता है ।

यह डा. भाभा की दूरदर्शिता व पं. नेहरू के उत्साहपूर्ण संरक्षण का परिणाम था कि भारत ने विकासशील देश होते हुए भी परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में चन्द विकसित देशों के साथ कदम रखा ।

भारत में परमाणु विद्युत निर्माण का सूत्रपात वर्ष 1969 में तारापुर में अमेरिका के सहयोग से निर्मित देश के प्रथम नाभिकीय गृह में हुआ। पर इस रिएक्टर में संवर्धित यूरेनियम का उपयोग ईंधन के लिए होने के कारण जो आयात करना पड़ता है, यह देश के आत्मनिर्भरता के दीर्घकालिक उद्देश्यों के अनुरूप न था ।

भारत ने अपने परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के लिए दाबित भारी पानी रिएक्टर जिसमें प्राकृतिक यूरेनियम, जो देश में उपलब्ध है, का प्रयोग ईंधन के लिए होता है, को चुना ।

इस कार्यक्रम की शुरूआत भारत ने कनाडा के सहयोग से राजस्थान में चंबल नदी के किनारे राणा प्रताप सागर बांध पर 220 मेगावाट की दो इकाइयां लगाकर की । दोनों इकाइयों में विद्युत उत्पादन क्रमशः 1972 एवं 1980 में शुरू हुआ । ये अपने प्रकार के दुनिया के प्रथम रिएक्टरों में हैं । कुछ तकनीकी कारणों व अनुभव न होने से प्रथम इकाई का विद्युत उत्पादन संतोषपूर्ण न रहा पर इसके अनुभव से लाभ उठाकर तथा अनेक परिवर्तन कर दूसरी इकाई ने विद्युत उत्पादन के रिकार्ड स्थापित किए हैं ।

परमाणु विद्युत गृह का संक्षिप्त विवरण

ईंधन के लिए बंडलों के रूप में यूरेनियम डाईआक्साईड का प्रयोग होता है । ईंधन व माडरेटर भारी पानी निश्चित विधि से कैलेन्ड्रिया जो एक बेलनाकार पात्र है, के अन्दर स्थित हैं। कैलेन्ड्रिया की 306 जिरकालाय नलियों के बीच 306 दाब नलियां होती हैं जिनमें ईंधन होता है। इसमें प्रवाहित होने वाला कूलेंट ऊष्मा लेकर बायलर में जाता है तथा साधारण पानी से भाप बनाता है, जो टर्बो जनरेटर को घुमाकर बिजली बनाती है। ये सभी प्रणालियां एक गोल मोटी कंकरीट की दीवार में स्थित होती हैं जो एक सुरक्षा कचव है ।

आपरेशन संबंधी चुनौतियाँ

शुरू के दिनों में ग्रिड छोटी होने से स्थिति बहुत खराब थी एवं रिएक्टर सिस्टम व उपकरण पावर सप्लाई के लिए संवेदनशील होने के कारण अनेक बार रिएक्टर ट्रिप होता था। जीनान पायजन के कारण यदि आधा घंटे के भीतर फिर चालू न हो सके तो 36 घंटों के लिए रिएक्टर पायजन आउट होता है। ग्रिड में किए परिवर्तनों से अभी स्थायित्व आया है ।

ऐसे क्षेत्रों के उपकरणों की अवस्था का ध्यान रखना होता है जहां रिएक्टर चलते समय पहुंच निषेध है ।

भारी पानी जो बहुमूल्य है, के हवा में रिसाव को ड्रायर्स द्वारा सोखकर तथा डिस्टिल कर पुनः प्रयोग में लाया जाता है। रिएक्टर सिस्टमों का कड़ा रासायनिक नियंत्रण रखना पड़ता है।

सुरक्षा

परमाणु गृह का सिद्धांत है। सुरक्षा पहले व बिजली उत्पादन बाद में। बिजलीघर डिजाईन में सुरक्षा के निम्नलिखित प्रावधान हैं :

1. रिएक्टर रेगूलेशन व प्रोटेक्शन सिस्टम
2. कोर कूंलिग जो हमेशा बनाये रखी जा सके
3. डाउजिंग सिस्टम जो अत्यधिक रिसाव अवस्था में जल वृष्टि करके रिएक्टर बिल्डिग को अधिक भाप दबाब से बचाता है
4. पावर सप्लाई के बहुत से साधन
5. **कन्टेनमेंट**: ईंधन को वातावरण में आने से रोकने के लिए चार स्तरीय अवरोध है । ईंधन, ईंधन पर परत, कूलेंट सिस्टम तथा अंत में रिएक्टर बिल्डिग ।

इसके अलावा सुरक्षा के प्रशासनिक पहलू हैं । अनुचालन के तरीके, नीतिया व सिद्धांत, तकनीकी आडिट, तकनीकी स्पेसिफिकेशन, विभिन्न स्तर पर जांच कमेटियां, दुर्घटनाओं से निपटने के लिए ड्रिल की जाती है व स्थानीय प्रशासन से सहयोग किया जाता है ।

पर्यावरण की सदैव जांच की जाती है एवं अभी तक इस संबंध में कोई दुर्घटना नहीं हुई है । पर्यावरण स्वच्छ व हानिरहित है। विकिरण के अन्तर्राष्ट्रीय मापदंडों का कड़ाई से पालन किया जाता है।

मेन्टेनेन्स अनुभव

विकिरण प्रतिबंधों व उपकरणों के पास होने से मेंटेनेंस एक दुष्कर कार्य है। इसके अलावा सभी कल पुर्जो का देश में उपलब्ध न होना एक बड़ी समस्या थी। इन सब कठिनाइयों के बावजूद सुरक्षा अवयवों को सर्वोपरि मानकर मेंटेनेंस के स्तर पर कोई समझौता नहीं किया जाता है। एण्डशील्ड सिस्टम में रिसाव को रिमोट मेन्टेनेंस द्वारा ठीक करके एक बड़ी चुनौती पर विजय प्राप्त की गई है ।

मैन पावर व प्रशिक्षण

परमाणु विद्युत केन्द्र के सुरक्षित आपरेशन की आवश्यकता के लिए हर स्तर पर काम करने वाले लोगों के समुचित प्रशिक्षण का पूरा ध्यान रखा जाता है। पुर्नप्रशिक्षण के लिए एक क्वालिफिकेशन इन्सेंटिव स्कीम भी लागू की गई है जो सुरक्षा के हर दृष्टिकोण को ध्यान में रख कर बनायी गई है।

राजस्थान परमाणु गृह ने देश के परमाणु विद्युत कार्यक्रम के विकास के लिए एक तकनीकी आधार दिया है। इसके अनुभव व इसके द्वारा दिए विशेषज्ञों का लाभ अब देश के अगले परमाणु विद्युत केन्द्रों को मिल रहा है।

न्यूट्रान पुंज अनुसंधान

बी. ए. दासण्णाचार्य
निदेशक, ठोस अवस्था एवं वर्णक्रमदर्शिकी वर्ग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बंबई - 400 085.

नाभिकीय रिएक्टर ही नाभिकीय ऊर्जा का मूल स्रोत है। ऊर्जा के साथ-साथ रिएक्टर में न्यूट्रान का भी जन्म होता है। परमाणु नाभिक के विखंडन की क्रिया में न्यूट्रान उत्पन्न होते हैं । न्यूट्रान पुंज तापीय नाभिकीय रिएक्टर में नलियों के जरिए रिएक्टर के बाहर निकलती है और तत्पश्चात उनका उपयोग मूल अनुसंधानों के लिए किया जाता है। पिछले तीस वर्षों में इस प्रकार के कई अनुसंधान भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में किए गए हैं । इस लेख में इन्हीं अनुसंधानों की विधि और उनके कुछ परिणामों पर प्रकाश डाला जाएगा ।

न्यूट्रान पुंज अनुसंधान के विषय पर चर्चा करने के पहले यह आवश्यक है कि हम न्यूट्रान की उन विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर लें जिनका इन अनुसंधानों में विशेष महत्व है ।

नाभिकीय रिएक्टर में यूरेनियम के न्यूक्लियस के विखंडन से न्यूट्रानों का जन्म होता है। इनका भार लगभग 10^{-24} ग्राम और इनकी त्रिज्या लगभग 10^{-13} सें.मी. होती है। यद्यपि इनमें चार्ज नहीं होता तथापि इनमें चुम्बकत्व होता है । एक न्यूट्रान तीन क्वार्कों के मेल से बनता है। इन सभी कारणों से न्यूट्रानों को एक नाभिकीय कण माना गया है ।

किन्तु आज से लगभग 60 वर्ष पूर्व जब कि मुक्त न्यूट्रान केवल पाँच वर्षीय शिशु था, फ्रांस के एक राजकुमार लूई दि ब्रागली इस अद्‌भुत निष्कर्ष पर पहुँचे कि प्रत्येक कण के साथ एक तरंग भी जोड़ी जा सकती है । कण को तरंग और तरंग को कण के रूप में समझा जा सकता है, इस द्वैतभाव को आज सभी मान्यता देते हैं । प्रकाश की किरणों को "फोटॉन" कणों के रूप में समझना आज स्वाभाविक है । न्यूट्रान, इलेट्रान, फोटॉन सभी के दो रूप होते है - कभी हम उन्हें कण के रूप में तो कभी तरंग के रूप में देखते हैं । इन तीन कणों / तरंगो के माध्यम से हम संघनित पदार्थों के विभिन्न पहलुओं की जाँच कर सकते हैं ।

यह अनुसंधान हम कैसे करते हैं ! अनुसंधान का अर्थ है सूक्ष्म रूप से देखना या परीक्षण करना। देखने की क्रिया में प्रकीर्णन का विषेश स्थान है। जब प्रकाश की किरणें किसी पदार्थ से प्रकीर्णित होकर हमारी आँखों पर पड़ती हैं तब उस पदार्थ को हम देख पाते हैं। वास्तविकता तो यह है कि प्रकाश के कणों का संसूचन हमारे नेत्रों द्वारा होता है और हमें बोध होता है उस वस्तु का जिससे प्रकाश प्रकीर्णित होता है। इसी प्रकार न्यूट्रान के प्रकीर्णन और संसूचन से भी किसी वस्तु विशेष के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। न्यूट्रान उपलब्ध होने के बाद प्रकीर्णन और संसूचन के लिए विशेष विवर्तनमापी तथा वर्णक्रममापी यंत्रों के निर्माण की आवश्यकता होती है और प्रकीर्णन की विधि का ज्ञान भी आवश्यक है ।

सारांश यह हुआ कि न्यट्रान का जनन रिएक्टर में होता है। न्यूट्रान पुंज, रिएक्टर के बाहर, संघनित पदार्थ के अनुसंधान के हेतु उनसे प्रकीर्णित किए जाते हैं और विवर्तन मापियों तथा वर्णक्रममापियों की सहायता से उनका ससूंचन तथा मापन किया जाता है। इस मापन के फलस्वरूप संघनित पदार्थों की संरचना और उनके परमाण्विक कम्पन पर ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

ट्राम्बे के रिएक्टर

ट्राम्बे में 1956 में अप्सरा रिएक्टर बनाया गया और इसके कुछ ही बाद न्यूट्रान पुंज अनुसंधान का शुभारंभ हुआ। 1961 में अप्सरा से अधिक शक्तिशाली रिएक्टर साइरस का निर्माण हुआ और न्यूट्रान पुंज अनुसंधान भी अधिकतर इसी रिएक्टर के न्यूट्रान से किया जाने लगा। अनेक विवर्तनमापियों और वर्णक्रममापियों का निर्माण इस दौर में किया गया। अब हम इस अनुसंधान के तीसरे स्तर पर हैं क्योंकि साइरस से भी अधिक शक्तिशाली ध्रुव रिएक्टर हमे अब उपलब्ध हो चुका है।

अभियांत्रिकीकृत सुरक्षा

2. परमाणु भट्टी के अभिकल्पन व निर्माण में सुरक्षा की युक्तियों को अपनाया जाता है जिनसे विकिरण व विकिरण उत्सर्जक पदार्थ परमाणु संयंत्र से बाहर न निकल सकें। सामान्य प्रचालन के दौरान तो इन पर पूरा नियंत्रण रहता ही है, भट्टी की बनावट ऐसी निर्मित की जाती है कि किसी असामान्य या दुर्घटनात्मक परिस्थिति में भी विकिरण उत्सर्जक पदार्थ संयंत्र के सुरक्षा आवरणों में ही समाहित रहें, पर्यावरण में न फैलने पायें। परमाणु विद्युत घर की सरली कृत कल्पना चित्र-1 में दिखाई गई है - यह स्पष्ट करने के लिए कि सुरक्षा के कितने आवरण इसमें समाहित हैं।

परमाणु ईंधन यूरेनियम आक्साईड की ठोस व मजबूत टिकियों के रूप में बना होता हैं। ये टिकियां जिर्कोलाय नामक मिश्रधातु की मजबूत नलियों के अन्दर बन्द रहती हैं। इन नलिकाओं को ईंधन नली कहा जाता है। बहुत सी नलियों को एक साथ बांधकर ईंधन बंडल बनाये जाते हैं। ये ईंधन बंडल शीतलक नलिकाओं के अन्दर बन्द रहते हैं। इन शीतलक नलियों में भारी पानी बहाया जाता है जो कि जलते हुए ईंधन बंडल की गर्मी को लेकर बाइलरों में जाता है और वहाँ पानी को गर्म करके भाप में परिवर्तित करता है। यही भाप टरबाइन को चलाती है जिससे बिजली पैदा की जाती है।

जब परमाणु भट्टी में यूरेनियम ईंधन जलता है तो उससे विखंडन तत्व पैदा होते हैं। वे रेडियो सक्रिय होते हैं। यूरेनियम ईंधन टिकियों की विशेषता यह है कि वे जलने पर कोयले की तरह राख में नहीं बदलतीं बल्कि ज्यों की त्यों ठोस व घनी बनी रहती हैं। यही वजह है कि अधिकाधिक विखंडन तत्व टिकियों में ही जमे रहते हैं। इस तरह विकिरण उत्सर्जक विखंडन तत्वों के लिए स्वयं परमाणु ईंधन ही पहला बचाव आवरण है। जो कुछ थोड़े बहुत विखंडन तत्व ईंधन टिकियों से बाहर निकलते हैं, वे जिर्कोलाय मिश्रधातु के आवरण (क्लैडिंग) में रूक जाते हैं। कुछ छिद्रों व जोड़ों से जो विखंडन तत्व क्लैडिंग से बाहर निकलने में सफल होते हैं वे शीतलक नलियों के अन्दर रह जाते हैं। चूंकि दाबित भारी पानी परमाणु भट्टियों की शीतलक व्यवस्था बन्द चक्र में होती है, इन बचे खुचे बिखंडन तत्वों का बाहर निकलना आम तौर पर सम्भव नहीं है। इस तरह हमने देखा कि सर्व प्रथम स्वयं ईंधन टिकियां फिर ईंधन आवरण (क्लैडिंग) और फिर शीतलक नलियाँ एक के बाद एक, विखंडन तत्वों के बाहर निकलने में रूकावट पैदा करती हैं।

उपर्युक्त पंक्तियों में सामान्य प्रचालन के दौरान प्रभावित सुरक्षा उपायों का वर्णन किया गया है। यदि किसी प्रकार की असामान्य स्थिति पैदा हो जाय, जैसे कि शीतलक नली में छेद हो जाना या उसका टूट जाना, जिससे ईंधन सीमा से अधिक गरम हो उठे या पिघलने की स्थिति में आ जाय, तो स्वचालित विशेष यंत्र काम करने लगते हैं, ताकि ईंधन पिघले नहीं। इन व्यवस्थाओं के मुख्य अंग हैं - 1) भट्टी का तुरन्त बन्द पड़ जाना (शट डाउन सिस्टम), 2) आपात कालीन क्रोड शीतलन व्यवस्था। यदि शीतलक की बृहत् हानि हो जाय और विकिरण उत्सर्जक पदार्थों को साथ लेकर गर्म भाप निकलने लगे तो परमाणु संयंत्र भवन के अन्दर दबाव बढ़ने से रोकने के लिए जो विशेष यंत्र लगे होते है (दबाव घटाने के उपक्रम) वे स्वचालित अपना कार्य आरम्भ कर देते हैं।

इन सब उपायों और अवरोधों के बावजूद यदि कुछ विकिरण उत्सर्जक पदार्थ भट्टी से बाहर निकल भी जायें, तो संयंत्र का सुरक्षा आवरण (कन्टेनमेंट) उसे अपने अन्दर समाहित रख लेता है। हमारे नये परमाणु संयंत्रों को दोहरे सुरक्षा आवरणों के साथ बनाया जा रहा है, ताकि यदि एक आवरण में कोई खामी पैदा हो जाय तो दूसरा आवरण विकिरण उत्सर्जन पदार्थों को पर्यावरण में जाने से रोक सके।

उपर्युक्त विवरण से यह साफ जाहिर होता है कि हमारे परमाणु संयन्त्रों में सुरक्षा के अनेकानेक अभियांत्रिकी कृत उपाय अपनाये गए हैं। सभी उपाय मिलाकर गहन सुरक्षा प्रदान करते हैं, इनमें से प्रत्येक उपक्रम की विफलता की संभावना नगण्य है। सुरक्षा विश्लेषण की गणना के द्वारा विफलता की संभावनाओं के जो अंन्दाज

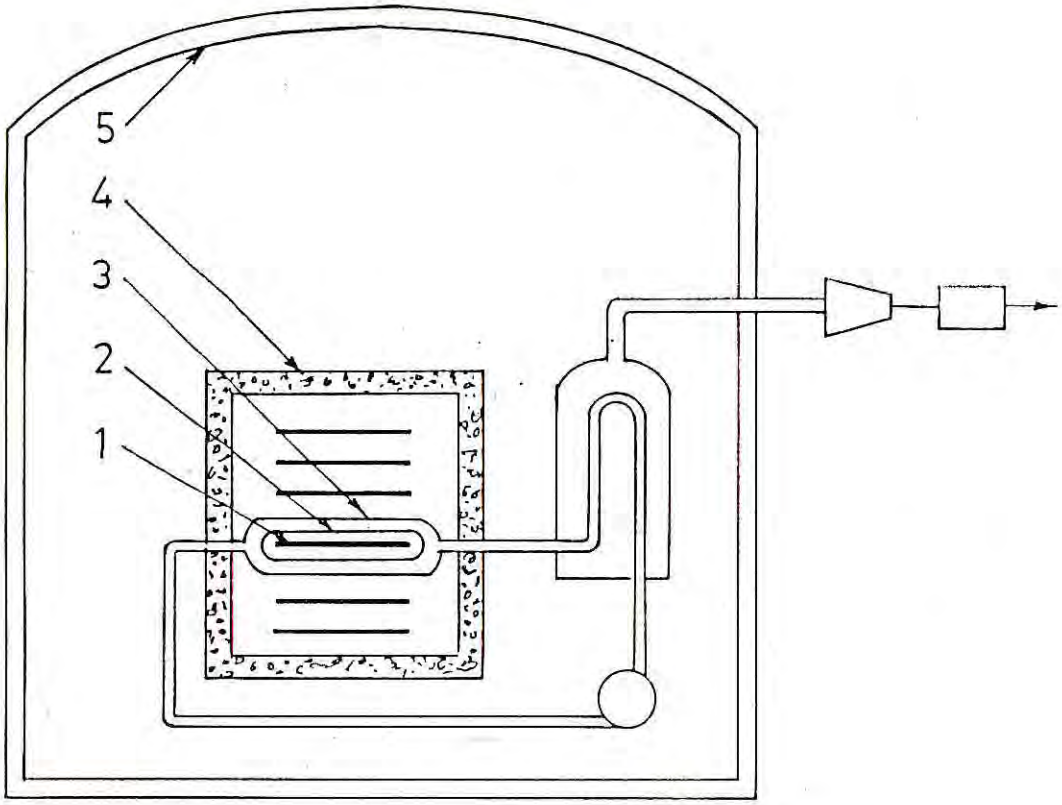

चित्र-1

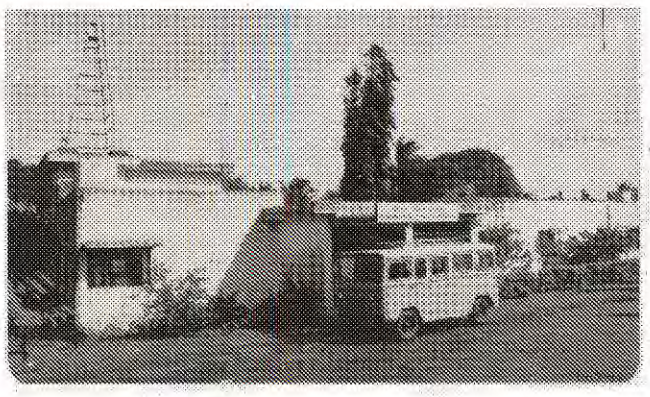

चित्र-2

चित्र-3

लगाए गए है वे तालिका-2 में दर्ज हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है कि जब तक दूसरी या तीसरी विफलता न हो जाय तब तक कोई विशेष आपात स्थिति नहीं पैदा होती। पर्यावरण के लिए आपात स्थिति तभी पैदा हो सकती है जब तिहरी विफलता हो जाय। इस संभावना का मान तालिका में दिया गया है जो कि बहुत ही नगण्य है ।

3. सुरक्षा संबन्धी देख रेख

सुरक्षा के पहले दो चरण अर्थात स्थल चयन व अभियांत्रिकी कृत उपक्रमों के बाद तीसरा महत्वपूर्ण चरण है सुरक्षा संबन्धी देख रेख। इस देख - रेख के मुख्य अंग है : 1) विकिरण मात्रा सीमाओं का प्रतिपालन, 2) कार्मिकों के विकिरण उद्भासन का मापन, 3) पर्यावरण में पहुंचने वाले विकिरण व विकिरण उत्सर्जक पदार्थों का लगातार मापन, 4) संयन्त्र से निकलने वाले विकिरण उत्सर्जक पदार्थों के पर्यावरण में होने वाले स्फुरण पर नियंन्त्रण, 5) कार्मिकों का प्रशिक्षण व समय समय पर पुनः प्रशिक्षण, 6) आपात कालीन स्थिति का सामना करने के लिए समय समय पर कवायद का आयोजन।

तालिका-3 में विकिरण उद्भासन की सीमाएं दर्ज की गई हैं। भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्रका स्वास्थ्य व सुरक्षा वर्ग इन सीमाओं को सर्वथा प्रतिपालन करवाने के लिए देख रेख का काम करता है। सीमाएं अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग द्वारा निर्धारित की गई हैं। हमारे परमाणु विद्युत घरों के कर्मचारी लोगों की विकिरण उद्भासन मात्रा का मापन समुचित यन्त्रों द्वारा लगातार किया जाता रहा है। प्रत्येक कर्मचारी के वार्षिक विकिरण उद्भासन का ब्यौरा उसके पूरे कार्यकाल में कम्प्यूटरों की सहायता से रखा जाता है। सेवा निवृत्ति के पश्चात भी यह ब्यौरा आवश्यकता पड़ने पर देखा जा सकता है । हमारे परमाणु भट्टियों के अब तक के प्रचालन - अनुभव के आधार पर हम कह सकते हैं कि विकिरण की प्रतिव्यक्ति औसत मात्रा निर्धारित सीमा के तिहाई हिस्से से हमेशा कम रही है। तारापुर परमाणु विद्युत घर के कर्मचारियों की औसत वार्षिक विकिरण मात्रा वर्ष 1972 में 1633 मिलिरेम थी। परिचालन में सुधार द्वारा वर्ष 1988 तक प्रतिवर्षी मात्रा घटकर 765 मिलिरेम हो गई। इस प्रकार हमारे परमाणु कर्मियों की विकिरण मात्रा निर्धारित सीमा के अन्दर ही नहीं रही बल्कि समय के अन्तराल के साथ घटती भी रही।

पर्यावरण व जन सामान्य की विकिरण सुरक्षा के लिए परमाणु बिजली घरों के आसपास वाले इलाकों में लगातार विकिरण उत्सर्जक पदार्थों का संसूचन किया जाता है । परमाणु संयन्त्र से सामान्य प्रचालन के दौरान होने वाले सूक्ष्म रेडियोधर्मी स्फुरणों पर कड़ा नियंत्रण रखा जाता है। देख रेख व विवरणीय पदार्थों का संतुलन परमाणु ऊर्जा घर से 30 कि.मी. की दूरी तक के क्षेत्र में किया जाता है। इस कार्य के लिए प्रत्येक संयन्त्र के इलाके में एक पर्यावरण सर्वेक्षण प्रयोगशाला स्थापित की गई है। चित्र-2 में तारापुर की प्रयोगशाला दिखाई गई है। जो पदार्थ जांचे जाते है, वे हैं, हवा, पानी, मिट्टी, तथा खाद्य पदार्थ जैसे दूध, मख्खन, सब्जियां, अनाज, मांस इत्यादि। इनमें ट्रीटियम व अन्य विकिरण उत्सर्जक पदार्थों का संसूचन किया जाता है । चित्र-3-5 में पर्यावरण सर्वेक्षण व शारीरिक विकिरण मापन की कुछ गतिविधियां दर्शायी गई हैं ।

समस्त उपर्युक्त ऐसे विश्वसनीय उपाय हैं कि हमारे परमाणु ऊर्जा घरों को पूरी तरह सुरक्षित माना जाना चाहिए । परन्तु इन सब बातों के बावजूद आपात काल का सामना करने की क्षमता भी उपार्जित की जाती है। इसके लिए विभिन्न स्तरों पर समितियां बनाई गई हैं, जैसे प्रत्येक संयन्त्र के लिए एक स्थानिक समिति है, उसके ऊपर राज्य स्तरीय व अन्तर्राज्यस्तरीय समितियां बनाई गई हैं। इनमें जिला प्रशासन, सुरक्षा यातायात तथा स्वास्थ्य संगठनों के अधिकारी शामिल किए गये हैं। समय समय पर इन संगठनों के साथ सामंजस्य की पुष्टि करने के लिए आपातकालीन ड्रिल की जाती है। समस्त परमाणु कर्मचारियों को समय समय पर पुनः प्रशिक्षण दिया जाता है ताकि वे किसी भी परिस्थिति का सामना करने में सक्षम रह सकें ।

इस प्रकार सुरक्षा के तमाम उपाय सामान्य प्रचालन से लेकर आपात कालीन परिस्थितियों का सामना करने की तैयारी तक निश्चित किए गए हैं, उनका कड़ाई से पालन किया जाता है।

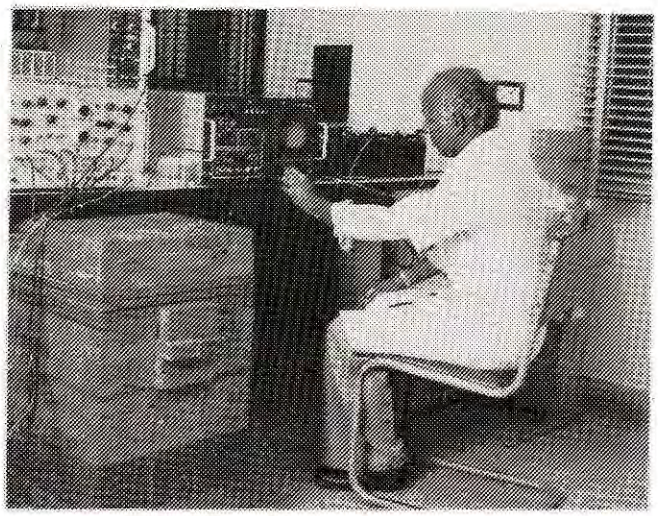

चित्र-4

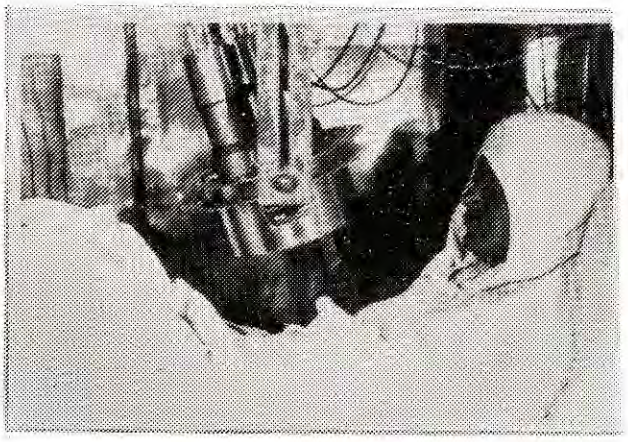

चित्र - 5

तालिका - 1

स्थलचयन में अपनाए जानेवाले जनसंख्या सम्बन्धी मापदंड

1.	अपवर्जित क्षेत्र	:	परमाणु संयन्त्र से 1.6 कि.दूरी तक के अर्धव्यास वाले क्षेत्र में कोई आवास नहीं होना चाहिए ।
2.	अनुवर्रीकृत क्षेत्र	:	5 कि.मी दूरी तक के अर्धव्यास वाले क्षेत्र के अन्दर विकास व जनसंख्या वृद्धि में नियन्त्रण । कुल जनसंख्या 20,000 से अधिक नहीं होनी चाहिए ।
3.	अनुवर्रीकृत क्षेत्र में जनसंख्या घनत्व	:	प्रदेश मध्यक का 2/3 से अधिक नहीं ।
4.	प.वि.घर से 10 कि.मी तक	:	10,000 से अधिक जनसंख्या का कोई केन्द्र नहीं होना चाहिए,
5.	प.वि.घर से 30 कि.मी.तक	:	1,00,000 से अधिक जनसंख्या का कोई केन्द्र नहीं होना चाहिए ।

तालिका - 2

दाबित भारी पानी परमाणु संयन्त्र (पी. एच. डब्ल्यू. आर.) के सुरक्षा तंत्रों के विफल होने की सम्भावनायें

(क) शीतलक की मध्यम हानि 10^{-2} / वर्ष

(ख) शीतलक की मध्यम बृहत् हानि 10^{-4} / वर्ष

(ग) परमाणु भट्टी के चलन को बन्द करने वाले यन्त्र का विफल होना 10^{-5} / वर्ष

(घ) आपातकालीन क्रोड शीतलक तंत्र का विफल होना 2.5×10^{-3} / वर्ष

(च) रक्षक आवरण का विफल होना 10^{-3}/वर्ष

दुहरी विफलता की संभावना,(ख) x (घ) = 2.5×10^{-7} / x (घ) x (च) = 2.5×10^{-10} / वर्ष

तिहरी विफलता की संभावना (ख) x (घ) x (च) = 2.5×10^{-10} / वर्ष

तालिका - 3

विकिरण मात्रा की निर्धारित सीमाएं

क. **परमाणु व्यवसायियों के लिए :**

वार्षिक प्रभावी मात्रा समतुल्य सीमा : 5000 मि.रेम

प्रयोजित अधि उद्भासन :

एक वर्ष की सीमा : 10,000 मि.रेम

जीवन भर में एक बार : 25,000 मि.रेम

ख. **जन सामान्य के लिए :**

वार्षिक औसत (जीवन भर तक) : 100 मि.रेम

एक वर्ष में अधिकतम : 500 मि.रेम

(औसत प्राकृतिक विकिरण मात्रा 200 मि.रेम प्रतिवर्ष होती है ।)

नाभिकीय ऊर्जा एवं पर्यावरण

उमेश चन्द्र मिश्र
अध्यक्ष, प्रशिक्षण प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्रांबे, बंबई - 400 085.

प्रस्तावना

प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत को देश की प्रगति का मानदण्ड माना जाता है । बिजली, ऊर्जा खपत का अधिकांश भाग है। इस दृष्टि से भारत सबसे पिछड़े देशों में आता है। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस देश की बिजली उत्पादन क्षमता में बहुत तेज़ी से वृद्धि हुई है परन्तु, बहुत अधिक जनसंख्या होने के कारण, प्रतिव्यक्ति बिजली खपत की दृष्टि से हम अभी भी बहुत पिछड़े हैं ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की बिजली उत्पादन क्षमता 2000 मेगावाट से भी कम थी जो आज 50,000 मेगावाट से अधिक हो गई है परन्तु फिर भी अत्यधिक जनसंख्या के कारण आज भी प्रतिव्यक्ति उपलब्ध बिजली विकसित देशों की तुलना में उनका दसवां भाग भी नहीं है । इसीलिए भारत को, हर उपलब्ध स्रोत का अधिकाधिक प्रयोग कर, बिजली उत्पादन को बहुत तेज़ी से बढ़ाना है । इस शताब्दी के अंत तक वर्तमान क्षमता को लगभग ढाई गुना करने का लक्ष्य है । इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हमें पारंपारिक व अपारंपरिक, दोनों ही प्रकार के स्रोतों का विकास करना होगा। प्रत्येक बिजलीघर के निर्माण और उत्पादन के साथ पर्यावरण और पारिस्थितिकी पर कुप्रभाव पड़ते हैं और ऊर्जा उत्पादन क्षमता को बढ़ाते समय हमें इन कुप्रभावों को कम से कम रखने का प्रयत्न करना होगा । इस वार्ता का उद्देश्य विभिन्न विकल्पों की पर्यावरण प्रदूषित करने की क्षमताओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना है । इस अध्ययन से यह साबित होता है कि नाभिकीय बिजलीघरों का इस परिप्रेक्ष्य में एक विशिष्ट स्थान है जिसका अधिकाधिक प्रयोग किया जाना, पर्यावरण संरक्षण एवं आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त आकर्षक है। इससे देश में उपलब्ध सीमित जीवाश्मीय ईंधन - कोयला, तेल और गैस के भंडार का अधिक समय तक प्रयोग किया जाना भी संभव हो सकेगा ।

बिजली उत्पादन स्रोत - पारंपरिक

अधिक उत्पादन क्षमता वाले बिजलीघरों को जिन पारंपरिक स्रोतों के आधार पर बनाया जाता है वह कोयला, तेल, गैस, नाभिकीय एवं जल हैं । इस समय लगभग 60 प्रतिशत बिजली कोयले से, 30 प्रतिशत जलविद्युत तथा 2.5 प्रतिशत नाभिकीय स्रोत से प्राप्त होती है । तेल और गैस के सीमित भंडार होने के कारण और इनकी आवश्यकता तथा उपयोगिता यातायात तथा पेट्रोरसायन उद्योगों के लिए अधिक होने के कारण इनका उपयोग बिजलीघरों के निर्माण के लिए न तो अब तक किया गया है और न भविष्य में करना ही देश के हित में होगा । अतः भविष्य के लिए भी हमें कोयला, जलविद्युत तथा नाभिकीय स्रोतों पर ही निर्भर रहना होगा । जल विद्युत का उत्पादन हर जगह संभव नहीं है । आर्थिक दृष्टि से ऐसे बिजलीघर वहीं आकर्षक हैं जहां जल भंडारन एवं नियोजित वितरण की आवश्यकता खेती के लिए सिंचाई स्रोत तथा बाढ़ एवं सूखे के नियंत्रण के लिए प्रमुख हो । प्रायः इसके लिए उपयुक्त स्थान पहाड़ी क्षेत्रों में नदियों के मार्ग होते हैं । ऐसी योजनाओं का प्रमुख उद्देश्य जल नियंत्रण एवं वितरण होने के कारण बड़े बांध एवं जलाशयों का निर्माण एवं नहरों को बनाना पड़ता है । इस सभी में अत्याधिक धन एवं समय लगता है। जल विद्युत या पन-बिजलीघर लागत एवं समय की दृष्टि से ऐसी योजनाओं का छोटा भाग होते हैं । बन जाने पर ऐसी योजनाओं से हमें सस्ती और पर्यावरण की दृष्टि से बहुत स्वच्छ बिजली प्राप्त होती है, परन्तु बांध, जलाशय और नहरों आदि के निर्माण करने में उस क्षेत्र की पारिस्थितिकी (इकोलोजी) पर अनेकों कुप्रभाव पड़ते हैं । इसीलिए प्रायः जहां भी ऐसी योजनाएं आरंभ की जाती हैं वहां पर्यावरण के प्रति चिंतित व्यक्ति एवं संस्थाएं इनका विरोध करती हैं । इनके बावजूद जहां ऐसी योजनाएं संभव हैं और आर्थिक साधन उपलब्ध हो सकते हैं, वहां इस स्रोत का उपयोग या तो किया जा रहा है या योजनाएं बन रहीं हैं परन्तु, इस स्रोत से बहुत अधिक क्षमता स्थापित करने की आशा नहीं है ।

उपरोक्त से प्रकट होता है कि वास्तव में बिजली उत्पादन में तेज़ी लाने के लिए हमारे समक्ष दो ही विकल्प हैं, कोयला और नाभिकीय । इसलिए इन दोनों का ही पर्यावरण प्रदूषण समस्याओं के आधारपर तुलनात्मक अध्ययन इस वार्ता में प्रस्तुत किया गया है ।

बिजली उत्पादन स्रोत - अपारंपरिक

ऊर्जा उत्पादन के अपारंपरिक स्रोतों में वायु, सौर, भूगर्भीय, ज्वार भाटा तथा जैविक (बायो-मास) आते हैं और इन सभी से बिजली भी प्राप्त हो सकती है। परन्तु इनसे उद्योगों को चलाने के लिए बड़ी मात्रा में बिजली अभी प्राप्त करना संभव नहीं है। इनसे मिलने वाली बिजली प्रकृति पर निर्भर करती है और निरंतर नहीं प्राप्त हो सकती (जैविक स्रोत को छोड़कर)। इनसे मिलने वाली बिजली पर्यावरण प्रदूषण की दृष्टि से बहुत स्वच्छ होती है और यद्यपि आरंभिक लागत कुछ अधिक होती है परन्तु बिजली बहुत सस्ती होती है । साथ ही यह स्रोत सदैव उपलब्ध रहेंगे। अतः ईंधन के भंडार समाप्त होने का कोई भय नहीं है । इन्हीं आकर्षक कारणों से इन स्रोतों का अपना हीं महत्व है । सुदूर क्षेत्रों व कृषि में जहां अधिक मात्रा में और निरंतर बिजली की आवश्यकता नहीं होती, यह स्रोत बहुत आकर्षक हैं और इसीलिए इनके तेज़ी से विकास के लिए सरकार ने विशेष विभागों का गठन भी किया है । परन्तु जिस तेज़ी से बिजली उत्पादन को बढ़ाने की चर्चा हमने आरंभ में की है उसके लिए यह स्रोत उपयुक्त नहीं है। इसीलिए अब इस चर्चा में हम पारंपरिक स्रोतों, कोयला तथा नाभिकीय का पर्यावरण प्रदूषण की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करेंगे। इस चर्चा से पूर्व कार्बन डाइ-आक्साइड द्वारा सारे विश्व में आज चिंता का कारण बनी हरित-कक्ष प्रभाव (ग्रीन हाउस एफेक्ट) पर कुछ चर्चा कुप्रभावों को समझने में सहायक होगी।

हरित-कक्ष प्रभाव (ग्रीन हाउस एफेक्ट)

जब भी हम किसी ईंधन जैसे कोयला, तेल या गैस को ताप उत्पादन के लिए जलाते हैं तो दहन प्रक्रिया में वातावरण में उपस्थित प्राणवायु आक्सीजन, ईंधन में सदैव उपस्थित कोयले (कार्बन) के साथ रसायनिक प्रक्रिया द्वारा ताप तथा कार्बन डाइ-आक्साइड गैस उत्पन्न करती है। यह गैस वातावरण में बहुत लम्बे समय तक बनी रहती है क्योंकि यह रसायनिक प्रक्रियाओं द्वारा नष्ट नहीं होती । अतः ईंधन का जितना अधिक दहन हम करते रहेंगे उतनी ही अधिक कार्बन डाइ-आक्साइड गैस वातावरण में एकत्रित होती रहेगी तथा प्राणवायु आक्सीजन की मात्रा कम होती रहेगी ।

कार्बन डाइ-आक्साइड में एक विशेष गुण है । यह सूर्य से आने वाले प्रकाश के लिए तो पारदर्शक है जिससे धरती गर्म होती है तथा इस गर्मी को वातावरण में लम्बी तरगंदैर्ध्य वाली किरणों के रूप में प्रेरित करती है। इन किरणों को वातावरण में उपस्थित कार्बन डाइ-आक्साइड गैस अवशोषित कर कार्बन डाइ-आक्साइड वाली वातावरण की परत गर्म हो जाती है । यदि यह गैस न होती तो यह गर्मी वातावरण से वापिस अंतरिक्ष में चली जाती । यह गर्म परत पृथ्वी को फिर गर्मी वापिस विकिरित उसी प्रकार करती है जैसे सिर के ऊपर लगे बिजली के बल्ब से हमें गर्मी मिलती है । इसी प्रभाव को हरित-कक्ष प्रभाव कहते हैं। यह शब्द जीव विज्ञान से आया है यहां हरे कांच के कक्षों का प्रयोग घरातल का तापमान बढ़ाकर फसल को जल्दी पकाने के लिए किया जाता है । इस प्रकार हम देखते हैं कि जैसे जैसे वातावरण में कार्बन डाइ-आक्साइड गैस की मात्रा बढ़ेगी वैसे वैसे पृथ्वी का औसत तापमान बढ़ेगा और पृथ्वी गर्म होती जाएगी । कार्बन डाइ-आक्साइड जैसा ही पृथ्वी को गर्म करने का "हरित-कक्ष" प्रभाव अपेक्षाकृत कम मात्रा में अनेकों दूसरी गैसों द्वारा भी उत्पन्न होता है जिनमें से अधिकांश मानव निर्मित हैं जैसे मीथेन, नाइट्रोजन के आक्साइड तथा रेफ्रिजरेटर, वातानुकूलन संयंत्रों आदि में काम आने वाले क्लोरो-फ्लोरो कार्बन जिन्हें संक्षेप में सी.एफ.सी. के नाम से पुकारा जाता है । अनुमान है कि लगभग 30 ऐसी गैसों का संयुक्त कुप्रभाव कार्बन डाइ-आक्साइड की तुलना में कुछ कम ही है। इसका प्रमुख कारण इन सभी अन्य गैसों का अपेक्षाकृत कम उत्पादन है। इनमें से कुछ के कुप्रभाव पृथ्वी के चारों ओर लगभग 20 किलोमीटर की ऊंचाई पर स्थित ओज़ोन परत में कमी लाना भी है क्योंकि यह ओज़ोन का रसायनिक प्रक्रियाओं द्वारा ध्वंस करती हैं। ओज़ोन परत हम सभी को सूर्य से आने वाली हानिकारक पैराबैंगनी किरणों का अवशोषण कर हमें उनसे बचाती हैं । यह इतनी चिंता का विषय माना जाता है कि विशेष रूप से सी.एफ.सी. के उत्पादन को नियंत्रित करने के कनाडा के मांट्रियल नगर में 1988 में इस संदर्भ में विश्व के अनेकों देशों ने जो इसका अधिकांश उत्पादन करते हैं, एक संधि पर हस्ताक्षर किए हैं जिसे "मांट्रियल प्रोटोकाल" के नाम से जाना जाता है । हम इस चर्चा को कार्बन डाइ-आक्साइड के कुप्रभावों तक ही सीमित रखेंगे जिसका संबंध बिजली उत्पादन से प्रमुख रूप में है ।

तालिका-1 में कार्बन डाइ-आक्साइड की वातावरण में वृद्धि के कुप्रभावों के अनुमानित आंकड़े दिए गए हैं । इनमें समय को लेकर कुछ अनिश्चितताएं हैं क्योंकि भविष्य में विश्वव्यापी स्तर पर ऊर्जा उत्पादन में वृद्धि का अनुमान विभिन्न

वैज्ञानिकों के अनुसार भिन्न भिन्न है। इससे समय को लेकर, जब यह कुप्रभाव भीषण रूप धारण कर लेंगे कुछ वर्षों या एक दो दशकों का अंतर हो सकता है परन्तु, कुप्रभाव होने के बारे में आम सहमति है और इस बारे में भी कि कार्बन डाइ-आक्साइड की मात्रा वातावरण में तेज़ी से बढ़ रही है ।

तालिका-1 में दिए गए आंकडों से प्रकट होता है कि सन् 1880 से अब तक इस गैस की वातावरण में मात्रा 280 पी.पी.एम.(आयतन के रूप में 10 लाख इकाई में 280 इकाई भाग) से बढ़कर 340 पी.पी.एम. तक पहुंच गई है । इस मात्रा के दोगुने होने के अनुमानित कुप्रभाव, पृथ्वी के औसत तापमान और सागर तल की ऊंचाई बढ़ने के रूप में दिए गये हैं । इन्हीं के साथ मौसम तथा वर्षा में महत्वपूर्ण परिवर्तन होंगें जिनके व्यापक कुप्रभावों का अनुमान सहज में लगाया जा सकता है। यँह ध्यान देने योग्य है कि जब पृथ्वी का औसत तापमान वर्तमान से मात्र 3°C अधिक था तो यहां कोई मानव नहीं था और इस मात्रा के दोगुने होने से इतनी वृद्धि की पूरी संभावना है । भविष्य में यह कब होगा यह विश्व स्तर पर जीवाश्मीय ईंधन के दहन- दर में वृद्धि पर निर्भर करेगा । विभिन्न अनुमानों के अनुसार यह स्थिति सन् 2040 और 2060 के बीच कभी भी आसकती है, यदि इसे रोकने के प्रयत्न समय रहते न किए गए। इस संदर्भ में यह जान लेना आवश्यक है कि पारंपरिक स्रोतों में जल तथा नाभिकीय ही ऐसे हैं जिनमें कार्बन डाइ-आक्साइड नहीं उत्पन्न होती है। अतः यह दोनों ही पर्यावरण प्रदूषण के उपरोक्त कुप्रभावों की दृष्टि से अत्यन्त आकर्षक विकल्प हैं । अब हम कोयला चालित तथा नाभिकीय बिजलीघरों द्वारा उत्पन्न पारंपरिक तथा रेडियोधर्मी प्रदूषकों का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे क्योंकि जल-विद्युत के बारे में पहले ही चर्चा कर चुके हैं ।

कोयला-चालित तापीय बिजलीघर

ऐसे बिजलीघरों में कोयले के दहन से पानी को भाप में परिवर्तित किया जाता है । भाप टरबाइन नामक संयंत्र को घुमाती है जिसकी धुरी से जुड़ा विद्युत उत्पादक (जनरेटर) बिजली उत्पन्न करता है । इस प्रक्रिया में केवल दहन ऐसा चरण है जो प्रदूषक उत्पन्न करता है जो कि बिजलीघर की चिमनी द्वारा वातावरण में प्रदूषण उत्पन्न करते हैं । भारतीय कोयले में औसत रूप से पाए जाने वाले तत्व तालिका-2 में दिए गए हैं। इसके अतिरिक्त अपेक्षाकृत कम मात्रा में कोयले में पारा और आर्सेनिक जैसे हानिकारक तत्व तथा यूरेनियम व थोरियम श्रृंखला के प्राकृतिक रेडियोधर्मी तत्व भी सदैव पाए जाते हैं। यह सब भी दहन प्रक्रिया के बाद चिमनी से निकलने वाली कणिकीय कोयला- राख में कोयले की अपेक्षा अधिक सघन मात्रा में वातावरण में बिखरते हैं । आधुनिक बिजलीघरों में इन्हें निकलने से रोकने के अनेकों प्रदूषण नियंत्रण उपकरणों को लगाया जाता है परन्तु कुछ स्थानों को छोड़कर अधिकांशतया यह इतनी सक्षमता से कार्य नहीं कर पाते हैं जितना यह विदेशों में करते हैं जहां इनकी संरचना और निर्माण प्रायः किया जाता है। ऐसा इसलिए नहीं होता की हमारी क्षमता में कोई कमी है बल्कि इसके निम्न दो प्रमुख कारण है :

1. भारत में बिजलीघरों को दिया जाने वाला कोयला प्रायः बहुत कम ताप क्षमता और बहुत अधिक राख वाला है। जबकि विदेशों में प्रायः 5 प्रतिशत के आसपास राख वाला कोयला इस काम में लाया जाता है। भारत में उपलब्ध कोयला 50-55 प्रतिशत राख वाला होता है इसलिए उसकी ताप उत्पादन क्षमता भी कम होती है । प्रदूषण नियंत्रण उपकरण जो 5-10 प्रतिशत राख रोकने के लिए बनाए गए होते हैं इस अत्यधिक राख को उतनी ही क्षमता से नहीं रोक पाते हैं । जो नियंत्रण उपकरण विदेशों में 11 प्रतिशत से अधिक राख को चिमनी से बाहर नहीं जाने देते, वही भारत में 15-16 प्रतिशत से अधिक को नहीं रोक पाते। यद्यपि इस प्रतिशत संख्या में 3-4 प्रतिशत की ही कमी नज़र आती है परन्तु इसका वास्तविक अर्थ टनों अधिक कणिकीय पदार्थों का वातावरण में वितरण होता है । साथ ही हमारे बिजलीघर (अधिक राख और कम ताप उत्पादन के कारण) कोयले की कहीं अधिक मात्रा बिजली उत्पादन के लिए जलाते हैं ।
2. भारतीय कोयले की विद्युत चालकता कम होने के कारण, कणिकीय प्रदूषण को रोकने वाले संयंत्र उतनी क्षमता से कार्य नहीं करते जितने के लिए बनाए गए हैं ।

पिछले कुछ वर्षों में उपरोक्त दोनों ही समस्याओं के समाधान में काफी प्रगति हुई है । कोयला चालित बिजलीघरों द्वारा उत्पन्न पारंपरिक प्रदूषक निम्न हैं ।

(अ) **कणिकीय पदार्थ** : इसकी विस्तृत जांच से पता लगा है कि इसमें अनेकों विषैले तत्व जैसे पारा,

आर्सेनिक आदि तथा कुछ कैंसर कारक पदार्थ जैसे बेन्जो-ए-पायरीन भी पाए जाते हैं।

(ब) **गैसीय प्रदूषक** : इनमें प्रमुख हैं, सल्फर डाइ - आक्साइड, नाइट्रोजन के आक्साइड और कार्बन मानो - आक्साइड।

(स) **रेडियो धर्मी तत्व** : यूरेनियम तथा थोरियम श्रृंखलाओं के प्राकृतिक रेडियो धर्मी तत्व पोटैशियम-40।

नाभिकीय बिजलीघर

इनकी मूल कार्यप्रणाली कोयला-चालित बिजलीघरों जैसी ही होती है अर्थात पानी से भाप बनाकर उससे टरबाइन चलाना तथा टरबाइन द्वारा जनरेटर को घुमाने से बिजली उत्पन्न करना । प्रमुख अंतर यह होता है कि ताप उत्पादन के लिए कोयले के दहन के स्थान पर यूरेनियम - 235 में विखंडन अभिक्रिया द्वारा ताप उत्पन्न किया जाता है । अतः वातावरण प्रदूषण की दृष्टि से इनसे कोई पारंपरिक प्रदूषक (कणिकीय एवं गैसीय) उत्पन्न नहीं होते हैं और न ही "हरित - कक्ष" कुप्रभाव में सहायक कार्बनडाइ-आक्साइड, केवल कुछ रेडियो धर्मी गैसीय तत्व तथा ट्रीटियम उत्पन्न होते हैं । अधिकांश गैसीय रेडियो धर्मी तत्व बहुत कम अर्धायु के होते हैं और बीटा तथा गामा विकिरण देते हैं और इस प्रकार हमारे शरीर को बाहरी रुप से किरणित करते हैं । इसके विपरीत कोयले में उपस्थित यूरेनियम, रेडियम व थोरियम जैसे रेडियो धर्मी तत्व एल्फा विकिरण भी देते हैं, दीर्घ अर्धायु वाले हैं और शरीर में खाद्य-सामग्री के माध्यम से पंहुचने पर हड्डियों में जमा होते हैं । दोनों ही प्रकार के बिजलीघरों से मिलने वाली विकिरण मात्रा प्राकृतिक रुप से मिलने वाली विकिरण मात्रा का नगण्य सूक्ष्मांश होती है यद्यपि कोयले से चलने वाले बिजलीघरों द्वारा दी जानेवाली जनसामान्य को विकिरण मात्रा उसी शक्ति के नाभिकीय बिजलीघर की तुलना में अधिक होती है (2 से 5 गुणे तक)। इसका प्रमुख कारण भारतीय कोयले की अधिक राख मात्रा है।

1988 की संयुक्त राष्ट्र परमाणु विकिरण प्रभाव समिति की रिपोर्ट में दिए गए आंकड़ों से पता चलता है कि बिजली उत्पादन के लिए बनाए गए विभिन्न प्रकार के नाभिकीय बिजलीघरों में से भारत द्वारा अपनाई गई प्राकृतिक यूरेनियम, भारी पानी विमंदित व शीतलित पद्धति (केन्डू प्रकार के बिजलीघर) ट्रीटियम को छोड़कर अन्य सभी रेडियो धर्मी पदार्थों के वायु तथा जल में प्रदूषण करने की क्षमता की दृष्टि से सबसे स्वच्छ बिजलीघर है । आंकड़े वास्तविक मापन के आधार पर दिए गए हैं । ट्रीटियम बहुत कमज़ोर बीटा विकिरण देता है, अतः इससे विकिरण मात्रा अधिक नहीं मिलती और यह नियंत्रण में रखा जा सकता है ।

तुलनात्मक निष्कर्ष एवं सारांश

उपरोक्त संक्षिप्त विवरण से ज्ञात होता है कि भारत के लिए पारंपरिक बिजली उत्पादन स्रोतों के दो विकल्प ही उपलब्ध हैं । यद्यपि वर्तमान स्थिति में वातावरण प्रदूषण की दृष्टि से नाभिकीय बिजलीघर अधिक आकर्षक विकल्प हैं, फिर भी कोयला-चालित बिजलीघरों का निर्माण बड़े पैमाने पर करते रहना होगा क्योंकि इसी के पर्याप्त भंडार देश में हैं । ऐसा करते समय हमें विभिन्न प्रदूषण नियंत्रण उपकरणों को लगाने और उनके सुचारु रुप से चलते रहने के प्रति आश्वस्त होना आवश्यक होगा । साथ ही "हरित - कक्ष" कुप्रभाव को कम करने का कोई साधन अभी उपलब्ध नहीं है । अतः जितना संभव हो सके नाभिकीय और जल-विद्युत का प्रयोग देश एवं विश्व के दीर्घकालीन हित में होगा ।

नाभिकीय बिजलीघर सामान्यतया बहुत स्वच्छ होते हैं और इनके निर्माण में पर्याप्त सुरक्षा उपाय किए जाते हैं परन्तु चर्नोबिल प्रकार की दुर्घटनाओं की संभावना नाभिकीय बिजलीघरों में मानव गलतिओं के कारण अधिक होने की वजह से समय-समय पर इनके सुरक्षा साधनों का पुनरावलोकन करते रहना होगा और विश्वास करते रहना होगा कि यह सामान्य रुप से कार्य कर रहे हैं । भविष्य में देश के विकास में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका को नकारा नहीं जा सकता परन्तु जनसामान्य के मानस पटल से "चर्नोबिल" की याद को धुंधला करने के लिए उनका सक्षम और सामान्य रुप से कार्य करते रहना आवश्यक है। यह सर्वथा संभव है। फ्रांस का इस संदर्भ में उदाहरण अनुकरणीय है। यद्यपि उसकी तुलना में भारत का अभी तक का अनुभव सीमित है परन्तु यह सीमित अनुभव अत्यन्त आशाजनक है।

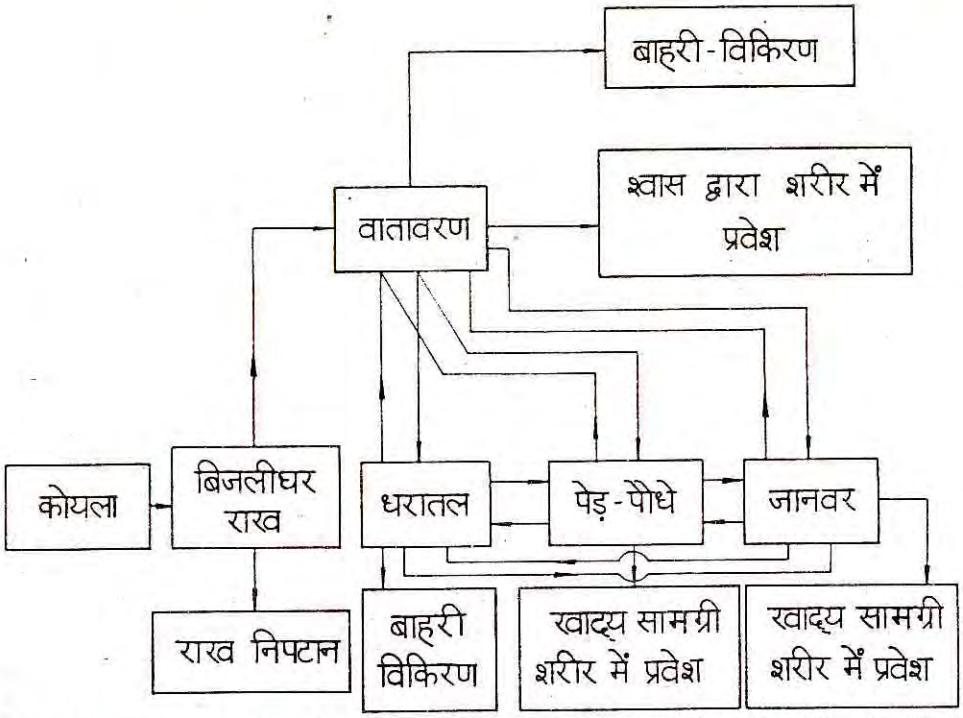

चित्र.1. कोयला चालित ताप बिजलीघर से उत्पन्न प्राकृतिक रेडियोधर्मिता से मिलने वाले विकिरण के विभिन्न मार्ग

तालिका - 1

हरित-कक्ष प्रभाव के कुछ आंकड़े

कारण	प्रभाव
कार्बन डाइ-आक्साइड की मात्रा दोगुनी होना	1.5 - 4.5^0 सें. तापमान वृद्धि
अन्य "हरित-कक्ष" गैसों का भी दोगुना होना (जैसे मीथेन, सी.एफ.सी. नाइट्रस आक्साइड)	3 - 9^0 सें. तापमान वृद्धि
उपरोक्त तापमान वृद्धि से सागर तल ऊंचाई में वृद्धि	50 - 300 सें.मी.
वर्तमान औसत तापमान (पृथ्वी)	15^0 सें.
वर्तमान औसत तापमान (यदि वातावरण न हो)	- 18^0 सें.
कार्बन डाइ-आक्साइड सन् 1880 में 1980 में	280 पी.पी.एम. 340 पी.पी.एम.
मात्रा के दोगुना होने के अनुमानित वर्ष	50 - 80

तालिका - 2

भारतीय कोयले के औसत आंकड़े

तत्व / पदार्थ	मात्रा (प्रतिशत)
कार्बन	33 - 79
हाइड्रोजन	1.9 - 4.9
नाइट्रोजन	0.7 - 2.1
सल्फर	0.2 - 2.2
फास्फोरस	सूक्ष्मांश - 0.9
कार्बोनेट	सूक्ष्मांश - 5.0
राख की मात्रा दहन पर्यंत *	30 - 55
यूरेनियम	1 - 7 पी.पी. एम.
थोरियम	2 - 23 पी.पी.एम.

* राख में यूरेनियम और थोरियम श्रंखला के रेडियो धर्मी तत्वों की मात्रा कोयले की अपेक्षा 3-6 गुणी अधिक पाई जाती है ।

नरोरा परमाणु बिजलीघर के सुरक्षा पहलू और इसकी आपात योजना

ए. एम. देसनवी
नरोरा परमाणु विद्युत परियोजना

नरोरा परमाणु बिजलीघर की पहली इकाई 11 मार्च, 1989 को क्रिटीकल हुई। यह विश्व की 419 वीं बिजली भट्टी है । नरोरा परमाणु बिजलीघर (न.प.वि.प.) दाबित भारी पानी रिएक्टर अर्थात प्रेसराइज्ड हैवी वाटर रिएक्टर है। इस डिजायन को कान्डू टाइप डिजाइन भी कहते हैं ।

हालांकि कान्डू टाइप की सुरक्षा प्रक्रिया (Safety Philosphy) स्वतन्त्र रुप से बनी है, लेकिन इस पर दूसरे प्रकार के परमाणु संयंत्रों की सुरक्षा प्रक्रिया का प्रभाव भी पड़ा है । फलस्वरुप, कान्डू टाइप आज सुरक्षा की दृष्टि से विश्व के सर्वोत्तम प्रकार के रिएक्टरों में गिना जाता है ।

शुरु में कान्डू टाइप रिएक्टर का सुरक्षात्मक स्वरुप (Safety Criteria) कोयले के बिजलीघरों की तुलना में चुना गया । 1954 में जब विश्व का सर्वोत्तम कान्डू टाइप रिएक्टर का डिजायन उद्देश्य बनाया जा रहा था तो उस समय यह फैसला किया गया कि कान्डू रिएक्टर की जोखिम लक्ष्य (Risk target) कोयला बिजलीघरों की तुलना में पांच गुना कम हो। बाद में 1961 में, इस उद्देश्य को एक दहाई से कम कर दिया गया, अर्थात कोयला बिजलीघर की तुलना में पचास गुना कम रिस्क हो । उद्देश्य यह था कि परमाणु बिजलीघर के द्वारा 100 वर्षों में ज्यादा से ज्यादा एक मृत्यु हो । इसे भी पिछले कुछ वर्षों में अधिक संशोधित करके अब एक हजार वर्ष में एक मृत्यु का उद्देश्य रखा गया है । जोखिम लक्ष्य के इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये हमारे नाभिकीय वैज्ञानिकों और इन्जीनियरों द्वारा कठिन परिश्रम के बाद जो डिजाइन तैयार किया गया है वह दूसरे उद्योगों के लिये भी एक नमूना है । उदाहरण के तौर पर भारत में पिछले वर्ष सड़क दुर्घटना में चालीस हजार लोग मरे । एक अनुमान के अनुसार भारत में इस समय एक करोड़ वाहन चले रहे हैं । इस प्रकार जानलेवा दुर्घटना की संभावना प्रति वाहन लगभग $4x10^{-3}$ प्रति वर्ष आती है, अर्थात सम्भावना यह हुई कि यदि एक वाहन एक हजार वर्ष सड़क पर चलता है तो उसके द्वारा दुर्घटना में चार मृत्यु होंगी । इस बात से आप अनुमान लगा सकते हैं कि परमाणु बिजलीघर को सड़क दुर्घटना से अधिक सुरक्षित बनाने में देश के वैज्ञानिकों ने कैसे कैसे प्रावधान रखे होंगे ।

नरोरा परमाणु बिजलीघर में भारी पानी से मंदित, प्राकृतिक यूरेनियम चालित परमाणु भट्टी है । इसमें एक क्षैतिज बेलनाकार पात्र है, इस बेलनाकार बर्तन में 306 प्रेसर ट्यूब्स हैं । इन प्रेसर ट्यूब्स के अंदर यूरेनियम ईंधन से ऊष्मा लेकर उस ऊष्मा को ब्वायलर्स में भेजता है जहाँ भाप बनती है। कलैन्ड्रिया को एक पूरी तरह से बंद कमरे में रखा गया है जो कि पानी से भरा हुआ है । इस कमरे को कलेंड्रिया वाल्ट करते हैं । कलैन्ड्रिया रिएक्टर भवन की बाहरी दीवार एवं छत दोहरी दीवारों से बनी हुई है । इसके दरवाजे रिसाव रोधी हैं ताकि अंदर की हवा बाहर न आ सके । वायु संचालन के लिए दो निर्वातक पंखे लगे हैं, सफाई वाल्ट के द्वारा ठंडी एवं साफ हवा रिएक्टर भवन में आती है । बाहर जाने वाली हवा में रेडियो धर्मिता की जांच का प्रबन्ध है । यदि बाहर जाने वाली हवा में रेडियो धर्मिता अधिक हो तो सप्लाई एवं एक्जास्ट डक्ट के डैम्पर स्वतः बंद हो जाते है जिससे भवन के अंदर की प्रदूषित हवा बिना स्वच्छ किये बाहर न निकल सके । दोहरी दीवार का लाभ यह है कि यदि कोई दुर्घटना हो जाये तो रिएक्टर भवन के अंदर भाप और हवा का दबाव 1.25 किग्रा/सेमी.^{2} तक पहुंच सकता है । यह देखा गया है कि कंक्रीट की कितनी भी मोटी दीवार क्यों न हो वह अपने अंदर से हवा की थोड़ी बहुत मात्रा निकलने देती है । दुर्घटना के समय यदि कोई गैस पहली दीवार से निकल भी गयी तो पहली और दूसरी दीवार के बीच आयतन में ही आएगी। इस बात का प्रबंध किया गया है कि इस आयतन से हवा एक्जास्ट फैन द्वारा फिल्टर से साफ होने के बाद निकाली जा सके और कुल मिलाकर हवा की मात्रा इतनी निकाली जाती है कि इन दीवारों के बीच के आयतन में

निगेटिव दबाव रहे। इस प्रबन्ध से लाभ यह होता है कि दुर्घटना के समय या आम दिनों में रिएक्टर भवन की बाहरी दीवार से हवा अंदर से बाहर की ओर नहीं जा सकती ।

महत्वपूर्ण बात यह है कि रेडियो धर्मी पदार्थ रिएक्टर कोर के अन्दर ही रहें जिससे कि उनका वायु मंडल में आना संभव न हो । यह बात याद रखने योग्य है कि सभी महत्वपूर्ण रेडियोधर्मी पदार्थ जिन्हें हम फिसन प्रोडक्ट (Fission Product) कहते हैं, वह फ्यूएल बंडल के अंदर ही रहते हैं । नरोरा परमाणु बिजलीघर में सिरेमिक यूरेनियम ईंधन का प्रयोग किया गया है । सिरेमिक ईंधन की विशेषता यह है कि वह 99 प्रतिशत फिसन प्रोडक्ट अपने अंदर ही रखता है । यह सिरेमिक ईंधन जिरकोलोय पदार्थ की बनी पेंसिल के अंदर रहता है। एक प्रतिशत फिसन प्रोडक्ट जिरकोलोय की बनी ट्यूब के अंदर ही रहता है । इस प्रकार हम देखते हैं कि रेडियोधर्मी पदार्थों को वायुमंडल में आने से रोकने के लिए निम्नलिखित पांच अवरोधों का प्रयोग किया जाता है :

1. सिरेमिक ईंधन
2. फ्यूएल शीट
3. प्राइमरी हीट ट्रान्सपोर्ट सिस्टम
4. रिएक्टर भवन
5. वर्जित क्षेत्र

वर्जित क्षेत्र

यह रिएक्टर भवन के चारों ओर बिना आबादी का 1.6 किमी. त्रिज्या का क्षेत्र है जो इससे परे समीपतम आबादी को रेडियोधर्मी पदार्थों से लगने वाले विकिरण की मात्रा को संयंत्र से निकलने वाले विकिरण की तुलना में 100 गुना कम कर देता है । इस बात का पूरा प्रबंध रखागया है कि रेडियो धर्मी पदार्थ पहले ही रूकावट को पार न करने पायें। संयंत्र के ऐसे सत्रह प्राचल या पैरामीटर हैं जो किसी प्रकार की छोटी-मोटी गडबड़ी में भी संयंत्र को स्वतः बन्द कर देते हैं। संयंत्र को बंद करने के लिये दो अलग-अलग प्रकार के शटडाउन सिस्टम का प्रबन्ध है। एक ही शटडाउन सिस्टम (Shutdown System) संयंत्र को निर्धारित समय के अंदर बंद करने के लिये काफी है और इसके काम न करने की संभावना न के बराबर है। (दो लाख बार में एक बार ही काम न करने की संभावना है ।) छोटी सी सम्भावना को भी संयंत्र के डिजायन इंजीनियरों ने ध्यान में रखा है। निर्धारित समय के पहले शटडाउन सिस्टम द्वारा काम न करने की दशा में दूसरा शटडाउन सिस्टम संयंत्र को स्वतः बंद कर देगा।

संयंत्र की हर अवस्था में ऊष्मा निकालने का प्रबन्ध प्राइमरी हीट ट्रान्सपोर्ट सिस्टम (Primary Heat Transport System) द्वारा किया गया है। इस सिस्टम का निर्माण सर्वोत्तम तकनीक से किया गया है। इस सिस्टम के किसी भी बड़े पाइप की टूटने की सम्भावना जिससे संयंत्र से ऊष्मा निकालने में रूकावट आये, दस हजार साल में एक है। इस छोटी सी सम्भावना को भी ध्यान में रखते हुये तीन अलग अलग प्रकार के स्वतन्त्र एवं स्वतः चालित इमरजैन्सी कोर कूलिंग (Emergency core cooling) का निर्माण किया गया है जो कि किसी भी अवस्था में संयंत्र से ऊष्मा निकालने में सक्षम हैं ताकि तापमान बढ़ने पर सिरेमिक ईंधन का रेडियो धर्मी पदार्थ बाहर न आ सके।

परमाणु बिजलीघर का निर्माण करने में नाभिकीय इन्जीनियरों एवं वैज्ञानिकों का यह उद्देश्य रहा कि संयंत्र में कोई दुर्घटना घटे ही नहीं, यदि दुर्भाग्यवश कोई दुर्घटना हो तो जनता पर इसका प्रभाव न के बराबर हो। अर्थात्
If it matters it shoud not happen, if it happens, it should not matter.

यदि कोई दुर्घटना हो तो जनता पर इसका प्रभाव न पड़े, इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये, संयंत्र के इंजीनियरों, भारत सरकार एवं उत्तर प्रदेश सरकार के सहयोग से Nuclear off-site Emergency response plan of public authority बनाया गया है। इस प्लान के तहत आसपास के 16 किमी. के क्षेत्र की जनसंख्या की निशानदेही की गयी है। इस प्लान में आफ-साइट इमरजेन्सी डायरेक्टर (off-site Emergency Director) डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट, बुलन्दशहर को बनाया गया है। इस प्लान के तहत, दुर्घटना की तीव्रता, हवा की दिशा, प्रभावित आबादी क्षेत्र से जनसंख्या को हटाकर सुरक्षित स्थानों पर पहुंचाने एवं उनके दवा, खाने पीने जैसे सारे कार्यों की पहले से ही पूर्ण रूप से अधिकारियों को जिम्मेदारी

दे दी गयी है। प्रत्येक अधिकारी का नाम पहले से ही घोषित है ताकि दुर्घटना के समय कोई हड़बड़ी (Confusion) न हो।

यह बात ध्यान में रखने की है दुर्घटना होने के बाद कम से कम चौबीस घंटे तक रिएक्टर भवन अपने अंदर रेडियोधर्मी पदार्थ रख सकता है, और इस चौबीस घंटे के अंदर दुर्घटना की तीव्रता और इससे होने वाले प्रभाव का पूर्ण अनुमान किया जा सकता है। यदि आवश्यक हो तो जनता को उस क्षेत्र से हटाया भी जा सकता है। इस बात को परखने के लिये कि जिला अधिकारी की निर्धारित समय में वाहन एकत्र करने एवं जनता को हटाने की क्षमता है कि नहीं, गत सितंबर मे एक आपात ड्रिल (Emergency Drill) की गयी जिसमें इस प्लान के तहत होने वाले सारे कार्य किये गये और सभी संतोषजनक पाये गये।

भोपाल के नागरिक जानते हैं कि दुर्घटना के समय, चौबीस घंटे मिलने का क्या महत्त्व है। यदि यूनियन कार्बाइड फैक्टरी में दुर्घटना के समय चौबीस घंटे का समय मिलता तो कोई भी जान नहीं जाती और ये भी जानते हैं कि "आपातकालीन कार्य योजना" (emergency Action Plan) न होने के कारण, जिला एवं फैक्टरी के अधिकारी अपना कार्य करने में पूरी तरह सफल न हो सके।

प्रथम बात तो यह है कि परमाणु बिजलीघर में अधिक तीव्रता की दुर्घटना होने की सम्भावना न के बराबर है। विभिन्न प्रकार की छोटी-छोटी दुर्घटनाओं के लिये भी सारे उचित प्रबन्ध पूर्ण रूप से जुटा दिये गये हैं और यह सब एक ही लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये किया गया है, वह लक्ष्य है कि 1000 वर्ष में परमाणु बिजलीघर से मृत्यु की संभावना का मान एक ही हो।

यूरेनियम - उत्पादन और इस्तेमाल

महेन्द्र कुमार बतरा
अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक
यूरेनियम कार्पोरेशन ऑफ इंडिया लि.
जादुगोड़ा माइन्स-832 102
सिंहभूम, बिहार

प्रस्तावना

खनिज पदार्थों का महत्व बहुत पुराने जमाने से माना गया है। ऋषि कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में खनिज पदार्थों को देश की संपदा माना है और कहा है कि ये देश की समृद्धि का स्रोत हैं। खनिज एवं धातुओं की खोज और विकास की कहानी मनुष्य द्वारा विभिन्न युगों के दौरान इसमें किये गये प्रयासों और विकास का इतिहास है। ऐतिहासिक दृष्टि से सभ्यता की पहचान मनुष्य के खनिजों के इस्तेमाल करने की योग्यता और कुशलता से की गयी है। इसी आधार पर विभिन्न युगों के नाम-पाषाण युग, कांस्य युग, लोह युग दिये गये हैं और वर्तमान युग को परमाणु युग कहा जाता है । संसार से किसी भी राष्ट्र का जीवन स्तर, उसकी आजीविका तथा सुरक्षा, खनिज तथा ईंधन की जरुरतों को पूरा करने की क्षमता पर निर्भर करता है। यद्यपि प्रत्यक्ष रुप से खनिजों तथा ईंधन का महत्व सफल राष्ट्रीय उत्पादन (GNP) के लिए नहीं है, तथापि खनिजों के भंडार राष्ट्रीय कल्याण, जीवन स्तर तथा देश को शक्तिशाली और अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए अत्यन्त ही आवश्यक हैं।

यूरेनियम

यूरेनियम की पहचान 1789 में हुई थी और इसका नाम यूरेनस (Uranus) ग्रह के आधार पर पड़ा । लेकिन इसकी मशहूरी 1945 में हुई जब अणु बम की महाविनाशकारी शक्ति का प्रदर्शन किया गया । यद्यपि इस शक्ति का प्रारंभिक विकास सामरिक उद्देश्य के लिए हुआ लेकिन शीघ्र ही इसके आर्थिक महत्व को समझ लिया गया कि यूरेनियम, नाभिकीय ऊर्जा का साधन हो सकता है और यूरेनियम का गवेषण (Exploration) खुले पैमाने पर शुरु हो गया ।

ऊर्जा स्रोत के रुप में यूरेनियम कितना महत्वपूर्ण है इसका अन्दाजा इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि एक ग्राम यू-235 के समस्त विखंडन के फलस्वरुप एक मेगावाट-दिन विद्युत शक्ति उपलब्ध हो सकती है जो लगभग 1,40,000 टन कोयले से उत्पन्न शक्ति के बराबर है। 400 मेगावाट क्षमता वाले एक नाभिकीय रिक्टर के लिए जिसमें इंधन के रुप में प्राकृतिक (Natural) यूरेनियम और विमंदक (Moderator) के रुप में भारी पानी इस्तेमाल होता है, प्रति वर्ष लगभग 60 टन यूरेनियम चाहिए, यानी 3 वेगन प्रति वर्ष। कोयला से संचालित बिजलीगृह को इतनी ही शक्ति के लिए लगभग 5,000 टन कोयला, यानी 200 वेगन प्रति दिन चाहिए।

भू-विज्ञान

पहले-पहले यूरेनियम अयस्क के बारे में लोगों का ध्यान इसमें निहित रेडियम के अंश की ओर ही था बाद में इस क्षेत्र में काफी खोज मैडम क्यूरी ने की । यूरेनियम का प्रथम महत्वपूर्ण स्रोत चेकोस्लोवाकिया में जोकिमस्थल खान तथा उत्तरी कनाडा में रेडियम लेक नाम के क्षेत्र में मिला । आज लगभग 50 देशों में करीब 50,000 टन यूरेनियम का खनन प्रति वर्ष किया जाता है और इसमें मुख्य है -अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया । यूरेनियम प्रकृति में फैला हुआ है और भू-पटल में इसकी मात्रा केवल 4 पी पी एम है। यूरेनियम चांदी, सोना की अपेक्षा काफी मात्रा में पाया जाता है लेकिन तांबा, सीसा, जस्ता तथा निकेल के मुकाबले में कम मात्रा में मिलता है । अधिकांश यूरेनियम का उत्पादन ऐसे अयस्कों से होता है जिनमें यूरेनियम की मात्रा आधा किलो से 20 किलोग्राम प्रति टन तक होता है । यूरेनियम कभी भी तात्विक अवस्था में नहीं पाया जाता है बल्कि सदैव ही दूसरे तत्वों के साथ रासायनिक संघटन (Chemical Composition) के रुप में विद्यमान रहता है। ऐसे करीब 100 से भी ज्यादा प्रकार के खनिज हैं। यूरेनियम के भंडार प्रीकेम्बीयन सेन्ड स्टोन में और सीसा निक्षेप के रुप में पाये जाते हैं ।

यूरेनियम, सोना और तांबे के अयस्कों से भी मिलता है लेकिन इसकी मात्रा बहुत ही कम होती है । यूरेनियम, काले स्लेटी पत्थर में भी पाया जाता है । यूरेनियम का एक गुण है इसका कई वैलेन्सी स्टेट में पाया जाना । प्रकृति में इसकी उपस्थिति और प्राक्रमिक रसायन में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है ।

प्रमुख यूरेनियम खनिज को वाणिज्यिक दृष्टिकोण से प्राइमरी तथा सेकन्डरी, दो वर्गों में बांटा जा सकता है । प्राइमरी वर्ग में यूरेनियम के ऑक्साइड जैसे यूरेनिनाइट, पिचब्लेन्ड इत्यादि हैं । इनमें यूरेनियम की मात्रा अधिक होती है । दूसरे स्तर के खनिज घुले हुए यूरेनियम के एमिग्रेशन (Emigration) के कारण बन जाते हैं तथा इसमें वैनाडेट, फासफेट तथा सिलिकेट शामिल हैं । भारत में पाये जाने वाले यूरेनियम अयस्क संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया की अपेक्षा बहुत कम स्तर के हैं, बहुधा 1/3 से भी कम मात्रा में हैं । निम्न स्तर होने के कारण अभी तक भारतवर्ष में वाणिज्यिक निक्षेप बहुत कम हैं । एक 500 मेगावाट प्लांट के लिए, जिसमें 30 वर्ष तक इस्तेमाल के लिए करीब 2000 टन यूरेनियम की आवश्यकता होती है । इसके लिए खान में 0.05 % U_3O_8 ग्रेड वाले यूरेनियम का करीब 50 लाख टन से भी अधिक का भंडार होना चाहिए ।

गवेषण तथा पूर्वेक्षण

रेडियोएक्टिवता : रेडियोएक्टिवता के कारण यूरेनियम अयस्क की खोज अन्य खनिजों की अपेक्षा कुछ अलग है और गवेषण के लिए रेडियोएक्टिवता तथा भू-भौतिक तकनीक का इस्तेमाल किया जाता है । हवाई जहाज के उड़ान के दौरान ऊंचाई के ग्रिड में ऐसी व्यवस्था की जाती है ताकि हवाई जहाज कम ऊंचाई पर उड़ाया जा सके और इस उड़ान के दौरान ऐसे क्षेत्र जहां की रेडियोएक्टिवता असाधारण रुप से अधिक होती है उसका पता चल जाता है और उसको नक्शों में अंकित कर लिया जाता है । उसके बाद ज़मीन पर सिंटिलेशन काउन्टर तथा गिगरमूलर काउन्टर का उपयोग करके रेखांकित किया जाता है । उसके बाद अयस्क के भंडार का पता लगाने के लिए सेंपलिंग, कोर ड्रिलिंग तथा गवेषण खनन किया जाता है ।

भारत में यूरेनियम

भारतवर्ष में प्रमुख यूरेनियम भंडार दक्षिण बिहार में सिंहभूम थ्रस्ट बेल्ट में है । यहां 1937 में एक प्रास्पेक्टर श्री. जॉन मूरे को जो कि कॉपर खान एरिया में काम कर रहे थे, यूरेनियम का एक सैंपल मिला । इस सैंपल का विश्लेषण भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण (GSI) की कलकता स्थित प्रयोगशाला में किया गया । जब यूरेनियम की खोज भारत में शुरु हुई तो वर्ष 1950 में भू-वैज्ञानिकों की एक टीम को 160 कि.मी. लंबी बेल्ट की सूक्ष्म जांच का कार्य सौंपा गया और जादुगोड़ा में यूरेनियम निक्षेप अन्ततः काफी बड़ा निकला ।

जादुगोड़ा के समीपवर्ती क्षेत्र भाटिन, नरवा पहाड़, तुरामडीह बेल्ट में और अधिक यूरेनियम निक्षेप के बारे में पता लगाया गया है ।

थ्रस्ट जोन में खनिज मुख्यतःदो फेज में बने, पहले हाई टेम्प्रेचर ऑक्साइड फेज तथा दूसरा लो-टेम्प्रेचर सल्फाइड फेज । ऑक्साइड फेज में एपेटाइट, मैगनेटाइट, यूरेनीनाइट जैसे खनिज निक्षेप एकत्रित हुए, जबकि सल्फाइड फेज में कॉपर, निकेल, मालिबडेनम के सल्फाइड खनिज बने । प्राप्त प्रमुख खनिज U_3O_8 है । काल निर्धारण के आधार पर यह अनुमान है कि यूरेनियम खनिज निक्षेप 94 करोड़ वर्ष पुराना है ।

बिहार में सिंहभूम के अलावा मध्य प्रदेश में राजनन्दगांव के समीप, हिमाचल प्रदेश में हमीरपुर के समीप तथा कर्नाटक प्रदेश के बालकुनजी में जो मंगलोर के समीप है, यूरेनियम निक्षेप का पता चला है । यूरेनियम निक्षेप राजस्थान तथा मेघालय में गामाघाट के सलीप तथा पश्चिमी खासी हिल्स के डोमियसत में भी मिलने की जानकारी प्राप्त हुई है ।

जादुगोड़ा

यूरेनियम निक्षेम जादुगोड़ा में लगभग एस.टी.बी. के मध्य में स्थित है । यहां पहले एक्सप्लोरेटरी कोर ड्रिलिंग (Exploratory Core Drilling) की गयी और उसके बाद अन्डरग्राउन्ड माइनिंग । 1961 के आसपास इस निक्षेप को निकालने का निश्चय किया गया । उसी वर्ष जादुगोड़ा माइन्स प्रोजेक्ट की स्थापना हुई । वर्ष 1967 में परमाणु ऊर्जा विभाग

के अधीनस्थ यूरेनियम कार्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड,एक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम की स्थापना हुई । इस उपक्रम का प्रमुख उद्देश्य यूरेनियम अयस्क की माइनिंग तथा मिलिंग करना और यूरेनियम सान्द्र का उत्पादन करना है । वर्ष 1968 तक प्रथम चरण में धरती से 300 मीटर तक शाफ्ट सिंकिंग और पास सिस्टम, अन्डरग्राउन्ड क्रशिंग एवं लोडिंग स्टेशन तथा लेवलों के विकास संबंधी कार्य के पूरा हो जाने पर खान को चालू कर दिया गया । खान की उत्पादन क्षमता 1000 टन प्रतिदिन की है । इस प्रतिष्ठान के तहत दो खान,एक मिल और तीन रिकवरी प्लान्ट काम कर रहे हैं ।

खनन

द्वितीय चरण में शाफ्ट सिंकिंग का कार्य जिसमें शाफ्ट की गहराई 640 मीटर तक बढ़ाई गई, वर्ष 1977 में पूरा हो गया। अयस्क के निकालने के लिये मुख्य रुप से "कट एण्ड फिल" पद्धति का इस्तेमाल किया जाता है । जिस एरिया से अयस्क निकाला जाता है उसे मिल के डिस्लाइम टेलिंग (आशिष्ट) से भर दिया जाता है । जादुगोड़ा प्रथम भूमिगत मेटल माइन्स थी जिसने देश के स्वतंत्र होने के पश्चात उत्पादन शुरु कर दिया तथा जिसके निर्माण के दौरान भारत में पहली बार अनेकों नई प्रकार की तकनीकियों का इस्तेमाल किया गया, उदाहरण के तौर पर,एक 90 मीटर टॉवर का निर्माण कार्य 10 दिनों में पूरा किया जाना तथा स्लिप फार्म विधि से कंक्रीट लाइनिंग। जादुगोड़ा खान की डिजाइन उत्कृष्ट है जिसमें नये विन्यासों तथा उपकरणों का प्रयोग किया गया है; फ्रिक्शन टाइप वाइन्डर,अन्डर ग्राउन्ड क्रशर,टायरमाउन्टेड लोडर,अपर ड्रिलिंग इत्यादि । एक दूसरी खान,भाटिन का निर्माण 1987 में हुआ । भाटिन जादुगोड़ा से तीन किमी. की दूरी पर समान भौगोलिक वातावरण में स्थित है । इस खान में अभी स्ट्रिपिंग पद्धति का इस्तेमाल किया जा रहा है । इस खान में भी "कट एण्ड फिल" पद्धति के इस्तेमाल का प्रस्ताव है ।

पेषण (मिलिंग)

खान के समीप ही एक मिल का निर्माण किया गया है जहां अवस्क से सान्द्र बनाया जाता है। यह प्लांट भी 1968 में चालू किया गया। मिल कंपाउन्ड में क्रशिंग तथा ग्राइडिंग प्लांट, लीचिंग तथा फिल्ट्रेशन यूनिट, आयन विनिमय प्लांट तथा एक सल्फ्यूरिक एसिड निर्माण यूनिट भी है। यूरेनियम अयस्क संशोधन को तीन प्रकार के प्रचालनों में विभाजित किया जा सकता है। (क) अयस्क प्रिपेरेशन (ख) मिल कन्सेन्ट्रेशन (ग) प्रोडक्ट रिकवरी। अयस्क के प्रिपेरेशन में क्रशिंग तथा ग्राइन्डिंग प्रक्रिया तथा सान्द्रण में हाइड्रोमेटलरिजकल लीचिंग पद्धति का उपयोग किया जाता है जिसमें सल्फ्यूरिक एसिड इस्तेमाल किया जाता है और उत्पाद की प्राप्ति आयन विनिमय तकनीक से की जाती है ।

अयस्क को पाउडर बनाकर उसमें सल्फ्यूरिक एसिड डाला जाता है जिससे अयस्क उसमें घुल जाती है फिर इस घोल को फिल्टर किया जाता है। प्रक्षेपण के बाद जो उत्पाद मिलता है उसका रंग पीला होता है जिसे येलोकेक के नाम से पुकारते हैं। यूरेनियम जो अयस्क में केवल 0.06% होता है उसे केक में 70% तक लाया जाता है ।

यूरेनियम सान्द्र को पालिथिन के थैलों में भरकर ड्रमों में रखा जाता है तथा इसे नाभिकीय ईंधन समिश्र (NFC) हैदराबाद को यूरेनियम डाइऑक्साइड ईंधन में परिवर्तित करने के लिये भेजा जाता है ताकि इसका इस्तेमाल रिएक्टरों में किया जा सके। भारत में तारापुर के रिएक्टर को छोड़कर, जिसमें समृद्ध यूरेनियम का इस्तेमाल किया जाता है, अन्य सभी रिएक्टरों में प्राकृतिक यूरेनियम प्रयोग में आता है ।

अभी हाल में,मिल का विस्तार कार्य किया गया है तथा अब इसकी क्षमता लगभग 1400 टन प्रतिदिन की है । संसाधन हेतु अयस्क जादुगोड़ा, भाटिन तथा यूरेनियम पृथक्करण प्लांट से प्राप्त होता है ।

उपोत्पाद

जादुगोड़ा के यूरेनियम अयस्क में अल्प मात्रा में कॉपर, निकेल तथा मालिब्डेनम होता है । अयस्क में कुछ मेगनेटाइट का भी अंश होता है । निकेल को छोड़कर इन खनिजों को उपोत्पाद पृथक्करण प्लांट में पृथक किया जाता है । निकेल पृथक करने के हेतु प्रायोगिक प्लांट लगाया गया है जहां अध्ययन कार्य जारी है ।

यूरेनियम पृथक्करण प्लांट

हिन्दुस्तान कॉपर की खान से निकाले गये ताम्र अयस्क में भी यूरेनियम खनिज मौजूद होते हैं। सुरदा, राखा तथा मुसाबनी के ताम्र सान्द्रकों के समीप ही यू.सी.आई.एल. ने भी

तीन यूरेनियम पृथक्करण प्लांट लगाये हैं जहां अल्प मात्रा में उपलब्ध यूरेनियम को निकाला जाता है । यूरेनियम कण निकालने के लिए ग्रेविटी सेपरेशन तकनीक का इस्तेमाल किया जाता है ।

पर्यावरण पर्यवेक्षण प्रयोगशाला

जादुगोड़ा में परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा एक पर्यावरण पर्यवेक्षण प्रयोगशाला की स्थापना की गई है । इस प्रयोगशाला द्वारा खान मिल में सभी कार्य स्थलों की नियमित रूप से जांच की जाती है । यह प्रयोगशाला आस-पास के क्षेत्रों के जल साधनों की भी जांच करती है । इस प्रकार इस व्यवस्था से केवल दैनिक कार्यों की स्थिति की ही जांच की सुविधा नहीं है बल्कि दीर्घकालीन आधार पर पर्यावरण संबंधी स्थिति का रिकार्ड रखने की भी व्यवस्था है ।

स्वास्थ्य संबंधी खतरे

किसी भी यूरेनियम खान में रेडियो एक्टिवता से स्वास्थ्य को अतिरिक्त खतरा होता है । इस प्रकार के खतरों के दो कारण हैं, एक रेडियो एक्टिव धूलगर्द तथा दूसरा रेडान गैस । ऐसी खानों में जहां खनिज का ग्रेड बहुत कम होता है, बाहरी विकिरण की समस्या अधिक नहीं होती है । आंतरिक विकिरण की एक प्रमुख समस्या रेडान गैस द्वारा सांसों में खींचने से उत्पन्न होती है । अयस्क के निकालने से रेडान खान के वातावरण में निर्मुक्त होकर मिल जाता है । यह तुरंत ही पानी में घुल जाता है । खानों में जहां वायु संवातन (Ventilation) की सुविधा ठीक से प्राप्त नहीं होती, रेडान अधिक मात्रा में एकत्र हो सकता है ।

यद्यपि यह सब खतरनाक लगता है परंतु यदि समुचित सुरक्षा सम्बन्धी एहतियात लिये जायें तो खनन अधिक खतरों के बगैर किया जा सकता है । रेडियो एक्टिव धूल-गर्द से होने वाले खतरों को कार्यस्थलों में जहां टूटे हुए अयस्क होते हैं पानी के छिड़काव द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है । खान में वायु संवातन की पर्याप्त सुविधा प्रदान करके रैडान के खतरों को रोका जा सकता है । विकिरण से सुरक्षा के संबंध में अन्तर्राष्ट्रीय आयोग ने विकिरण की अधिकतम मात्रा, जो शरीर के लिए हानिकारक नहीं होती है, निर्धारित की है । इसीलिये यूरेनियम के खान में वायु धूलगर्द, जल इत्यादि के सैंपल नियमित समय के अंतराल पर लिये जाते हैं, उनका विश्लेषण किया जाता है तथा स्थिति में सुधार के लिए यथावश्यक उचित कदम भी उठाये जाते हैं । यूरेनियम खान में संवातन की आवश्यकता अन्य धातुओं की खानों की अपेक्षा बहुत काफी होती है । खान में कार्यस्थलों की जांच विकिरण स्तर, वायु वाहित क्रियाकलापों तथा सरफेस की संदूषण स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिये की जाती है । खान के विभिन्न ग्रुप के कर्मचारियों में रैडान डाटर प्रोडक्ट का क्यूमुलेटिव एनुअल एक्सपोजर 1 से 1.5 WLM है जबकि इसकी स्वीकार्य सीमा 5 WLM है । शरीर में यूरेनियम तथा रैडियम के संचयन की जांच बायो-ऐसे, शरीर के संपूर्ण जांच गणन तथा श्वसन विश्लेषण द्वारा भी की जाती है जबकि शरीर की बाहरी डोज का पता, कुछ चुने हुए कामगारों के ग्रुप द्वारा पहने गये डोजीमीटर से किया जाता है । अधिकतम वार्षिक डोज की मात्रा में लगभग 6 mSu (मिली सीवर्ट) का संयोग पाया जाता है जो कि वार्षिक डोज की सीमा 50 mSV का 12% होता है ।

परियोजनाएं

पावर रिएक्टरों के लिए यूरेनियम की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए यू.सी.आई.एल. ने नरवा पहाड़ तथा तुरामडीह में दो नई परियोजनाओं को शुरू किया है जहां पर प्रतिदिन 1500 टन अयस्क का खनन किया जायेगा । अयस्क के संसाधन के लिये तुरामडीह में एक नया मिल भी लगाया जायेगा । दोनो ही खानें भूमिगत होंगी तथा खनन में "कट एण्ड फिल" और रूम एण्ड पिलर पद्धतियों का प्रयोग किया जायेगा । नरवा पहाड़ में खान में जाने का मार्ग शाफ्ट तथा डिक्लाइन से होकर होगा । तुरामडीह में रैम्प सिस्टम का नियोजन किया जाएगा तथा अयस्क को निकालने के लिए कनवेयर बेल्ट डिक्लाइन में लगाया जायेगा ।

भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग ने नाभिकीय ऊर्जा क्षमता को इस शताब्दी के अंत तक 10,000 मेगावाट करने की योजना बनाई है । इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए 50,000 टन यूरेनियम की आवश्यकता होगी, जिसके लिए और भी परियोजनाएं खोलने का इरादा है ।

नाभिकीय रिएक्टर के रासायनिक पहलू

दीन दयाल सूद
ईंधन रासायनिकी प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
बंबई - 400 085.

1. प्रस्तावना

नाभिकीय ऊर्जा में जनसमुदाय की सुरक्षा एवं वातावरण को प्रदूषणरहित रखने को बहुत महत्व दिया जाता है और नाभिकीय वैज्ञानिक के लिए ये बातें धार्मिक तथ्यों के समान हैं। नाभिकीय ऊर्जा के स्रोत हैं - यूरेनियम-235, प्लूटोनियम-239/241 एवं यूरेनियम-233, जिनके श्रृंखलाबद्ध विखंडन से ऊर्जा का उत्पादन होता है । विखंडन क्रिया से रेडियो धर्मी विखंडन उत्पाद (Fission Products) बनते हैं, इसलिए यह नाभिकीय ऊर्जा का एक अभिन्न अंग है । रिएक्टर के डिज़ाइन, संविरचन और संचालन में यह निश्चित किया जाता है कि इन किरणोत्सर्गी तत्वों को सामान्य अथवा असाधारण परिस्थितियों में भी रिएक्टर के अंदर ही समाहित (Contained) रखा जाए। इससे न तो संचालकों और जनसमुदाय को इन से खतरा पहुँचने की आशंका रहती है और न ही वातावरण का प्रदूषण होता है । यूरेनियम नाभिकीय ऊर्जा का बहुत घना स्रोत है और एक वाट बिजली के लिए केवल 3.1×10^{10} परमाणु विखंडित होते हैं । एक दिन में एक मेगावाट ऊष्मा पैदा करने के लिए केवल एक ग्राम यूरेनियम विखंडित होता है । इतनी ही ऊष्मा के लिए ढाई टन कोयला लगता है । न्यूट्रान द्वारा आरम्भ की गई श्रृंखला बद्ध विखंडन क्रिया को नियंत्रित रुप से रिएक्टर में चलाकर ऊर्जा का उत्पादन होता है । नियमित अवस्था में न्यूट्रान की मात्रा स्थिर रहती है और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में उतने ही न्यूट्रान विखंडन करते हैं । उदाहरण स्वरुप, तापीय रिएक्टरों में एक पीढ़ी में जो प्रक्रियाएँ होती हैं वह सारणी - 1 में दर्शाई गई हैं । जब सौ न्यूट्रान विखंडन में भाग लेते हैं तो 259 न्यूट्रान बनते हैं और इनमें से फिरसे 100 न्यूट्रान ही विखंडन के लिए उपयोगी होते हैं । बाकी 159 न्यूट्रान में से कुछ यूरेनियम - 238 से प्लूटोनियम बनाते हैं और कुछ अन्य पदार्थों तथा विखंडन उत्पादों में शोषित हो जाते हैं । इस तरह विखंडन के साथ-साथ प्लूटोनियम का भी उत्पादन होता है, लेकिन एक ग्राम यूरेनियम से केवल 0.5 से 0.6 ग्राम प्लूटोनियम बनता है । यदि द्रुत रिएक्टरों का प्रयोग किया

सारणी - 1

दाबित पानी रिएक्टर में न्यूट्रान समतोल

100 विखंडन ---> 259 न्यूट्रान

100 ईंधन में शोषित	**100 विखंडन में प्रयुक्त**	**59 अन्य पदार्थों में शोषित**
Pu 27	Pu 32	रचना संबंधी
^{235}U 15	^{235}U 63	पदार्थ 45
^{238}U 58	^{238}U 5	विखंडन उत्पाद 14
प्लूटोनियम व एक्टिनाइड	ऊर्जा व 259 न्यूट्रान फिसन उत्पाद	एक्टिवेषण उत्पाद

सारणी - 2

द्रुत अभिजनन रिएक्टर में न्यूट्रान समतोल

100 विखंडन ---> 292 न्यूट्रान

153 ईंधन में शोषित	**100 विखंडन**	**39 अन्य पदार्थों में शोषित**
Pu 32	Pu 84	रचना संबधी
^{238}U 121	^{238}U 13	पदार्थ 33
	^{235}U 3	विखंडन उत्पाद 6
प्लूटोनियम व एक्टिनाइड	ऊर्जा व 292 न्यूट्रान, फिसन उत्पाद	एक्टिवेषण उत्पाद

जाए तो विखंडन क्रिया में ज्यादा न्यूट्रान निकलते हैं जैसा कि सारणी-2 में दर्शाया गया है । ऐसे रिएक्टर में प्लूटोनियम का उत्पादन विखंडन से अधिक होता है और इसे अभिजनन (Breeder) रिएक्टर कहा जाता है ।

संसार में सबसे अधिक क्षमता पानी और भारी पानी वाले रिएक्टरों की है और इनमें भी ज्यादा दाबित पानी रिएक्टर हैं । भारत में मुख्यत: दाबित भारी पानी रिएक्टर स्थापित किए जा रहे हैं । इस रिएक्टर के मुख्य अंग हैं :

1. बेलन के आकार का कलेंड्रिया जिसमें समतल नलियों में ईंधन के बंडल रखे जाते हैं ।
2. स्टीम जनरेटर (बाष्प जनित्र)
3. टरबाइन
4. कंडेंसर (शीतलक) और
5. मंदक को ठंडा रखने का यंत्र

ईंधन में पैदा हुई ऊष्मा भारी पानी द्वारा ले ली जाता है जो स्वयं 300^0 सें. तक गर्म हो जाता है । इस भारी पानी से स्टीम जनरेटर में बाष्प बनाई जाती है जिससे टरबाइन चलती है और बिजली का उत्पादन होता है । इसके पश्चात, बाष्प को ठंडा करके उसका पानी बनाया जाता है और फिरसे जनरेटर में भेज दिया जाता है । इन सभी प्रक्रियाओं में रासायनिकी का बहुत ध्यान से नियंत्रण किया जाता है जिससे ईंधन या और कोई घटक विफल न हो । इस प्रकार सुरक्षा एवं रेडियोधर्मी पदार्थों के समाहन का लक्ष्य प्राप्त किया जाता है ।

2. नाभिकीय ईंधन

पानी से ठंडित सभी रिएक्टरों में यूरेनियम डाईआक्साइड (UO_2) की टिकियों का ईंधन के रूप में उपयोग किया जाता है । यदि शीतक प्राकृतिक पानी हो, तो यूरेनियम-235 का करीब 2-3 प्रतिशत तक संवर्धन करना पड़ता है परन्तु यदि शीतक भारी पानी हो तब प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग किया जा सकता है। यूरेनियम डाइआक्साइड की टिकियाँ 12-14 मिलीमीटर व्यास तथा 15-20 मिलीमीटर लम्बाई की रहती है और इन्हें जरकोलाय नली के आवरण में रखा जाता है । राजस्थान, कल्पाक्कम और नरोरा के रिएक्टरों में ये नलियाँ आधा मीटर लम्बी होती हैं और 19 नलियों का एक ईंधन बंडल बनाया जाता है । तारापुर में आवरण की नली करीब 4 मीटर लम्बी होती है और ऐसी 36 नलियों का एक बंडल बनाया जाता है ।

नाभिकीय ईंधन के कुछ विशिष्ट गुण हैं जिन्हें रासायनिकी के वर्णन से पहले समझना उचित है । एक हजार मेगावाट ऊष्मा (300 मेगावाट बिजली) वाले रिएक्टर का उदाहरण लेकर यह गुण सारणी-3 में दर्शाए गये हैं । सब से पहला गुण है **विशिष्ट शक्ति**, जिससे पता लगता है कि एक टन

सारणी - 3

नाभिकीय ईंधन के कुछ विशिष्ट गुणधर्म

[1000 मेगावाट ऊष्मा (300 मेगावाट बिजली) स्टेशन]

गुण	दाबित भारी पानी रिएक्टर	दाबित व उबलते पानी रिएक्टर	गैस ठंडित रिएक्टर	द्रुत अभिजनन रिएक्टर
ईंधन	UO_2	UO_2 (सं)	U	$UO_2 - PuO_2$
विशिष्ट शक्ति (mwt / te)	20	30 ± 5	5	200
कुल ईंधन (te)	50	33	200	5
बर्न अप (mwd / te)	7,000	30,000 - 40,000	5,000	100,000
वार्षिक ईंधन खपत (te)	50	12	70	3.5

ईंधन से कितनी ऊष्मा शक्ति पैदा की जा सकती है । इससे सीधे ही पता लग जाता है कि रिएक्टर में कितने ईंधन की आवश्यकता है। 300 MWe के भारी पानी वाले रिएक्टर के लिए 50 टन ईंधन की आवश्यकता होती है। उबलते पानी या दाबित पानी वाले रिएक्टर में केवल 33 टन ईंधन लगता है तथा द्रुत अभजनन रिएक्टरमें सिर्फ 5 टन की आवश्यकता होती है। गैस ठंडित रिएक्टर में 200 टन ईंधन की जरूरत होती है। यह ईंधन रिएक्टर में एक से तीन साल तक ऊर्जा का उत्पादन करता है और इस अवधि में इसमें कोई परिवर्तन नहीं दिखाई पड़ता तथा भुक्त-शेष ईंधन नया-सा ही दिखाई देता है। ईंधन को रिएक्टर में भरण से निकालने तक प्राप्त ऊष्मा को बर्न-अप कहते हैं । यह बर्न-अप विखंडनीय पदार्थ की मात्रा और ईंधन पदार्थ पर निर्भर होता है । भारी पानी वाले रिएक्टर में विखंडनीय पदार्थ के सीमित होने के कारण बर्न-अप केवल 7000 मेगावाट-दिन प्रति टन होता है जब कि गैस ठंडित रिएक्टर में यह यूरेनियम धातु के फूलने के कारण 5000 मेगावाट-दिन प्रति टन होता है । उबलते पानी अथवा दाबित पानी रिएक्टरों में आजकल 30,000 - 40,000 मेगावाट-दिन प्रति टन बर्न-अप सम्भव है और यह सीमा ईंधन-आवरण और आवरण-शीतक में होने वाली प्रक्रियाओं पर निर्भर होती है। द्रुत अभिजनन रिएक्टरों में 1,00,000 मेगावाट-दिन/टन से भी अधिक बर्न-अप सम्भव है। बर्न-अप जितना अधिक होगा उतनी ही ईंधन की खपत कम रहती है । सारणी से देखा जा सकता है कि जहाँ भारी पानी वाले रिएक्टर के लिए प्रतिवर्ष 50 टन ईंधन की आवश्यकता है वहाँ द्रुत अभिजनन रिएक्टर के लिए केवल 3.5 टन ही की आवश्यकता है। भुक्त शेष ईंधन में विभिन्न रासायनिकी के बहुत विखंडन उत्पादन होते हैं और इसकी रेडियो सक्रियता 10 लाख क्यूरी प्रति टन से भी ज्यादा होती है जो रेडियम से भी अधिक है ।

2.1 युरेनियम आक्साइड ईंधन का आवरण

नाभिकीय ईंधन की सारी टिकियों में ऊष्मा उत्पन्न होती है परन्तु केवल सतह से साथ छूते हुए आवरण द्वारा ही शीतक तक पहुँचती है। इसी कारण से ईंधन का केंन्द्रीय भाग सतह से अत्यधिक गर्म रहता है। पानी से ठंडित रिएक्टरों के ईंधन में सतह का तापमान 300° सें. और केन्द्र का 1500° सें. होता है। इससे आक्सीजन केन्द्र से आवरण की ओर आती है और यदि यूरेनियम आक्साइड की स्टाइक्योमीटरी (O/U = 2.00) पर नियंत्रण नहीं किया जाता तो जरकोलाय का आक्सिडीकरण हो जाता है । यह ईंधन की विफलता का महत्वपूर्ण कारण रहा है । ईंधन में हाइड्रोजन या नमी की अशुद्धता होने के कारण सुई के आकार के हाइड्राइड बन जाते हैं जो आवरण को विफल कर देते हैं। इस अशुद्धता को 5 ppm से कम रखने से विफलता 1% से घट कर 0.1 % से भी कम हो जाती है । कुछ विखंडन उत्पाद जैसे कि आयोडिन, सीजियम, टेलुरियम, केडमियम इत्यादि ईंधन नली में केन्द्र से सतह की ओर आ जाते हैं । इस भाग में आवरण नली पहले ही टिकिया के कारण खिंचाव में होती है और इन रासायनिक पदार्थों के आने से स्ट्रेस करोजन क्रेकिंग हो जाता है। सीजियम और आक्सीजन जरकोनियम के साथ अभिक्रिया कर के सीजियम जरकोनेट ($CsZrO_3$) और यूरेनियम आक्साइड के साथ प्रक्रिया कर सीजियम यूरेनट (Cs_2UO_4) बनाते हैं जिससे टिकिया आवरण नली से चिपक जाती है जो आवरण के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है । इन समस्याओं को कम करने के लिए आवरण नली की अन्दर की सतह पर एक परत जमाई जाती है : दाबित भारी पानी वाले रिएक्टर के ईंधन में ग्रेफाइट व सायलोक्सेन की और दाबित / उबलते पानी वाले रिएक्टर में नर्म जरकोनियम की। रासायनिकी और दूसरे पहलुओं के सुधार से ईंधन की विफलता 1% से घटाकर 0.02% से भी कम कर ली गई है और इसके साथ ही ईंधन का बर्न-अप 15,000 मेगावाट दिन/टन से बढाकर 30,000 मेगावाट-दिन/टन से भी अधिक कर लिया गया है। अनुसंधान के आधार पर यह आशा की जाती है कि विफलता 0.01% से भी कम हो सकेगी और बर्न-अप 50,000 मेगावाट-दिन/टन तक पहुँच सकेगा। कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि जरकलाय की जगह यदि स्टेनलेस स्टील का आवरण प्रयोग में लाया जाए तो बर्न-अप और भी बढ़ सकता है और इससे न्यूट्रान शोषण के कारण यूरेनियम-235 की संवर्धन बढ़ाने की आवश्यकता होते हुए भी यह किफायती हो सकता है।

2.2 मिश्रित आक्साइड ईंधन

आज संसार में जितने भी द्रुत अभिजनन रिएक्टर चल रहे हैं वे मुख्यतः 25 प्रतिशत प्लूटोनियम वाले

यूरेनियम-प्लूटोनियम मिश्रित आक्साइड ईंधन का उपयोग करते हैं। इस ईंधन से 1.25 का अभिजनन अनुपात मिल सकता है । मिश्रित कार्बाइड और मिश्रित नाइट्राइड, जो कि ज्यादा घनत्व और ऊष्मा चालकता रखते हैं, के उपयोग से अभिजनन अनुपात 1.4 तक पहुँचने की सम्भावना है । मिश्रित धातु ईंधन ($U_{0.75}$ - $Pu_{0.15}$ - $Zr_{0.10}$) से - जिसके बारे में अमेरिका में काफी अनुसंधान जारी है - अभिजनन अनुपात 1.5 तक बढ़ने की आशा रख सकते है। इस समय मिश्रित आक्साइड ईंधन के बारे में काफी जानकारी प्राप्त कर ली गई है और इसका वर्णन इस वार्ता में किया जाएगा । द्रुत अभिजनन रिएक्टर की ईंधन छड़ पेंसिल जितनी मोटी (5 मि.मी.) और एक से डेढ़ मीटर लम्बी होती है। ईंधन पर स्टेनलेस स्टील का आवरण होता है जिसे 600^0 सें. पर द्रवित सोडियम से ठंडा किया जाता है। टिकिया की सतह का तापमान 1000^0 सें. और केन्द्र का 2500^0 सें.तक रहता है । इस तापमान के बढ़ने के कारण आक्सीजन ईंधन के केन्द्र से सतह की ओर जाती है जिससे आवरण का आक्सिडीकरण होता है। शुरु शुरु में इसके कारण ईंधन की विफलता काफी होती थी लेकिन ईंधन में आक्सिजन / धातु का अनुपात 2.00 से 1.97 करने से विफलता में काफी कमी हो गई। केंन्द्रीय भाग में ज्यादा तापमान होने से UO_3, Pu0, Pu इत्यादि के बाष्प सतह की ओर जाते हैं जिससे यूरेनियम/प्लूटोनियम का अनुपात बदल सकता है और रिएक्टर भौतिकी में अनपेक्षित परिवर्तन हो सकते हैं। आक्सिजन / धातु के अनुपात के नियंत्रण से यह क्रिया काफी कम हो जाती है । केंन्द्रीय भाग का तापमान ऊँचा होने के कारण कई विखंडन उत्पाद भी सतह की ओर जाते हैं। द्रुत रिएक्टर में अधिक बर्न-अप के कारण विखंडन उत्पाद काफी मात्रा में पैदा होते हैं जिससे ईंधन की रासायनिकी में काफी परिवर्तन आते है। कुछ मुख्य विखंडन उत्पादोंकी रासायनिक अवस्था सारणी-4 में दिखाई गई हैं । इनमें से Cs, Mo, Te, Pd, Ba इत्यादि केन्द्र से सतह की ओर स्थानांतरित हो जाते हैं और आक्सीजन के साथ मिलकर आवरण के साथ प्रक्रिया करते हैं। आवरण के अंदर की सतह पर क्रोमियम आक्साइड की परत जम जाती है जिसके पास विखंडन उत्पादों के आक्साइड जमा हो जाते है। कहीं कहीं अंतःकर्णीय रासायनिक प्रक्रियाओं से आवरण का क्षय काफी ज्यादा हो जाता है। आवरण क्षय करीब 10 माइक्रोमीटर प्रति 10,000 मेगावाट-दिन/टन बर्न-अप होने पर भी ईंधन के रिएक्टर में रहने के अंतिम समय तक आवरण काफी मजबूत रह सकता है। कुछ प्रक्रियाएँ फिर भी इसको विफल कर देती हैं जिससे करीब 0.1% छड़े विफल हो सकती हैं। इसको और कम करने व बर्न-अप को 200,000 मेगावाट-दिन/टन तक बढ़ाने हेतु अनुसंधान जारी हैं ।

सारणी - 4

फिसन उत्पादों की रासायनिकी

तत्व	1000 विखंडनों में उत्पादन	रासायनिक स्थिती
Xe, Kr	248	Xe, Kr
Cs, Rb	210	Cs_2O, CsI, Rb_2O
Ba, Sr	112	BaO, SrO
Zr, Nb	220	ZrO_2, NbO_2
Mo	210	Mo, MoO_2
Te, Ru, Rh, Pd, Ag	460	Te, Ru, Rh, Pd, Ag
Te	29	Cs_2Te, Te
I	8	CsI
Rare earth + Y	465	$RE_{1.5}O$, REO_2

3. शीतक, मंदक इत्यादि की रासायनिकी

शीतक, मंदक तथा अन्य धाराओं की रासायनिकी के नियंत्रण का उद्देश्य है ईंधन का आवरण, पाइपिंग और घटकों की समग्रता (integrity) का निश्चित करना। रिएक्टर के पाइपिंग और अन्य घटकों के कोरोजन को कम से कम रखने का एक और भी कारण है। करोजन का उत्पाद रिएक्टर की क्रोड़ में आकर किरणोत्सर्गी हो सकते है व रिएक्टर तंत्र के बाहर जमा हो सकते हैं। इस संदर्भ में कुछ नाभिकीय क्रियाएँ इस प्रकार हैं :

$^{59}Co\ (n,\gamma)\ ^{60}Co \xrightarrow[5.2\ वर्ष]{\beta^-} {}^{60}Ni$

$^{58}Ni\ (n,p)\ ^{58}Co \xrightarrow[70.8\ दिन]{\beta^+} {}^{58}Fe$

$^{58}Fe\ (n,\gamma)\ ^{59}Fe \xrightarrow[45.1\ दिन]{\beta^-} {}^{59}Co$

$^{50}Cr\ (n,\gamma)\ ^{51}Cr \xrightarrow[27.7\ दिन]{\beta^+} {}^{51}V$

$^{94}Zr\ (n,\gamma)\ ^{95}Zr \xrightarrow[64\ दिन]{\beta^-} {}^{95}Nb \xrightarrow[35\ दिन]{\beta^-} {}^{95}Mo$

यह किरणोतर्गी पदार्थ, विशेषतः Co-58 और Co-60 लम्बी अर्द्ध आयु वाले हैं और बहुत ऊर्जा वाली गामा किरणों का उत्सर्जन करते हैं जिससे स्टीम जनरेटर, टरबाइन आदि की मरम्मत का कार्य कठिन हो जाता है । दाबित भारी पानी रिएक्टर का उदाहरण लेकर रासायनिकी के नियंत्रण के पहलुओं का अब वर्णन किया जाएगा तथा अन्य रिएक्टरों के बारे में संक्षेप में बताया जाएगा ।

3.1 दाबित भारी पानी रिएक्टर

इस रिएक्टर के चार परिपथ (Circuit) :

i) प्राथमिक शीतक सरकिट जिसमें भारी पानी से ईंधन को ठंडा किया जाता है ।

ii) मंदक सरकिट जो भारी पानी युक्त होता है ।

iii) द्वितीय शीतक सरकिट जिसमें पानी से बाष्प का उत्पादन होता है ।

iv) कंडेंसर पानी का सरकिट जिसमें बाष्प को पानी में, उसके पुनःप्रयोग के लिए बदला जाता है ।

3.1.1 प्राथमिक शीतक सरकिट

प्राथमिक सरकिट में निम्न रचनात्मक पदार्थों का उपयोग होता है :

1) ईंधन आवरण तथा दाब नली के लिए जरकोलाए
2) पाइपिंग के लिए कारबन स्टील
3) छोरों की फिटिंग के लिए 400 सीरीज स्टेनलेस स्टील
4) स्टीम जनरेटर नलियों के लिए निकल मिश्र धातु

इस सरकिट में भारी पानी करीब 300^0 सें. पर बहता है । रिएक्टर के अति शुद्ध भारी पानी द्वारा करोजन रोकने के लिए कुछ रसायन डाले जाते हैं । राजस्थान रिएक्टर के शीतक के कुछ गुण सारणी-5 में दिए गये हैं ।

सारणी - 5

राजस्थान रिएक्टर की प्रथम भारी पानी धारा

क्र.	गुण	लाक्षणिक आंकड़े	नापे हुए आंकड़े
1.	विशिष्ट प्रवाह-कत्व	$<30\mu$ Siemen / से.	17 से 25
2.	पी एच (25^0से)	9 से 10.5	10.2 से 10.4
3.	घुली हुई O_2	< 10 ppb	7
4.	घुली हुई H_2/D_2	3-20 ml/l D_2O 0.5 - 2 ppm	5
5.	Cl^-	300 ppb	120-150
6.	F^-	50 ppb	< 50

भारी पानी की शुद्धता निश्चित रखने के लिए इसका एक भाग लगातार शुद्धिकरण के लिए निकाला जाता है । राजस्थान में लगभग 1820 लिटर भारी पानी तंत्र से बहता है और शुद्धिकरण अर्द्ध आयु एक घंटा है । इस तंत्र द्वारा आयनिक तथा अघुलनशील अशुद्धियाँ दूर होती है किन्तु रेडियोलिसिस से उत्पन्न आक्सीजन अशुद्धि दूर नहीं होती । आक्सीजन के बनने की कुछ क्रियाएँ नीचे दी गई हैं :

$H_2O \longrightarrow H^* + OH^*$

$OH^* + OH^* \longrightarrow H_2O_2$

$H^* + H^* \longrightarrow H_2$

$2H_2O_2 \longrightarrow 2H_2O + O_2$

300^0 सें. पर रेडियोलिसिस द्वारा उत्पादित रेडिकल

एक दूसरे से जुड़ जाते है और रेडियोलिसिस का प्रभाव बहुत कम रहता है। फिर भी कुछ सौ ppb तक आक्सीजन पानी में रह सकती है जो अत्यधिक करोजन कर सकती है। इस समस्या का समाधान H_2/D_2 के डालने से होता है जो रेडिकल्स से निम्न प्रकार से क्रिया करते है :

$$H_2 + OH^* \longrightarrow H_20 + H^*$$
$$H_2O_2 + H^* \longrightarrow H_20 + OH^*$$
$$H_2O_2 + H_2 \longrightarrow 2H_2O$$

पानी में 0.5 से 2 ppm हाइड्रोजन डाल कर आक्सीजन की सांद्रता 10 ppb से भी कम की जा सकती है।

कारबन स्टील, प्राथमिक सरकिट में एक मुख्य पदार्थ है, उदाहरणतः राजस्थान रिएक्टर में कारबन स्टील की सतह करीब 1500 वर्ग मीटर है। इस सतह की सुरक्षा एक स्थायी चिपकने वाली मेगनेटाइट (Fe_3O_4) की परत से होती है। रिएक्टर प्रचालन की आरम्भिक अवस्था में इस परत का जमाव शुद्ध जल में 1 पीपीएम् (1ppm) लिथियम हाइड्रोक्साइड डालकर 10pH वाला जल प्राप्त किया जाता है तथा 2.5ppm हाइड्रोजन डालकर आक्सीजन की सांद्रता कम की जाती है। इस पानी को 190-205^0 सें. तापमान पर लगभग तीन सप्ताह के लिए प्रवाहित किया जाता है। तत्पश्चात इस परत की सुरक्षा, उच्च शुद्धता एवं कम आक्सिजन वाले क्षारीय पानी के उपयोग से की जाती है। लिथियम हाइड्रोक्साइड का न्यूनतम उपयोग किया जाता है, क्यों कि अधिक क्षार के उपयोग से हाट स्पाट (Hot Spot) पर क्षारीय सांद्रता बढ़ सकती है जिससे क्षारीय रिसाव के कारण पाइपिंग विफल हो सकती है। आक्सीजन की सांद्रता 10 ppb से कम रखी जाती है क्यों कि यह पाया गया है कि आक्सीजन 50 ppbया अधिक होने से करोजन काफी बढ़ जाता है और किरणोत्सर्गी पदार्थ, जैसे कि ^{60}Co, ^{58}Co, के बनने से और स्टीम जनरेटर में जमा होने से इसकी मरम्मत में समस्या आती है।

जरकलाय का उपयोग ईंधन आवरण, केलेंडरिया नली व प्रेशर नली बनाने में होता है। पानी के सरकिट में मुख्यतः दो प्रक्रियाएँ होती हैं, एक आक्सिडीकरण और दूसरी हाइड्राइडीकरण। जरकोलाय की पानी द्वारा करोजन से सुरक्षा एक चिपकी हुई काली आक्साइड परत से होती है। यदि क्लोरिन, फ्लोरिन व आक्सीजन अशुद्धियाँ वांछित सीमाओं से अधिक हों तो काली आक्साइड की परत को क्षति पहुँचती है और भूरा सफेद आक्साइड बनता है जो सुरक्षा नहीं कर सकता। यद्यपि पानी में घुली हाइड्रोजन, आक्सिजन के नियंत्रण के लिए आवश्यक है, फिर भी इसकी मात्रा न्यूनतम रखनी चाहिए क्यों कि हाइड्रोजन अधिक होने से आवरण व दाब नली का हाइड्राइडीकरण हो सकता है और वे विफल हो सकते हैं।

प्राथमिक शीतक सरकिट में स्टीम जनरेटर की नलियाँ सतह का 80 % तक होती है। राजस्थान के प्रत्येक रिएक्टर में स्टीम जनरेटर में लगभग 200 कि.मी. लम्बी नलियाँ रहती है जिनकी सतह 9000 वर्ग मी. है। इनमें से कहीं भी एक मि.मी. के छिद्र से 50 किलोग्राम भारी पानी की हानि प्रति घंटा हो सकती है। अतः स्टीम जनरेटर नलियों की समग्रता निश्चित करना परमावश्यक है। भारी पानी के रिसने से द्वितीय शीतक तंत्र में विखंडन उत्पाद व दूसरे किरणोत्सर्गी पदार्थ जाने से तंत्र में रेडियोसक्रियता फैल सकती है। स्टीम जनरेटर नलियों के लिए अधिकांशतः निकल मिश्र धातु अथवा स्टेनलेस स्टील 304 का उपयोग होता है। निकल मिश्र धातु में मोनेल (70% Ni, 30% Cu), इनकोनेल 600 (75% Ni, 15% Cu, 10% Fe) और इनकोलाए 800 (Fe + 30-35% Ni, 19-25% Cu) प्रधान है। इन मिश्र धातुओं में, विशेषतः मोनेल पर आक्सीजन का कड़ा प्रभाव पड़ता है। मोनेल का करोजन आक्सीजन की मात्रा 10 ppb से अधिक होने पर शुरू हो जाता है। इनकोनेल तथा इनकोलाए धातु भी स्ट्रेस करोजन क्रेकिंग द्वारा विफल हो सकते है यदि आक्सीजन की मात्रा 70 ppb से अधिक हो जाए। अतः आक्सीजन का उचित नियंत्रण अति आवश्यक है।

3.1.2 द्वितीय शीतक सरकिट

द्वितीय शीतक सरकिट का उपयोग प्राथमिक शीतक से ऊष्मा लेकर बाष्प उत्पादन के लिए होता है। इस सरकिट में 170° सें. तापमान पर पानी स्टीम जनरेटर में प्रवेश करता है और 250° सें. पर बाष्प के रूप में बाहर आता है। प्राथमिक सरकिट की भांति इस सरकिट के पानी में भी आक्सीजन व अशुद्धियों की मात्रा और क्षारीयता पर नियंत्रण आवश्यक है। इस सरकिट में बाष्प का उत्पादन होने के कारण, पानी में ठोस पदार्थ नहीं होने चाहिए और इसके गुणों का नियंत्रण बाष्पशील

पदार्थों द्वारा किया जाता है । मारफोलिन या अमोनिया द्वारा pH को 8.5 - 9.5 पर नियंत्रित किया जाता है तथा 1 ppm हाइड्रोजन डाल कर आक्सीजन की मात्रा को 10 ppb से कम रखा जाता है। इस सरकिट से उत्पादित बाष्प टरबाईन में बिजली उत्पादन के लिए जाती है और कंडेंसर द्वारा पानी में बदलती है। यह पानी कंडेंसर में रिसाव के कारण अशुद्ध हो सकता है, अतः इसके पुनःप्रयोग से पहले इसे शुद्ध करना होता है। जब कभी कंडेंसर का रिसाव शुद्धिकरण क्षमता से अधिक होता है, उस समय दूसरे रासायनिकों, जैसे कि सोडियम फासफेट (Na^+ / PO_4^{-3} = 2.3 - 2.6) का भी उपयोग किया जाता है ।

3.1.3 मंदक सरकिट

दाबित भारी पानी रिएक्टर में मंदक सरकिट को केवल 85° सें. से भी कम तापमान पर रखा जाता है, अतः करोजन की समस्याएँ कम रहती हैं । इस सरकिट में बोरिक अम्ल के रूप में बोरोन को शक्ति नियंत्रण के लिए उपयोग में लाया जाता है। प्रचलित आवश्यकताओं को देखते हुए बोरोन की सान्द्रता 0.4 से 4 ppm रखी जाती है। कभी कभी थोड़े समय के लिए गेडोलिनियम नाइट्रेट का उपयोग भी किया जाता है। प्राकृतिक गेडोलिनियम में 14.7% Gd-155 और 15.7% Gd-157 रहता है जिनके न्यूट्रान शोषण क्रास सेक्शन 5.8×10^4 बार्न तथा 2.4×10^5 बार्न होते हैं। इस कारण गेडोलिनियम रिएक्टर के शीघ्र नियंत्रण के लिए आदर्श पदार्थ है । रिएक्टर की बंद अवस्था में भी लगभग 16 ppm की मात्रा में गेडोलिनियम को मंदक में रखा जाता है ताकि किसी भी अवस्था में रिएक्टर क्रांतिक न हो सके। गेडोलिनियम नाइट्रेट की क्षारीय अवस्थाओं में हाइड्रोलिसिस होता है, इसलिए करोजन रोकने के लिए क्षारका उपयोग सम्भव नहीं है । इसी कारण से कलेंड्रिया और मंदक सरकिट स्टेनलेस स्टील से ही बनाये जाते है ।

3.1.4 कंडेंसर

टरबाईन से आनेवाली बाष्प को कंडेंसर द्वारा ठंडा करके पानी बनाया जाता है और यह पानी फिर से स्टीम जनरेटर में प्रयोग में लाया जाता है । कंडेंसर या तो झील व कूलिंग टावर से प्राप्त ताजे पानी से अथवा समुद्री पानी से ठंडा किया जाता है। ताजे पानी तंत्र में एडमिरेलिटी ब्रास (Cu + 28 % Zn, 1 % Sn, 0.04 % As) की कंडेसर नलियाँ बनाई जाती हैं। समुद्री पानी के लिए कंडेंसर नलियाँ अल्युमिनियम ब्रास (Cu + 22 % Zn, 2 % Al, 0.04 % As), क्युपरोनिकल (Cu + 10 % Ni) या टाइटेनियम से बनाई जाती हैं । तांबे की मिश्र धातुओं में तेज बहता हुआ पानी करोजन का मुख्य कारण है, अतः पानी का प्रवाह 2 मी. प्रति सेकंड से कम रखा जाता है। चूँकि पानी को प्राकृतिक भंडारों से लिया जाता है इसलिए छोटे छोटे जीवों के कंडेसर में होने की सम्भावना होती है और इसे रोकने के लिए क्लोरिन का उपयोग किया जाता है। कंडेसर ट्यूब के बचाव के लिए पानी में फेरस सल्फेट डाला जाता है जिससे एक बचाववाली पतली परत कंडेंसर नली में बन जाती है ।

4. दाबित पानी रिएक्टर

दाबित पानी रिएक्टर में शीतक, मंदक का भी काम करता है तथा इसके प्राथमिक तंत्र की रासायनिकी भिन्न रहती है । रिएक्टर की शक्ति के नियंत्रण के लिए बोरोन (बोरिक अम्ल) अब शीतक में ही डालना पड़ता है । बोरिक एक अम्ल है परंतु रिएक्टर में करोजन रोकने के लिए क्षारीय अवस्था में बनाये रखना बहुत जरुरी है, इसलिए बोरिक अम्ल और लिथियम हाइड्रोक्साईड, दोनों को मिलाकर ऐसे अनुपात में रखा जाता है जिससे न्यूनतम करोजन हो। एक जापानी दाबित पानी रिएक्टर के लिए आंकडे सारणी - 6 में दिखाए गये हैं ।

सारणी - 6

दाबित जल रिएक्टर पानी के गुण

विद्युत चालकता	4-80 μS / से.मी.
पी एच (25^0 सें.)	4.2 - 10.5
लिथियम हाइड्रोक्साइड	0.2 - 2.2 ppm Li
बोरिक अम्ल	0 - 4000 ppm B
हाईड्रोजन	25-35 मि.लि./ कि
आक्सीजन	< 5 ppb
क्लोराईड / फ्लोराईड	प्रत्येक < 50 ppb
सिलिका	< 500 ppb

5. उबलते पानी का रिएक्टर

उबलते पानी के रिएक्टर में भी शीतक, मंदक का काम करता है और स्टीम (बाष्प) रिएक्टर में ही उत्पन्न होती है । इसलिए इस रिएक्टर में केवल दो पानी के सरकिट है, शीतक सरकिट और कंडेंसर सरकिट। शीतक पानी में कुछ भी ठोस पदार्थ नहीं डाले जाते क्यों कि वे ईंधन के आवरण पर जमा होकर ऊष्मा के प्रवाह में बाधा ला सकते है तथा इससे ईंधन विफल हो सकता है। इसलिए शुद्ध पानी को ही शीतक के रुप में प्रयोग किया जाता है । तारापुर रिएक्टर के लिए शीतक के गुण सारणी-7 में दिखाए गये हैं ।

सारणी - 7

तारापुर रिएक्टर का पानी

गुण	लाक्षिक आंकड़े	नापे हुए आंकड़े
विद्युत चालकता μS/ से.	1.0	0.3
पी एच	5.8 - 8.6	6
क्लोराईड ppb	200	20
सिलिका ppb	1000	200
आक्सीजन ppb	400	200

निष्कर्ष :

इस वार्ता से यह स्पष्ट होता है कि नाभिकीय वैज्ञानिक, रिएक्टर के सुरक्षित व निरंतर प्रचालन के लिए उसके विभिन्न घटकों एवं तंत्रों की समग्रता के लिए विशेष उपाय करता है। ईंधन, आवरण तथा प्रचालन अवस्थाओं का चयन महत्वपूर्ण है क्यों कि रेडियो सक्रियता ईंधन में ही उत्पन्न होती है और इसका बाहर निकलना खतरनाक सिद्ध हो सकता है । नाभिकीय ईंधन के रासायनिक तथा अन्य पहलुओं के निरंतर अध्ययन से पिछले कुछ वर्षों में विफलता को कम किया गया है तथा बर्न-अप बढ़ाया गया है । प्राथमिक शीतक, द्वितीय शीतक, मंदक तथा कंडेसर सरकिटों में रासायनिक अवस्थाओं को बहुत ही सावधानी पूर्वक नियंत्रित किया जाता है । विभिन्न सरकिटों में उपयोग किये जानेवाले जल की शुद्धता लगभग आसवित जल जैसी होती है । करोजन बचानेवाले रसायन पानी में डालकर करोजन को और भी कम किया जाता है जिससे क्लेड तथा रिएक्टर के घटकों की विफलता बहुत कम रहती है। सावधानियों के फलस्वरुप कोई घटक व ईंधन विफल नहीं होते हैं और रेडियोधर्मी पदार्थ वातावरण में नहीं आते हैं। अतः नाभिकीय शक्ति द्वारा विद्युत उत्पादन एक सुरक्षित एवं प्रदूषणरहित विधि कही जा सकती है ।

भारत के नाभिकीय बिजली विकास में बीएचईएल (भोपाल) का योगदान

राधाकृष्ण सराफ,
कार्यपालक निदेशक
बीएचईएल, भोपाल.

मानव को उपलब्ध परंपरागत पुराने ईंधन ऊर्जा स्रोतों के प्राकृतिक भंडार सीमित हैं तथा बिजली की बराबर बढ़ती हुई मांग के कारण ऊर्जा के ये भंडार तेजी से समाप्त होते जा रहे हैं । पनबिजली जैसे अन्य प्राकृतिक ऊर्जा स्रोतों का दोहन, कम खर्च पर, एक सीमा तक ही किया जा सकता है । ऊर्जा का कम लागत पर उपलब्ध, असीमित वैकल्पिक स्रोत नाभिकीय ऊर्जा है । किन्तु इस ऊर्जा को अत्यन्त सुरक्षा एवं सावधानी के साथ उपयोग में लाने की सबसे अधिक जिम्मेदारी मानव समाज की है ।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब औद्योगिक क्रान्ति आरंभ हुई तब हमारे स्वर्गीय प्रधानमंत्री पंडित नेहरु ने शांतिपूर्ण कार्यों के लिए नाभिकीय बिजली के उपयोग की कल्पना की थी । वे मानते थे कि देश के सतत् विकास और प्रगति के लिए यह एक महत्वपूर्ण स्रोत है । शांतिपूर्ण कार्यों के लिए नाभिकीय ऊर्जा के उपयोग का कार्यक्रम बिजली उत्पादन के साथ-साथ अन्य कई क्षेत्रों में भी आरंभ किया गया ।

क्वथन जल रिएक्टर (BWR) टेक्नालॉजी पर आधारित तारापुर 2x200 मेगावाट परमाणु विद्युत परियोजना तथा दाबित भारी पानी रिएक्टर (PHWR) 2x200 मेगावाट राजस्थान परमाणु बिजली परियोजना इस क्षेत्र में पहली महत्वपूर्ण उपलब्धियां हैं ।

परमाणु ऊर्जा विभाग ने स्वदेशी उत्पादन तथा आत्मनिर्भरता की दिशा में नाभिकीय टरबाईनों का पूर्ण भारतीय विनिर्माण किए जाने पर बहुत जोर दिया था । नाभिकीय बिजली उपस्करों के विनिर्माण में आत्मनिर्भरता के लिए भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड (बीएचईएल), भोपाल ने अधिकतम संभव स्वदेशीकरण के लक्ष्य पर हमेशा पूरा ध्यान दिया है । केवल विशेष अलॉय इस्पातों तथा कुछ प्रोप्रायटरी आइटमों को छोड़कर तकरीबन पूरे उपस्कर स्वदेशी स्रोतों से विनिर्मित किए गए हैं ।

बीएचईएल, भोपाल ने मेसर्स जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी (यू. के.) के तकनीकी सहयोग के अंतर्गत दाबित भारी पानी रिएक्टर तकनीक पर काम करनेवाले कांडू (CANDU) रिएक्टरों के लिए 236 मेगावाट नाभिकीय टरबाइनों का उत्पादन आरंभ किया । सत्तर के दशक में बीएचईएल, भोपाल द्वारा तामिलनाडु के समुद्र तट पर कल्पाक्कम स्थित मद्रास परमाणु बिजली परियोजना के लिए पहली यूनिट बनाई गई ।

बीएचईएल, भोपाल 236 मेगावाट नाभिकीय टरबाइनों का उत्पादन करने के पूर्व, ताप बिजली परियोजनाओं के लिए 120 मेगावाट टरबाइनों का उत्पादन करता था । रिएक्टर की लगभग दोहरी रेटिंग तथा अत्यंत निम्न बाष्प विनिर्देशनों (40 एटीए, 250^{0} सें. और 0.26% गीलापन) की तुलना में नाभिकीय टरबाइन में इससे कई गुना अधिक भाप (1332.2 टन प्रति घंटा) की आवश्यकता होती है, जिसके लिए स्पष्ट रुप से काफी बड़े प्रवाह क्षेत्र और उसी के अनुकूल टरबाइन के बहुत बड़े पेचीदे और अत्यंत सूक्ष्म तथा बिलकुल ठीक उपकरण उपयोग में लाने होते हैं । अंतिम स्तरीय ब्लेडें 676.3 मि मी. लंबी होती हैं जो 3000 आर. पी. एम की गति से 2132.3 मिमी. के मध्य व्यास में घूमती हैं ।

इस टरबाइन के बड़े घटकों (काम्पोनेन्टों) के विनिर्माण के लिए विशेष प्रकार के मशीन टूल और परीक्षण सुविधाएं स्थापित की गईं । इन मशीन टूलों पर काम करने और इनकी असेम्बली तथा टेस्टिंग के लिए अपेक्षित लोगों को कार्य का प्रशिक्षण दिया गया ।

चूंकि नाभिकीय टरबाइनों में भाप हमेशा गीली रहती है इसलिए घटकों को नष्ट होने से बचाने तथा उनमें जंग न लगने देने के लिए प्रतिरोध क्षमता पैदा करने हेतु विशेष प्रकार की 'हार्ड फेसिंग' तकनीकों का इस्तेमाल किया जाता है, जिसके लिए विशेष सुविधाओं का विकास किया गया ।

मद्रास परमाणु विद्युत परियोजना (MAPP) के लिए

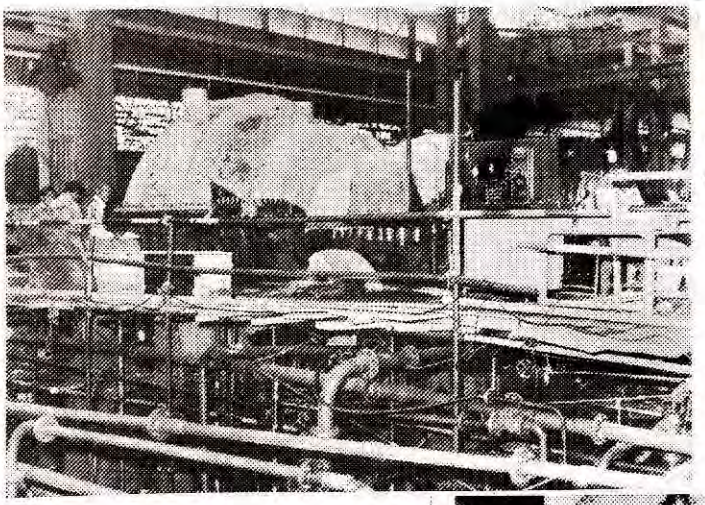

१६.४ मे.वा. एफ.बी.टी.आर. टरबाइन,
आई.जी.सी.ए.आर

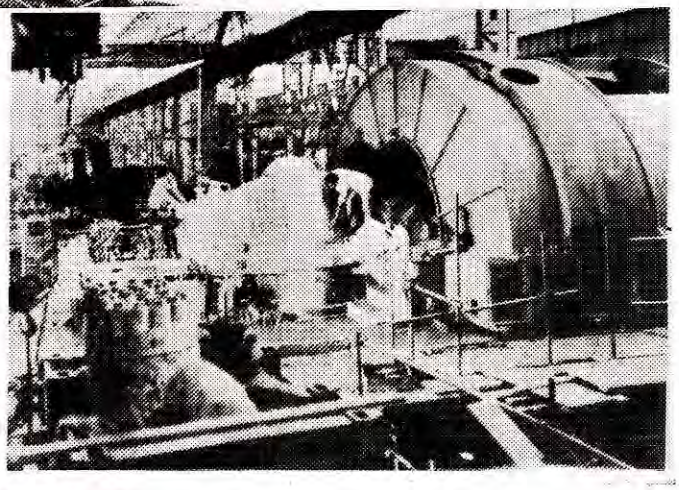

२३६ मे.वा. टरबाइन (नाभिकीय बिजली घर)

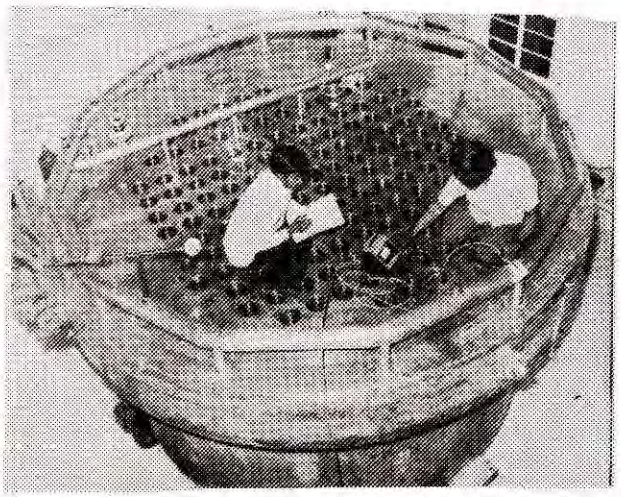

सिरा - परिक्षक समुच्चय
(End Shield Assembly)

आवश्यक टरबाइनें प्रोटोटाइप डिज़ाइन की थीं और इनका विनिर्माण बीएचईएल, भोपाल में पहली बार किया गया था । इसलिए कुछ आरंभिक परेशानियों का सामना अवश्य करना पड़ा । किन्तु इनका समाधान निकाला गया और तदनुसार डिज़ाइन में संशोधन किया गया ।

इसके बाद उत्तरप्रदेश के नरोरा (NAPP) में 2x236 मेगावाट नाभिकीय विद्युत परियोजना आई । इन मशीनों को इस बात का लाभ मिला कि एमएपीपी यूनिटों के लिए किए गए सभी परिवर्तनों को नरोरा मशीनों में विधिवत् अपनाया गया । इसके साथ ही सुरक्षा का भी पूरा ध्यान रखा गया और सभी संबंधित तंत्रों का भूकंपी विश्लेषण किया गया, क्योंकि नरोरा भूकंपी क्षेत्र में आता है । एनएपीपी की यूनिट एक का परिनिर्माण किया जा चुका है और निकट भविष्य में इसके सिंक्रोनाइजेशन की योजना है । यूनिट दो का परिनिर्माण कार्य भी करीब-करीब पूरा हो रहा है ।

बीएचईएल, भोपाल को 236 मेगावाट नाभिकीय टरबाइनों के 6 सेटों को बनाने की जिम्मेदारी भी सौंपी गई है । गुजरात के काकड़ापार परमाणु बिजली घर के लिए 2x236 मेगावाट टरबाइनों का विनिर्माण हो गया है और उपस्करों की सप्लाई करीब-करीब पूरी हो गई है । राजस्थान परमाणु विद्युत परियोजना की 2x236 मेगावाट नाभिकीय टरबाइनें और काइगा परमाणु विद्युत परियोजना की 2x236 मेगावाट का विनिर्माण किया जा रहा है । काइगा के लिए सरकार ने चार और सेटों का अनुमोदन कर दिया है ।

टरबाइन और आर्द्रता प्रथकित्र (मॉयस्चर सेपरेटर) तथा 236 मेगावाट रेटिंग के पुनःतापित्र (रिहीटर) के मानक विनिर्माणों के अलावा आदेश प्राप्त होने पर एंड शील्ड, संधारित्र (कन्डेंसर) तथा ऊष्मा विनिमायक (हीट एक्सचेंजर) जैसे अन्य नाभिकीय बिजली घर सहायक उपकरणों का विनिर्माण भी बीएचईएल, भोपाल में किया जाता है ।

इसके साथ-साथ द्रुत अभिजनक रिएक्टर (FBTR) जैसी अन्य रिएक्टर प्रौद्योगिकी भी भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र द्वारा विकसित की जा रही है । बी ए आर सी ने 16.4 मेगावाट के FBTR का डिज़ाइन किया है और बीएचईएल, भोपाल ने एफबीटीआर पैरामीटर से मेलखाती 16.4 मेगावाट एफबीटीआर टरबाइन का डिज़ाइन एवं विनिर्माण अपनी आंतरिक डिज़ाइन क्षमताओं से किया है । इस टरबाइन का परिनिर्माण कल्पाकम्म स्थित इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केन्द्र में किया गया है ।

भारत में नाभिकीय कार्यक्रमों की शुरुआत से ही बीएचईएल, भोपाल अपना भरपूर योगदान देता रहा है । रिएक्टर कॉम्पोनेन्टों के विनिर्माण में उच्चतम संभव एहतियात और सावधानी बरतने की जरुरत होती है, क्योंकि जरा सी भी गलती विनाशकारी हो सकती है । इसीलिए आरएपीपी और ध्रुव रिएक्टर की एन्ड शील्डों का विनिर्माण बीएचईएल, भोपाल में सख्त गुणवत्ता नियंत्रण उपायों के तहत किया गया है ।

वर्तमान में भारत में नाभिकीय पॉवर प्लांट की स्थापित प्रचालन क्षमता 1310 एम डब्ल्यू ई (MWe) है, जिसमें 470 एम डब्ल्यू ई का योगदान बीएचईएल, भोपाल का है । सरकार की सन् 2000 तक 10,000 एम डब्ल्यू ई क्षमता स्थापित करने की एक विशाल योजना है । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सरकार ने 500 मेगावाट नाभिकीय टरबाइनों के 6 सेटों को अनुमोदित कर दिया है । इन टरबाइनों का विनिर्माण बीएचईएल, हरिद्वार में करने की योजना है और भोपाल इनके लिए मॉयस्चर सेपरेटर तथा रिहीटर का विनिर्माण करेगा ।

भोपाल संयंत्र के नाभिकीय पॉवर संबंधी उपकरणों के विनिर्माण में योगदान देने के अतिरिक्त बीएचईएल की अन्य यूनिटों ने भी टरबोजेनरेटर सेटों, स्टेनलेस स्टील रिएक्टर पात्र, उच्च ताप द्रव सोडियम विनिमायक, स्टीम जेनरेटर तथा प्राइमरी सिस्टमों की स्टेनलेस पाइपिंग के विनिर्माण में योगदान दिया है ।

इस प्रकार बीएचईएल, भोपाल नाभिकीय पॉवर परियोजनाओं के उपकरणों के विनिर्माण में संलग्न है और शांतिपूर्ण कार्यों के लिए नाभिकीय ऊर्जा के सतत् विस्तार के लिए सेवारत है । भोपाल यूनिट निरन्तर सुधार और इन्हें विकसित करने की ओर उन्मुख है । हमारा प्रयास एवं लक्ष्य विश्वसनीयता, सुरक्षा एवं उपकरणों की उपलब्धता में सुधार करना है । हमारी उपलब्धियां परमाणु ऊर्जा विभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र एवं नाभिकीय पॉवर कॉरपोरेशन के सतत् सहयोग एवं भागीदारी से ही संभव हो सकेंगी ।

रेडियो-आइसोटोपों का औद्योगिक अनुप्रयोग

रमेश गणेश देशपांडे
मुख्य प्राधिकारी
एवम्
मिथिलेश कुमार सिन्हा
प्रबन्धक, विकिरणमापी नियामक
विकिरण एवम् आइसोटोप प्रौद्योगिक मंडल, बम्बई

प्रस्तावना

विकिरण समस्थानिकों (रेडियो आइसोटोप) के उपयोग ने पिछले तीन दशकों में व्यापक प्रगति की है। औद्योगिक विधियों में समस्थानिकों के उपयोग से उत्पादों की किस्म में उन्नति हुई है तथा निर्माण लागत में काफी कटौती हुई है। कई बार ऐसी समस्याओं का भी समाधान हुआ है जो कि दूसरी पर्यायी तकनीकों से संभव नहीं था । यह वार्ता समस्थानिकों के समसामयिक औद्योगिक अनुप्रयोगों का सर्वेक्षण है। भविष्य के अनुप्रयोगों के लिए दिशा निर्देश भी इसमें सम्मिलित है ।

समस्थानिक स्रोतों का उत्पादन

शोध-अभिक्रियकों (रिसर्च रिएक्टरों) द्वारा बहुत सारे किस्म के समस्थानिकों की समुचित कीमतों पर तत्काल पूर्ति ही इनके अनुप्रयोगों की बेशुमार वृद्धि का कारण रही है। इनके उपयोग का आवश्यकताओं के अनुरूप शुद्धिकरण एवं रसायन-परिवर्तन के लिए दूरस्थ रासायनिक प्रक्रम प्रौद्योगिकी का समुचित विकास भी हो चुका है। समस्थानिक स्रोतों की बहुत सारी रक्षित-खेपें अब वायुमार्ग, जलमार्ग तथा धरातल परिवहन द्वारा सारे संसार में सकुशल भेजी जा रही हैं । आइसोटोप वर्ग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंन्द्र संसार के अग्रणी स्रोत उत्पादकों में से एक रहा है। अब यह कार्य नवनिर्मित विकिरण एवम् आइसोटोप प्रोद्योगिकी मंडल करेगा। इस कार्य-हेतु कई सुविधा-प्रक्रमों का गठन किया जा चुका है जिनमें तीन शोध-अभिक्रियक तथा उत्पादन, बंधाई एवम् परिवहन के लिए तीन बड़े उत्पाद-प्रक्रम भी सम्मिलित हैं ।

विकिरण-समस्थानिकों के अनुप्रयोगों के सिद्धान्त

विकिरण-समस्थानिकों के अनुप्रयोग के तीन मूल सिद्धान्त हैं :

1. समस्थानिकों का उपयोग अनुसारक की तरह।
2. समस्थानिकों को विकिरण किरणों द्वारा पदार्थों पर असर।
3. समस्थानिकों की ऊर्जा का उपयोग।

समस्थानिकों के अनुसारक अनुप्रयोग ने सबसे ज्यादा ख्याति पाई है। एक-जीवाणु कोशिकाओं के अध्ययन से लेकर वायुमंडल के प्रवाह तक को समझने में इसका उपयोग हो रहा है। ख्यातिप्राप्त अनुसारक अनुप्रयोगों में, दफनाई हुई पाइपों का टपकन, रासायनिक प्रक्रमों के विधि-आंकड़ों का समुचित निर्धारण, गोदी और बन्दरगाहों में तलछट परिवहन, अन्तःजल की पुनरावेश विधि का ज्ञान, बांधों एवं नहरों में सीलन, द्रव-प्रवाह का मापन आदि सम्मलित हैं ।

विकिरण-किरणों का पदार्थों पर असर से संबन्धित बहुत सारे अनुप्रयोग प्रचलित हैं जिनमें गामा-चित्रण द्वारा अक्षयकारी जाँचविधि, धातु की चादरों का मोटाई मापन तथा तरल-पदार्थों की सतह का बन्द पात्रों में नियंत्रण करने वाली विकिरण-मापी नियामकें भी शामिल हैं ।

तीसरा अनुप्रयोग विकिरण के रूप में स्रोत - जन्य ऊर्जा के उपयोग से संबन्धित है। विकिरण-ऊर्जा के मुख्य अनुप्रयोगों में खाद्य-संरक्षण, चिकित्सा उत्पादों का शीत-निःसंक्रमण तथा बमूल-समूहद्वयों का उत्पादन आदि सम्मिलित है।

स्रोतों का औद्योगिक विकिरण-चित्रण अनुप्रयोग

एक्स-किरणों का ढलाई एवं झलाई-जोड़ों के अक्षयकारी परीक्षणों में उपयोग काफी समय से प्रचलित है। गामा-किरणें भी अति-ऊर्जा एक्स-किरणों के सम्यक हैं और इसलिए औद्योगिक उत्पादों के परीक्षण में अत्यंत उपयोगी हैं। गामा-किरणों के स्रोत सुवाह्य हैं, बिना बिजली के चलते हैं और इसलिए सुदूर क्षेत्रकार्यों के लिए उपयुक्त हैं। इरीडियम-192 तथा कोबाल्ट -60 स्रोतों से बने 600 से भी अधिक विकिरण-चित्रण यन्त्र भारतीय उद्योगों के उपयोग में हैं जिनमें, उच्च-चाप-पात्र उद्योग, जहाजरानी उद्योग, वायुयान उद्योग, नाभिकीय एवं ताप ऊर्जा संयन्त्र, खाद्य एवं पेट्रोरसायन उद्योग शामिल हैं ।

संलग्न चित्र-1 में विकिरण-चित्रण यन्त्र का सिद्धान्त दिखाया गया है । चित्र 2-3-4 इस यन्त्र की संरचना की रुपरेखा दिखाते हैं ।

विकिरणमापी नियामकें

जब विकिरण-किरणें पदार्थों से गुजरती हैं तो इन विकिरण-किरणों का तनूकरण होता है । यह तनूकरण माध्यम के घनत्व एवं मात्रा पर निर्भर है । इस तरह, विकिरण-किरणें जब धातु की चादरों से होकर गुजरती हैं तो विकिरण का तनूकरण चादर की मोटाई पर निर्भर करता है । इस सिद्धान्त का व्यावहारिक उपयोग अल्यूमिनियम, प्लास्टिक, लोहा आदि उद्योगों में उत्पादन-विधि विकास, मापन तथा विधि-नियन्त्रण में अत्यन्त प्रचलित है । इसी तरह, बन्द पात्रों में क्षयकारी तरल पदार्थों का अछूत सतह-मापन तथा नियन्त्रण संभव हुआ है । समस्थानिक नियामकों का व्यापक उपयोग घरेलू गैस, सिगरेट एवं साबुन-पाऊडर के पैकेटों को भरने में किया जा रहा है। आज, लगभग 1500 नियामकें भारतीय उद्योग में, मुख्यतः इस्पातउद्योग में इस्पात की चादरों की मोटाई के नियन्त्रण तथा कुछ जगह कोयले में राख की मात्रा मापने के लिए लगे हुए हैं।

एक और उपयोग घरों में, बैंकों में तथा बहुमंजिली इमारतों में काफी लोकप्रिय हुआ है। यह विकिरण-ऊर्जा के आवेशीकरण क्षमता से सम्बन्धित है। अल्फा-किरणें देनेवाले समस्थानिक से बना यह धूम्र-संसूचक आनेवाले विशाल अग्निकाण्ड की संभावना की पूर्वसूचना देता है । चित्र-5 में इस संसूचक की संरचना दिखलाई गई है ।

स्वयं-दीप्त स्रोत

स्वयं-दीप्त पदार्थ कृत्रिम रूप से ट्रीशियम या प्रोमिथियम-147 विकिरण समस्थानिकों से बनाया जाता है । यह अब परंपरागत रेडियम पेन्टों की जगह उपयोग में आने लगा है। ये उपकरणों के पटलों आदि को ज्योतिष्मान रखने में अत्यन्त सक्षम हैं। ये परंपरागत रेडियम की तुलना में कम विषाक्त एवं कम खर्चाले हैं । इसके अलावा, जिस स्फुर-दीप्त पदार्थ के साथ ये मिलाए जाते हैं उन्हें ये कम नुकसान पहुंचाते हैं ।

विकिरण-अनुसारक अनुप्रयोग, टपकन का परिचायन

जमीन के अन्दर दफनाई हुई पाइपों तथा युक्तियों के टपकन के परिचायन में विकिरण-समस्थानिक अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं । "वेग-ह्रास" विधि में, प्रवाह की दिशा में पाइपलाईन के विभिन्न-भागों में जल का प्रवाह, विभिन्न बिन्दुओं के बीच, अनुसारक के परिवहन में लगी अवधि के मापन से लगाते हैं। किसी खास भाग में अगर वेग-ह्रास होता है तो उस भाग में टपकन-क्षेत्र होने की संभावना है । इस विधि से मिट्टी के अन्दर हो रहे पाइपलाईन के टपकन का बिना मिट्टी हटाए अनुमान लगा सकते हैं। इसी कार्य के लिए एक दूसरी विधि यह है कि, विकिरण अनुसारक वा चापयुक्त घोल पाइपलाईन में भर दी जाती है । इस चाप के कारण टपकनेवाले स्थान पर विकिरण अनुसारक मिट्टी में टपक जाता है । इसके बाद, पानी के प्रवाह से पाइपलाईन साफ कर दी जाती है । टपकनेवाले स्थान का पता, किसी सुवाह्य विकिरण परिचायक उपकरण द्वारा, पाइपलाईन की पूरी लम्बाई में विकिरण ढूंढकर लगा लेते हैं । इस तकनीक का असाधारण उदाहरण 140 किलोमीटर लम्बी विरमगम-कोयाली पाइपलाईन है जहां करीब एक वर्ष का समय इस तकनीक द्वारा, पाइपलाईन के संस्थापन में बचाया गया था ।

घिसाई का अध्ययन

किसी भी यन्त्रावली, यन्त्र के अंश तथा काटनेवाले औजारों की रीतिगत विधिओं से घिसाई-दर का अनुमान लगाना टेढ़ी खीर है। विकिरण-अनुसारक के उपयोग द्वारा न सिर्फ घिसाई-दर का अतिशुद्ध अनुमान मिलता है बल्कि यह काम जल्दी और कम लागत में भी पूरा हो जाता है । जिस अंश की घिसाई मापनी है उसे पहले नाभिकीय अभिक्रियकों में न्यूट्रान द्वारा विकरित करके विकिरण सक्रिय बना लेते हैं या

फिर साईक्लोट्रोन में ड्यूट्रोन या प्रोटोन जैसे आवेशित कणों द्वारा विकरित कर लेते हैं। विकरित अंश को परीक्षण-संयन्त्र में रखकर इस्तेमाल करते हैं और उसके बाद घिसाई-मलबे में तथा स्नेहक तेल में गई हुई विकिरण-सक्रियता, स्फुरण-गणित्र उपकरण द्वारा माप लेते हैं। वाहन-अनुसंधान केन्द्र, पूना ने इस तकनीक द्वारा विभिन्न उत्पादकों द्वारा बनाए गए पिस्टन-छल्ला में घिसाई-दर का अन्तर पाया है और इसका सम्बन्ध उनकी संविरचना से भी स्थापित किया है। भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून ने भी इसी प्रकार का कार्य किया है ।

विकिरण प्रक्रिया

औद्योगिक प्रक्रियाओं में विकिरण का अनुप्रयोग अब प्रयोगशाला से निकलकर एक सक्षम औद्योगिक कार्यविधि बन चुकी है । आज विकिरण-प्रक्रिया द्वारा करीब 200 करोड़ डालर का उत्पादन हर-साल होता है जिनमें प्लास्टिकों के गुण-सुधार, चिकित्सा-उत्पादों का निःसंक्रमण, बहुलीकरण, प्रदूषण नियन्त्रण आदि सम्मिलित हैं। अनुमानतः पिछले 15 वर्षों में विकिरण का उपयोग 10 से 15 प्रतिशत वार्षिक दर से बढ़कर संसार के 40 से अधिक देशों में सक्रिय है।

गामा विकिरण सुविधाएं

गामा-विकिरक का मुख्य अंग कोबाल्ट-60 का विकिरण-स्रोत, विकिरण सुरक्षा के लिए कंकरीट परिरक्षक, वाहक-यन्त्रावली जो कि उत्पादों को विकिरण क्षेत्र के अन्दर और बाहर ले जाता है, तथा नियन्त्रण एवं सुरक्षा-यन्त्रावली हैं। भारत में विकिरण प्रक्रिया के लिए कई विकिरण-संयन्त्र विकसित किए गए हैं (चित्र-6)।

चिकित्सा-उत्पादों का विकिरण-निःसंक्रमण

चिकित्सा सामग्री एवं युक्तियों का निःसंक्रमण ही विकिरण का सर्वाधिक विकसित अनुप्रयोग है। आज कोबाल्ट-60 के 135 औद्योगिक गामा-विकिरक संसार भर के 42 देशों में संस्थापित हैं तथा इनमें करीब 15 प्रतिशत वृद्धि वार्षिक है। 1985 तक अमेरिका में 40 प्रतिशत चिकित्सा सामग्री विकिरण द्वारा निःसंक्रमित की जाती थी। 1990 तक उत्तर-अमेरिका में सारे विसर्जनीय चिकित्सा उत्पादों में से 80 प्रतिशत गामा-प्रक्रिया से निःसंक्रमणित होने का अनुमान है। पिछले दशक में, जो उत्पादन-क्षमता एशिया, अफ्रिका तथा लैटिन अमेरिका के विकासशील देशों में स्थापित हुई है वह संसार की क्षमता का 20 प्रतिशत सुविधायें है ।

1974 में आइसोमेड संयन्त्र ट्राम्बे में संस्थापित किया गया जिसमें निम्नलिखित भाग हैं :

I. एक कंकरीट कक्ष में कोबाल्ट-60 का विकिरण-स्रोत (अधिकतम 10 लाख क्यूरी)

II. एक स्वचलित वाहक संयन्त्र जो उत्पादों को दफ्ती के मुंहबन्द डिब्बों में भरकर (आयातन 3 घनफिट) विकिरण कक्ष में ले जाता है, फिर उनको विकिरण-कक्ष में निश्चित अवधि के लिए अरक्षित छोड़ देता है और उसके बाद उसे वापस बाहर ले आता है ।

इस प्रक्रिया का नियन्त्रण वाहक-यन्त्रावली के गति निर्धारण से होता है जोकि कोबाल्ट-60 स्रोत की विकिरण-सक्रियता की जानकारी द्वारा होता है, या फिर, विकिरण-मापन तकनीक द्वारा होता है, जिसमें पारदर्शी परस्पेक्स का या किसी रासायनिक विकिरण-मापक का उपयोग होता है । इस प्रक्रिया की जीवाणुनाशन क्षमता का अनुमान किसी एक उत्पाद-बक्स में 10 लाख बी. प्यूमीलस किस्म के जीवाणुओं की पत्ती डालकर किया जाता है ।

विकिरण के लाभ

विकिरण-निःसंक्रमण विधि में कई ऐसी खूबियां हैं जो कि कई संदर्भों में बहुत ही आकर्षक हैं :

I. विकिरण द्वारा तापमान में कोई खास वृद्धि नहीं होती है जिस कारण निम्न-द्रवांक वाले प्लास्टिकों का तथा ताप-संवेदी औषधों का निःसंक्रमण भी संभव है। जैव-तन्तुओं तथा जैव-मूल के उत्पादों के निःसंक्रमण के लिए निश्चय ही, यह अतिउत्तम विधि है, या संभवतः अद्वितीय है ।

II. अधिक पारशक्ति गुण के कारण गामा किरणें जिस वस्तु का निःसंक्रमण करती हैं उसके हर भाग में लगभग समान रूप से पहुंच जाती हैं। वस्तु को हवाबन्द, टिकाऊ और जीवाणुओं के लिए अपारगम्य पैकेटों में विकिरण के लिए पहले ही बन्द कर दिया जाता है। इन विकिरण निःसंक्रमित पैकेटों की निधानी-अवधि व्यवहारतः अन्तहीन है ।

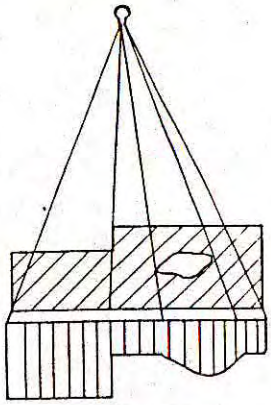

चित्र - 1

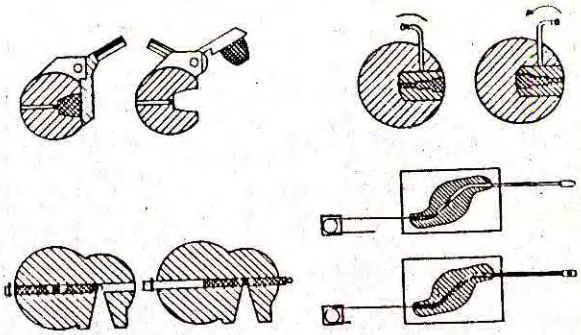

चित्र - 2

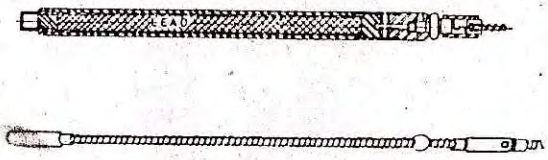

चित्र - 3

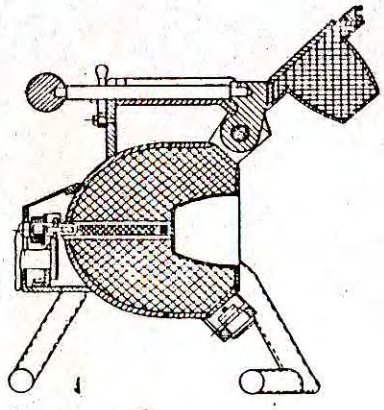

चित्र - 4

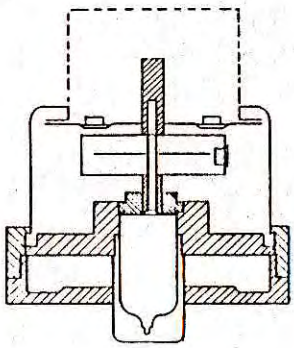

चित्र - 5

शल्य-उत्पादों के लिए विकिरण निःसंक्रमण का प्रदर्शन यंत्र

चित्र – 6

III. अन्य विधियों की तुलना में विकिरण-विधि द्वारा ज्यादातर सूक्ष्मजीवों के लिए अत्यधिक नाशनांक प्राप्त होता है और इस कारण निःसंक्रमित उत्पादों में अत्यधिक सुरक्षा-गुणक का लाभ मिलता है ।

IV. यह सारे निःसंक्रमण-प्रक्रियाओं में सबसे अधिक विश्वसनीय है क्योंकि स्रोत के विकिरण की ऊर्जा और शक्ति निश्चित रूप से ज्ञात होती है । अतः इस विधि में सिर्फ विकिरण की अवधि पर नजर रखने की जरूरत है जबकि अन्य विधियों में, जैसे कि बाष्प तथा विषाक्त-वायु से निःसंक्रमण-विधि में, चार-पांच पैमानों पर एक साथ नियन्त्रण रखना पड़ता है ।

मल-मूत्र कीच का विकिरण-उपचार

नगर-निगमों की अपशिष्ट-जलधारा में मल-मूत्र कीच का विकिरण एक नवीन एवं आशापूर्ण अनुप्रयोग है ।

मल-मूत्र कीच में अत्यधिक मात्रा में रोगजनक सूक्ष्म-जीव होते हैं जोकि मनुष्यों में आंत्र-ज्वर, हैजा, यकृत-रोग आदि के लिए जिम्मेवार हैं । संक्रमित कीच का वातावरण में निस्तारण जन-स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है । विकिरण-विधि द्वारा कीच-प्रबन्ध की जटिल समस्याओं को सुलझाया जा सकता है ।

बड़ौदा में वहां की नगर-निगम के लिए पथदर्श-संयन्त्र स्थापित किया जा रहा है जहां एक अभिक्रियक-पात्र में मल-मूत्र कीच रखा जाता है और उसे कोबाल्ट-60 की गामा-किरणों से निश्चित अवधि के लिए विकरित किया जाता है ।

खाद्य-संरक्षण शोध-कार्य

पाँचवे दशक से संसार भर में जिसमें अमेरिका, इंग्लैंड एवं दूसरे यूरोपीय देश तथा भारत सम्मिलित हैं, निम्नलिखित पहलुओं को महत्व देते हुए अत्यधिक शोध-कार्य हुआ है :

1) निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति में विकिरण की सफलता, उदाहरणतः, संग्रह-जीवन में सुधार
2) न्यूनतम आवश्यक विकिरण मात्रा का मूल्यांकन
3) खाद्य-पदार्थ की गुणवत्ता पर मात्रा का मूल्यांकन
4) खाद्य-पदार्थों की गुणवत्ता पर विकिरण का प्रभाव
5) पोषक-गुणों के ह्रास का अध्ययन तथा विकिरण से खाद्य - विषाक्तता की संभावना तथा जानवरों पर इस खाद्य के प्रभाव का विस्तृत अध्ययन
6) हर प्रक्रिया की आर्थिक तथा तकनीकी सुगमता का मूल्यांकन ।

खाद्य के पोषक गुणों पर विकिरण का प्रभाव तथा विषाक्त एवं कैन्सरजन्य पदार्थों की उत्पत्ति शोधकार्य का एक आवश्यक पहलू रहा है । बहुत सारे किस्म के विकरित खाद्यों का चूहे, मूस, कुत्ते, सूअरों तथा बन्दरों पर किए गए प्रयोग ने यह सिद्ध कर दिया है कि ये मनुष्य के उपभोग के लिए अहानिकारक हैं और कम-से-कम उतने ही पोषक हैं जितने दूसरे परंपरागत प्रक्रियाओं द्वारा होते हैं । मनुष्यों पर भी थोड़े समय इस के लिए खाद्य के प्रभाव को समझने की कोशिश की गई है परन्तु कोई भी हानिकारक प्रभाव नहीं मिला है ।

उद्योग को आर्थिक लाभ

पिछले दशकों के अनुभव ने, सारे संसार को, विकिरण समस्थानिकों के प्रयोग द्वारा औद्योगिक प्रक्रिया में शुद्ध लाभ को दर्शाया है । हालांकि, इस पहलू का विस्तृत विवरण इस वार्ता में सम्भव नहीं है फिर भी कुछ खास तथ्यों का उल्लेख जरूरी समझा जा रहा है । जापान ने यह पाया है कि विकिरणमापी नियामकों के अनुप्रयोग में लागत के अनुपात में 3 से 20 गुणा तक लाभ है । ठीक इसी तरह, विकिरण-अनुसारकों के सम्बन्ध में भारतीय अनुभव यह है कि कई समस्याओं के समाधान में इस विधि से अत्यधिक लाभ है । उदाहरणतः, तलछट परिवहन के अध्ययन द्वारा तलछट फेंकने के सही स्थान के निर्धारण से 2.5 करोड़ रूपयों की बचत इस प्रक्रिया द्वारा हर साल होती है । विकिरण-प्रक्रिया को परंपरागत प्रक्रियाओं से बेहतर पाया गया है और कई बार नए उत्पादों का विकास भी हुआ है । विकिरण-चित्रण विधि से औद्योगिक उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार आया है तथा उत्पादों की अस्वीकृतियां कम करके काफी बचत हो सकी है ।

आभार

यह वार्ता भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के बहुत सारे वैज्ञानिकों एवं अभियन्ताओं के योगदान का संक्षेपीकरण है । इस योगदान के लिए हम उनका आभार प्रकट करते हैं ।

रेडियोआइसोटोपों के चिकित्सात्मक अनुप्रयोग

डा. एस. एम. शर्मा
सह-निदेशक, आयुर्विज्ञान वर्ग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्राम्बे, बम्बई

नाभिकीय औषधियों का मुख्य उपयोग तो विभिन्न रोगों के निदान में ही होता है और 95 प्रतिशत रेडियोआइसोटोप इसी के लिए प्रयुक्त होते हैं । यद्यपि रोग चिकित्सा में इनका उपयोग 5 प्रतिशत तक ही सीमित है तथापि ये अनुप्रयोग भी महत्वपूर्ण हैं । इस दिशा में इस्तेमाल किया गया सर्वप्रथम पदार्थ रेडियम क्लोराइड है । यह स्टीवैन्ज द्वारा, 1926 में, कैंसरीय लिम्फोमा ट्यूमर के उपचार हेतु प्रयोग में लाया गया था । तब से अब तक, ट्रीशियम से लेकर एस्टेटिन-211 तक, अनेक रेडियोएक्टिव यौगिकों की नाभिकीय-औषधीय उपयोगों हेतु संभावनाओं का मूल्यांकन किया गया है । रेडियोनाभिकों और रेडियोएक्टिव दवाइयों के इस बड़े वर्ग में से केवल 'थाइराइड कैंसर के लिए रेडियो आयोडीन (I-131), लोहिताणु अतिरेक (Polycythaemia Vera) के लिए रेडियोफास्फोरस (P-32) और कैंसरीय निस्सरण के लिए P-32, Au-198 व Sr-90 के रेडियो कोलाइडों का उपयोग संतोषजनक पाया गया है और नैदानिक रूप में इनका इस्तेमाल किया जा रहा है । हाल ही में ज्यादा फैले हुए हड्डी के कैंसर (जिससे हड्डियों में असहनीय पीड़ा होती है) के उपचार के लिए P-32 के विभिन्न चिन्हित अकार्बनिक फास्फेटों के उपयोग हेतु पुनः अभिरूचि उत्पन्न हुई है । रेडियो चिन्हित एकक्लोनी (monoclonal) प्रतिरक्षियों का स्थल परिवर्तनीय नासूरों के उपचार में उपयोग बढ़ रहा है तथा इसके लिए रेडियो अंकित आशयों (Vescicles) को इस्तेमाल करने की संभावनाओं पर प्रयोग हो रहे हैं ।

इस वार्ता में हम मुख्यतः अति सक्रिय थाइराइड ग्रंथि (अकैंसरीय रोग) एवं थाइराइड कैंसर उपचार में रेडियो आयोडीन के उपयोग के बारे में चर्चा करेंगे । इसके साथ ही लोहिताणु अतिरेक उपचार में रेडियो फास्फोरस का वर्णन भी संक्षेप में करेंगे ।

अतिसक्रिय थाइराइड ग्रंथि और रेडियो आयोडीन

रेडियो आयोडीन उपचार के अतिरिक्त इस बीमारी का इलाज शल्य चिकित्सा एवं दीर्घकाल तक दवाइयों के प्रयोग से भी किया जाता है । रेडियो आयोडीन उपचार, संसार के विभिन्न देशों में 1942 से प्रचलित है । अनुमानतः, अब तक लगभग 5 लाख रोगियों का इलाज इस विधि द्वारा किया जा चुका है । यह उपचार विधि बहुत सरल व प्रभावकारी होने के साथ-साथ रोगियों द्वारा स्वीकृति भी प्राप्त कर चुकी है । लगभग 70 प्रतिशत रोगियों के लिए उचित मात्रा में दी गयी रेडियोएक्टिव आयोडीन की एक ही खुराक बीमारी पर पूर्ण नियंत्रण पाने में सक्षम है ! बड़ी संख्या में इस विधि द्वारा उपचारित रोगियों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो गयी है कि इस इलाज से इन रोगियों में ल्युकेमिया (रक्त-कैंसर) अथवा थाइराइड कैंसर में कोई वृद्धि नहीं हुई है ।

थाइराईड कैंसर और रेडियो आयोडीन

रेडियोआयोडीन चिकित्सा और शल्य चिकित्सा के योग से विभिन्न स्तरीय थाइराइड कैंसर के रोगियों का जीवन काल बढ़ाने में सफलता मिली है । ऐसे रोगियों के जिन में यह रोग गर्दन के 'लिंफ नोडों' तक फैल गया था, जीवन काल को 15 वर्ष तक बढ़ाने में 90-100 प्रतिशत तक सफलता मिली है । इसी तरह के परिणाम फेफड़ों तक पहुंचे हुए कैंसर के रोगियों में भी प्राप्त हुए हैं । थाइराइड कैंसर के रोगियों के जीवन काल में जिनमें कैंसर फेंफड़ों और हड्डियों तक फैल गया था, 5-10 वर्ष तक की वृद्धि करने में क्रमशः 94 व 75 प्रतिशत सफलता मिली है ।

लोहिताणु अतिरेक का उपचार

रक्त निकालने और रेडियो फास्फोरस उपचार के संयोग से इस रोग के रोगियों का जीवन काल भी बढ़ाया जा सकना संभव हुआ है ।

रेडियोआइसोटोपों के चिकित्सात्मक उपयोग

डा. एम. के. सोनी
अध्यक्ष, नाभिकीय औषध
चौइथराम अस्पताल एवं अनुसंधान केंद्र
मणिनबाग रोड, इन्दौर - 452 001.

रेडियोआइसोटोप आमतौर पर तीन प्रकार की किरणें छोड़ते हैं, जिन्हें अल्फा, बीटा और गामा कहते हैं। अल्फा और बीटा किरणें तो शरीर के लिए हानिकारक होती हैं इसलिए इनका प्रयोग जाँच के लिए नहीं, पर कैंसर के लिए इलाज में होता है। गामा किरणें छोड़ने वाले रेडियोआइसोटोप ज्यादातर जाँच के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं, उदाहरण के तौर पर टैक्नीशियम-परटैक्निटेट रेडियोआइसोटोप सिर्फ गामा किरणें छोड़ता है इसलिए सब से ज्यादा जाँच के लिए इस्तेमाल किया जाता है। आयोडीन-131 गामा और बीटा किरणें दोनों ही छोड़ता है इसलिए सीमित रूप से जाँच में इस्तेमाल तो किया जाता है परंतु थोडी मात्रा में प्रयोग किया जाता है । कुछ बीमारियों में और कैंसर में इसका बड़ी मात्रा में प्रयोग किया जाता है।

रेडियोआइसोटोप का जांच में प्रयोग दो भागों में बांटा जा सकता है । एक तो शरीर की वह जांच है जो शरीर के बाहर, शारीरिक तत्वों जैसे रक्त, पेशाब पर परमाणु तत्वों से की जाती है। इसे इन-विटरो जांच कहते हैं। इसका उदाहरण है, रेडियोइम्यूनोएसे दूसरी तरह की जांच है जो रेडियोआइसोटोप को शरीर में प्रवेश कराकर की जाती है। इसको इन-विवो जांच कहते हैं, और उदाहरण है रेडियोआइसोटोप या न्यक्लियर स्कैनिंग ।

रेडियोइम्युनोएसे का प्रयोग शरीर में हारमोंस, विटामिन, कैंसर के तत्व और दवाइयों की मात्रा मापने के लिए होता है । शरीर में कई अंगों, जैसे एन्डोक्राइन्स ग्लैंड के बराबर कार्य करने का पता इसी विधि से चलता है । थायोराइड अगर शरीर में जरूरत से ज्यादा कार्य करने लगे, तो हाइपर थाइराइडिज्म की बीमारी हो जाती है। इसमें भूख ज्यादा लगने लगती है परंतु शरीर का भार कम होने लगता है, हाथ कांपने लगते हैं, स्वभाव में चिड़चड़ापन आ जाता है, ज्यादा गर्मी लगने और पसीना निकलने लगता है, हृदय की गति बढ़ जाती है और कई लोगों में आंखें एवं थायोराइड ग्लैन्ड सूजने लगता है । अगर थायोराइड ग्लैन्ड शरीर की जरूरत से कम कार्य करता है तो हाइपोथोराइडिज्म की बीमारी हो जाती है जिसके लक्षण हाइपरथायोराडिज्म की बीमारी के विपरीत होते हैं, जैसे भूख का कम लगना, परन्तु वजन का बढ़ना, पाँव और चेहरे में सूजन, चमड़ी का खुरदरा होना, ज्यादा ठंड लगना, कब्ज रहना और हृदय की गति धीमी होना। रेडियोइम्यूनोएसे की विधि से थायोराइड की बीमारी का ट्राइआयोडोथाइरोनिन (T_3) थायोरिक्सिन (T_4) और थायोराइड स्टिमुलैटिंग हारमोन (TSH) को रक्त में मापने से पता लग जाता है। हाइपरथायोराइडिज्म में T_3 और T4 की मात्रा रक्त में बढ़ जाती है और TSH की मात्रा कम हो जाती है। हाइपोथायोराइडिज्म में इसके विपरीत होता है - T_3, T_4 की मात्रा कम हो जाती है और TSH की मात्रा बढ़ जाती है। इसी तरह रेडियोइम्यूनोएसे का प्रयोग हृदय की बीमारी का पता लगाने में होता है । जब हृदय की किसी धमनी में रक्त का बहाव रुक जाता है तो हृदय को क्षति पहुँचने पर, हृदय से एक पदार्थ रक्त में निकलता है जिसे मायोग्लोबिन कहते हैं। इस पदार्थ की मात्रा रक्त में बढ़ जाती है जिससे मायोकारडियल-इन्फार्क्शन का इलैक्ट्रोकार्डियोग्राम और अन्य जाचों से पहले पता लग जाता है । इसके द्वारा रोगी का सही इलाज जल्दी से जल्दी करने में सहायता मिलती है। रेडियोइम्यूनोएसे की विधि से दवाइयों में डाइजोक्सिन जैसे पदार्थ की मात्रा भी मापी जा सकती है । हृदय के रोगियों में, जिनमें हृदय ठीक तरह से कार्य नहीं करता, डाइजोक्सिन की ठीक मात्रा देने से फायदा होता है लेकिन अगर इसकी मात्रा बढ़ जाये तो रोगी की मृत्यु भी हो सकती है।

कैंसर के रोग में कई पदार्थ रक्त में पाये जाते हैं जिनकी मात्रा बढ़ जाती है। इसका उदाहरण है - यकृत के कैंसर में एलफा फीटो - प्रोटीन और गामा - जी.-टी. की मात्रा रक्त में बढ़ना, थायोराइड के कैंसर के फैलाव में थायरोग्लोबिन की मात्रा का बढ़ना। इसी तरह रेडियोम्यिूनोएसे से बड़ी आंतडियों

के कैंसर में कैंसर एम्बरियोनिक एंटिजन की बढ़ी हुई मात्रा का पता भी चल जाता है। यही नहीं, रेडियोम्यूनोएसे से, एच.सी.जी. की मात्रा पैशाब या रक्त में मापने से गर्भ ठहरने का भी पता लग जाता है। इसके अलावा और भी बहुत सी रेडियोइम्युनोएसे की उपलब्धियां हैं।

न्यूक्लियर स्कैनिंग से केवल शरीर के विभिन्न अंगों का आकार ही नहीं बल्कि कार्य करने की क्षमता भी पता चलती है। किसी भी बीमारी में अंगों का कार्य करने की क्षमता पहले बिगड़ती है और बाद में आकार में परिवर्तन होता है । यही कारण है कि न्यूक्लियर स्कैनिंग से बीमारी का जल्दी पता लग जाता है । एक्स-रे, अल्ट्रासोनोग्राफी, सी.टी. स्कैन से तो अंगों के आकार के नुक्स खोजे जाते हैं, जो कार्यक्षमता के खराब होने के बाद होते हैं । कार्यक्षमता का अंगों में पता लगाना सिर्फ न्यूक्लियर स्कैनिंग से ही संभव है। न्यूक्लियर स्कैनिंग से मस्तिष्क, थायोराइड, फेफडों, यकृत, पित्ताशय, तिल्ली, गुर्दे, हृदय, हड्डियों आदि का स्कैन किया जा सकता है । इसमें जिस अंग का स्कैन करना होता है, उसी प्रकार का रेडियोफार्मास्यूटिकल इन्जेक्शन द्वारा या खाने के लिए दिया जाता है। उदाहरण के लिए टैक्निशियम (99m) परटैक्निटेट से मस्तिष्क और थायोराइड की स्कैनिंग की जा सकती है, यकृत के लिए फाइटेट या सल्फर-कौलायड, पित्ताशय के लिए हाइडा (एच.आई.डी.ए.) हड्डियों के लिए इ.एच.डी.पी. या एम.डी.पी., गुर्दे के लिए डी.टी.पी.ए. या जी.एच.ए इस्तेमाल किए जाते हैं। स्कैनिंग करने की मशीन को गामा कैमरा कहते हैं। जो गामा किरणें निकलती हैं, उन्हें यह गामा कैमरा तस्वीर में बदलता है जो एक्स-रे फिल्म या कंप्यूटर में इकट्ठी की जा सकती है। इसके अतिरिक्त वक्त के साथ हर अंग में किस प्रकार से रेडियोआइसोटोप का बदलाव होता है, कंप्यूटर और एक्स-रे फिल्म में रिकार्ड हो जाता है। इससे बीमारी की किस्म का पता चल जाता है ।

मस्तिष्क की धमनियों में रक्त के बहाव की रुकावट, कैंसर की गांठ, चोट से इकट्ठे खून और इन्फैक्शन का पता न्यूक्लियर स्कैनिंग से चल जाता है । इसी तरह विभिन्न प्रकार के हृदय रोगों का पता लग जाता है । हृदय की स्कैनिंग से हृदय की धमनियों के सिकुड़ने से इनमें पूरी रुकावट होने का ज्ञान हो जाता है और यह भी बताया जा सकता है कि किस रोगी को हृदय के आपरेशन से फायदा होगा और किस को सिर्फ दवाईयों पर ही रखना चाहिए। यकृत की न्यूक्लियर स्कैनिंग से यकृत के बढ़ने, शराब और इन्फैक्शन से होने वाले सिरहोसिस पीप भरने का और कैंसर इत्यादि का पता लग जाता है। इसी तरह पित्ताशय से संबंधित बीमारियां, जैसे कि पीलिया रुकावट या बिना रुकावट की किस्म का है या एक्यूट कोलिसिसटाइटिस का भी न्यूक्लियर स्कैनिंग से पता लगता है ।

गुर्दे की बीमारी से रक्त-चाप होने का गुर्दे की स्कैनिंग से पता लगाया जाता है और गुर्दों की कार्यक्षमता का भी पता लगाया जाता है । गुर्दे में पथरी होने से कई बार पेशाब में रुकावट हो जाती है और गुर्दे को नुकसान पहुंचना शुरु हो जाता है। इन दोनों बातों का ज्ञान न्यूक्लियर स्कैनिंग से हो जाता है। कई बार ऐसे गुर्दे जो एक्स-रे की विधि से नहीं दिखाई देते या अल्ट्रासोनोग्राफी से बहुत ज्यादा सूजन की हालत में दिखते हैं, नाकारा समझ कर आपरेशन से निकाल दिए जाते हैं। न्यूक्लियर स्कैनिंग से 3-5 प्रतिशत कार्यक्षमता करने वाले भी गुर्दे दिख जाते हैं। यह देखा गया है कि 5-10 % कार्यक्षमता करने वाले गुर्दे बचाये जा सकते हैं। ऐसे रोगियों के पेशाब में रुकावट हटाना या पथरी को निकालना ही ठीक है और गुर्दे का बचाना आवश्यक एवं लाभदायक है। अगर ऐसा गुर्दा जिसमें रुकावट हो और न्यूक्लियर स्कैनिंग से नहीं दिखता, उसको शरीर से निकाल देना ही उचित है। इसी तरह चिकित्सक को निर्णय लेने में आसानी होती है कि किस तरफ का आपरेशन पहले करना चाहिए, खासकर ऐसे रोगियों में जिनमें दोनों गुर्दे क्षतिग्रस्त हैं।

हड्डियों की स्कैनिंग से न केवल हड्डियों के कैंसर और उसके फैलाव का पता चलता है बल्कि जोड़ों की बीमारियों का और हड्डियों में इन्फैक्शन का भी पता लग जाता है । इन सब बीमारियों का पता न्यूक्लियर स्कैनिंग से, एक्स-रे से पहले पता लग जाता है। यह सब इसलिए संभव है क्योंकि न्यूक्लियर स्कैनिंग से रक्त के बहाव और सूक्ष्म क्षति का पता चलता है जो एक्स-रे में नहीं दिखती ।

रेडियोआइसोटोप का इलाज में भी बहुत महत्व है और रोगी के लिए लाभदायक भी है। इसके परिणाम भी अच्छे हैं। रेडियोएक्टिव आयोडिन का प्रयोग हाइपरथायोराइडिज्म और

थायोराइड के कैंसर में किया जाता है। हाइपरथायोराइडिज्म में रोगी को बार-बार दवाइयों का सहारा नहीं लेना पड़ता। एक या दो बार दवाई पिलाने से रोगी की बीमारी की रोकथाम हो जाती है । थाइरायड के कैंसर में बहुत अच्छे परिणाम हैं और रोगी को इस इलाज से कोई खास परेशानी भी नहीं होती। एक तरह की रक्त की बीमारी जिसे पौलिसाइथिमियावैरा कहते हैं, इसका इलाज रेडियोएक्टिव फासफोरस से किया जाता है । हड्डी के जोड़ो की बीमारी में यटरियम कौलाएड इन्जेक्शन के रुप में जोड़ों में दिया जाता है। इसी तरह कैंसर की वजह से फेफड़ों में पानी भर जाने की रोकथाम और उसे सुखाने के लिए रेडियोएक्टिव स्वर्ण का इस्तेमाल किया जाता है । यह सब उदाहरण थे खुली रेडियोएक्टिविटी के, जिन्हें मुंह के रास्ते या इन्जेक्शन के रास्ते दिया जाता है । दूसरे प्रकार के रेडियोआइसोटोप जो इलाज में काम आते हैं, उन्हें बन्द स्रोतों के नाम से जाना जाता है । इसके उदाहरण हैं कोबाल्ट, सीसियम, इरीडियम, कैलिफोरनियम और रेडियम इन तत्वों से गले, फेफड़े, थन, हड्डियों या बच्चेदानी या अन्य स्त्री-अंगों के कैंसर का इलाज, बाहर से किरणों द्वारा करने के लिए इन्हें सलाइयों के रुप में शरीर में रखा जाता है। इसके अलावा रोगी को कैंसर के इलाज के लिए अन्य दवाइयां भी दी जाती हैं । इस तरह कैंसर के इलाज में, आपरेशन और अन्य दवाइयों के साथ रेडियोआइसोटोपों का प्रयोग भी जरुरी है ।

न्यूक्लियर चिकित्सा में कुछ वर्ष पहले एक नई विधि विकसित हुई है जिसे हिबरिडोमा तकनीक कहते हैं । इसमें शरीर में जिस प्रकार का कैंसर होता है उसके लिए एन्टीबॉडीज़ बनाये जाते है जिन्हें मोनोक्लोनल एन्टिबॉडीज़ के नाम से जाना जाता है। इन एन्टीबोडिज़ को रेडियोएक्टिव तत्व जैसे आयोडिन से जोड़ा जाता है । इससे न केवल पहले कैंसर की खोज में स्कैनिंग की जाती है बल्कि कैंसर का पता लगने के बाद ज्यादा मात्रा में आयोडीन-131 मोनोक्लोनल एन्टीबोडीज देकर कैंसर को पूरी तरह से नष्ट किया जा सकता है। अभी इस दिशा में बहुत अनुसंधान चल रहा है, पर फिर भी मैडुलरी थायोराइड कैंसर और मेलिग्नेंट फियोकरोमोसाइटोमा में इसी विधि से अच्छे परिणाम मिले हैं।

इससे यह स्पष्ट है कि रेडियोआइसोटोपों का चिकित्सा में बहुत बड़ा योगदान है। बीमारी का जल्दी से जल्दी पता लगाने और बाद में उसके जल्दी इलाज में ये सहायक हैं । कैंसर जैसे भयंकर रोग का पता लगाकर उसको जड़ से नष्ट करना नाभिकीय औषध का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है ।

इस वार्ता के सम्पादन में डा.(श्रीमती) दामोदरन, बी. ए. आर. सी. के सहयोग के लिए सम्पादक मंडल अत्यन्त आभारी है।

—सं.

कृषि में नाभिकीय तकनीकों का प्रयोग

चितरंजन भाटिया एवं सूर्यदेव मिश्र
जीव-विज्ञान वर्ग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र
बम्बई - 400085

डा.होमी भाभा की प्रेरणा के फलस्वरुप नाभिकीय ऊर्जा का प्रयोग भारत में सदी के पाँचवें दशक से ही कृषि-उत्थान एवं विकास में किया जाने लगा था। भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के अतिरिक्त, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में इसी समय ऐसे प्रयोग शुरु किए गए थे। आजकल तो लगभग सभी कृषि विश्व-विद्यालयों तथा अनुसंधान केन्द्रों में नाभिकीय तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है। कृषि में काम आने वाले लगभग सभी रेडियोधर्मी रसायनों का उत्पादन भा. प. अनु. केन्द्र के आईसोटोप वर्ग में किया जाता है । इन तकनीकों का प्रयोग मुख्य रुप से फसल अनुवांशिकी, पशु एवं पादप चयापचयन, जैविक नाईट्रोजन स्थिरीकरण (फिक्सेशन) रेडियोइम्युनों एसे जैसी आधुनिक तकनीकों तथा फसल संरक्षण आदि में खूब हो रहा है। इस लेख में इस केन्द्र में किये गये प्रयोगों का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

सारे विश्व में बड़े पैमाने पर नाभिकीय तकनीकी का प्रयोग कृषि अनुसंधान एवं विकास हेतु किया जा रहा है । इस देश में नाभिकीय शोध एवं ऊर्जा के जनक एवं युगदृष्टा, डा. होमी भाभा इन क्षमताओं से भली-भाँति परिचित थे। जीव-विज्ञान विधा, उन गिने-चुने प्रभागों में से एक है जिसका गठन परमाणु ऊर्जा संस्थान ट्राम्बे द्वारा शताब्दी के पाँचवें दशक में ही कर लिया गया था। उन प्रारंभिक, परमाणु-ऊर्जा-विकास के दिनों में भी जीव-विज्ञान-शोध-कार्यक्रमों में फसलों पर विकिरण-प्रभाव जैसे अग्रणी अनुसंधानों को ही प्राथमिकता दी गई । हमारे कार्यक्रमों के अतिरिक्त अन्य राष्ट्रीय संस्थानों जैसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, भारतीय पशु पालन अनुसंधान संस्थान, इज्जत नगर, भारतीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल, तथा आई. सी. ए. आर. की संस्थाओं ने भी नाभिकीय तकनीकों का प्रयोग शुरु किया। नाभिकीय ऊर्जा के प्रारंभिक शान्तिपूर्ण प्रयोगों से प्रभावित आई. ए. आर. आई. ने नाभिकीय अनुसंधान प्रयोगशाला की स्थापना की। इतना ही नही, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू. एन. डी. पी.) ने कृषि में नाभिकीय ऊर्जा के प्रयोगों को बढ़ावा देने की दृष्टि से 1968-76 की अवधि में हमारे केन्द्र के कार्यक्रमों को प्रोत्साहित किया और कई आधुनिकतम सुविधाओं से भी सुसज्जित किया । यू. एन. डी. पी. की सहायता के समाप्त होते होते कार्यक्रम की सफलता से प्रभावित होकर सीडा (एस. आई. डी. ए.) नामक स्वीडीश ऐजेन्सी ने 1978-82 तक सहायता प्रदान कर कार्यक्रम को आगे बढ़ाया। हमारी सफलताओं से प्रभावित हो आज देश के लगभग सभी कृषि विश्व-विद्यालयों में रेडियोआइसोटोप प्रयोगशालाएँ विकिरण सुविधाएँ-प्राप्त हैं। आशा है इन सुविधाओं का शांतिपूर्ण प्रयोग हमारी कृषि उपज को आवश्यक एवं सही दिशा प्रदान करेगा ।

कृषि अनुसंधान में नाभिकीय तकनीकों के प्रमुख प्रयोग इस प्रकार हैं :

(1) नूतन - प्रजाति - उद्भव के लिए अनुवांशिकीय विभिन्नताओं को बढ़ावा,

(2) उर्वरक - क्षमता - वृद्धि तथा जैविक नाईट्रोजन स्थिरीकरण

(3) वनस्पति एवं प्राणि जगत की चयापचयन प्रक्रियाओं को भली प्रकार समझकर उनसे सामान्य तथा असामान्य परिस्थितियों में अधिक उपज प्राप्त करना,

(4) विकिरण - निरोध - क्षमता - मापन (रेडियोईम्यूनोएसे) विधि द्वारा जानवरों की प्रजनन संबंधी व्याधियों की पहचान व निदान,

(5) कीटनाशियों के हवा, पानी तथा भूमिगत अवशेषों का पता लगाना तथा उन्हें प्रभावहीन करना,

(6) जानवरों के लिए विकिरण - साध्य (एटीन्यूएटेड) वैक्सीनों का विकास,

(7) कीटों तथा जीवाणुओं से होने वाले फसल, उसकी उपज तथा खाद्य पदार्थों के नुकसानों को रोकना, आदि ।

इनके अतिरिक्त नाभिकीय तकनीकें कृषि अनुसंधान में भी, कई अन्य विश्वसनीय विश्लेषणात्मक अध्ययनों में उपयोगी सिद्ध हुई हैं। खाद्य उत्पादन में जल का बहुत महत्व है। जल संबंधी खोजों में रेडियोधर्मी तत्व अप्रत्यक्ष रुप से खाद्योत्पादन को प्रभावित करते है।

इस लेख में भा.प.अनु.केन्द्र के नाभिकीय कृषि प्रभाग में किए गए कुछ प्रयोगों पर प्रकाश डाला गया है, जो इस प्रकार हैं :

(1) फसली पौधों का अनुवांशिकीय उत्थान,
(2) फास्फोरस उर्वरकों की क्षमता वृद्धि, तथा
(3) कीटनाशी - अवशेष मापन

1. फसली पौधों का अनुवांशिकीय उत्थान

आयनीकारक विकिरणों का सबसे सबल एवं सफल प्रयोग वंशानुगत एवं प्रजनन संबंधी परिवर्तनों को समावेशित कर उत्परिवर्ती पौधों के विकास में हुआ है। प्रकृति में ऐसे उत्परिवर्तन बहुत धीरे - धीरे हजारों वर्षों में होते हैं । लेकिन क्ष (X) एवं गामा किरण तथा न्यूट्रान जैसे विकिरण साध्य तरीकों से बीज या पौधों के विभिन्न भागों से नए उत्परिवर्ती (म्यूटैंट्स) शीघ्र ही प्राप्त हो जाते हैं। प्राय : विकिरण - प्रेरित उत्परिवर्तन लाभकारी नहीं होते, लेकिन उनमें से कुछ अभीष्ट पूरक साबित होते हैं। अत : हजारों पौधों में से अभीष्ट का चयन, अनुवांशिकी संशोधन तथा संख्या-वृद्धि बहुत ही कठिन काम है। सबसे पहले ऐसे पौधों की क्षमता केन्द्र में आकलित की जाती है, फिर उनमें से जो अधिक अच्छे होते हैं उनकी परख अखिल-भारतीय-स्तर पर भारतीय कृषि-अनुसंधान-समिति अथवा कृषि-विश्व-विद्यालयों द्वारा की जाती हैं । इनमें से अपेक्षित प्रजातियों का किसानों के खेतों पर पुनः परीक्षण किया जाता है। इस अन्तिम परीक्षण के बाद ही कोई भी प्रजाति किसानों में बाँटने तथा व्यावसायिक रुप से उगाने के लिए कृषि-मंत्रालय की सम्मति से दी जाती है। इस प्रकार कोई भी फसल प्रजाति अपने प्रारंभिक शैशवकाल से प्रजाति कहलाने की प्रौढावस्था प्राप्त होने तक लगभग आठ-दस वर्षों का समय ले लेती है।

1.1 भा. प. अनु. केन्द्र से निकली नई प्रजातियाँ

नाभिकीय तकनीकों द्वारा केन्द्र ने फसलों की आठ उन्नत प्रजातियाँ विकसित की है। इनमें से अरहर और मूँगफली की दो - दो तथा मूँग, उड़द, जूट, चावल की एक-एक प्रजातियाँ हैं। ये प्रजातियाँ अब अखिल भारतीय स्तर पर मान्यता प्राप्त हैं एवं किसानों द्वारा उपज बढ़ाने के लिए अपनाई जा चुकी हैं।

1.2 बीज उत्पादन

किसानों में वितरण के लिए बीज उत्पादन का काम कई स्तरों पर होता है। बीज का प्रमुख स्रोत एवं प्रजनन हेतु उत्पादन प्रायः केन्द्र में ही किया जाता है । दलहन-प्रजातियों का स्रोत-बीज पंजाबराव कृषि विद्यापीठ, अकोला, में संवर्धित किया जाता है, जिसका उपयोग महाबीज निगम करता है । अन्त में ये बीज किसानों को उगाने के लिए दिए जाते हैं । हमारे प्रमाणित बीजों की मात्रा तथा महाबीज निगम व महाराष्ट्र राज्य - कृषि - विभाग द्वारा वितरण का ब्यौरा तालिका-2 में दर्शाया गया है। दलहन की ये प्रजातियां प्रायः स्वप्रजननित (सेल्फ पालीनेटेड) होती हैं। अतः किसान हर वर्ष अपने प्रयोग से बचे बीजों को अपने पड़ोसी तथा आस - पास के अन्य गाँवों को भी देता जाता है। इस तरह से सम्पर्की, सुविज्ञ किसान ही नहीं, बल्कि सारा क्षेत्र उन्नत बीजों से लाभान्वित होता है। केन्द्र द्वारा विकसित धान की "हरी" प्रजाति के बीज संवर्धन की जिम्मेदारी आंध्र प्रदेश की स्वयंसेवी संस्था 'एप्सीड्स' ने ली है ।

1.3 उन्नत-प्रजाति-ग्रस्त क्षेत्र एवं आकलित आर्थिक लाभ

पंजाबराव कृषि विद्यापीठ, अकोला के वैज्ञानिकों का अनुमान है कि केन्द्र की उन्नत प्रजातियाँ राज्य के दो लाख हेक्टेयर से भी अधिक क्षेत्र पर उगाई जा रही हैं (तालिका-3)। इस वर्ष (1988-89) विदर्भ क्षेत्र के किसानों को प्राप्त आकलित आय लगभग 18 करोड़

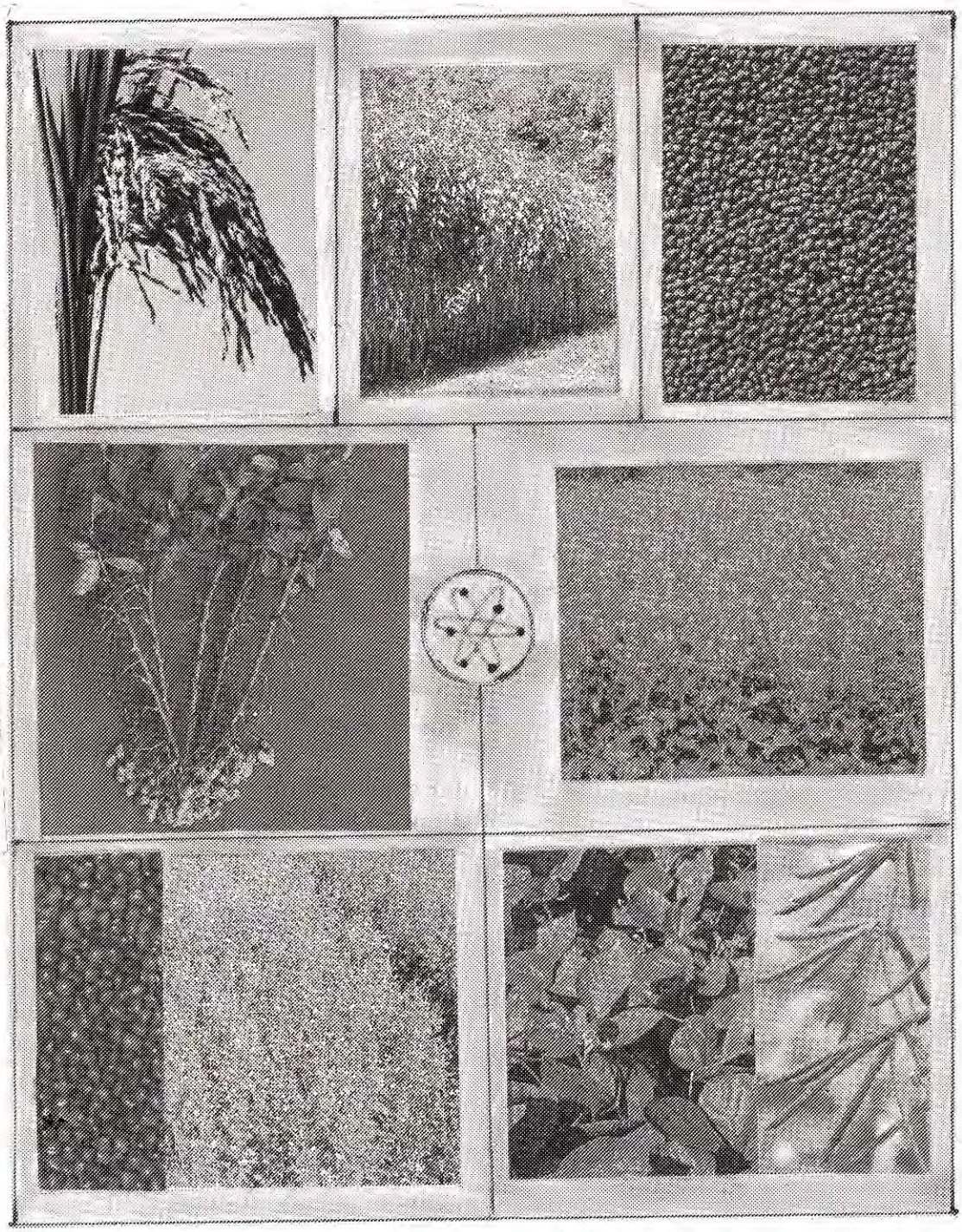

केंद्र द्वारा विकसित उन्नत उत्परिवर्त्ती प्रजातियाँ : क्रमशः "हरी" चावल, टी.के.जे.-40 जूट, टी.ए.यू.-1 उड़द, टी.जी.-17 मूँगफली, टी.एम.-4 पीली राई, टी.ए.टी.-10 अरहर, तथा टी.ए.पी.-7 मूँग।

रुपये होगी, जो कि बीजोपलब्धि के साथ बढ़ती ही जाएगी ।

उपरोक्त उन्नत प्रजातियों के अलावा बहुत सी संभावी प्रजातियाँ अभी बीज-संवर्धन अवस्था में है । इनमें से सरसों की टी. एम-2 व 4, आसाम तथा मूँगफली की टी. जी.-24 महाराष्ट्र के लिए है ।

देश के पादप-प्रजनन कार्यक्रमों में, आज उत्परिवर्तन तकनीक सर्वमान्य अतिरिक्त साधन के रुप में उभर रही है । चोपड़ा तथा शर्मा (1985) के अनुसार देश में उत्परिवर्तन-विधि द्वारा विकसित प्रजातियाँ चालीस तथा सारे विश्व में एक हजार (अं. प. ऊ. आयोग) से भी अधिक हैं ।

2. **उर्वरक-क्षमता-वृद्धि**

रेडियोधर्मी पोषकतत्वों की मदद से फसल, भूमि, अजैविक पोषक तथा पानी के आपसी संबंधों को अच्छी तरह से समझा जा सकता है । फास्फोरस-32 चिन्हित फास्फेट की मदद से ऐसे उर्वरकों की अपेक्षित मात्रा समय तथा विभिन्न फसल व मृदा परिस्थितियों के बारे में काफी अच्छी जानकारी मिली है । केन्द्र में रेडियोधर्मी तत्वों की मदद से यह भी ज्ञात हुआ है कि रॉक (चट्टानी) फास्फेट, जो कि काफी सस्ता होता है, को चूरा बनाकर चाय और कॉफी जैसी बागीनी (प्लांटेशन) फसलों के लिए प्रयोग किया जा सकता है । विभिन्न मृदा प्रारुपों में न्यून-क्षेत्र (माइक्रो-प्लाट) प्रयोगों द्वारा पाया गया है कि अमोनियम-पालीफास्फेट, अन्य प्रचलित मोनो और डाई अमोनियम आर्थोफास्फेटों की अपेक्षा अधिक प्रभावी है । हमारे इन परिणामों से प्रेरित हो कर राष्ट्रीय केमिकल्स तथा फर्टीलाइजर्स लिमिटेड, बम्बई, इसके व्यापारिक उत्पादन एवं वितरण की सम्भावना के बारे में प्रयोगात्मक परीक्षण कर रही है । इसके लिए इस संस्था ने 1982 में 50 किलो क्षमता वाला प्राथमिक (प्रोटोटाइप) संयंत्र भी लगाया था, जो अब बढ़कर 12-15 मीट्रिक टन प्रतिदिन की क्षमता प्राप्त कर चुका है । अमोनियम पालीफास्फेट का मानकीकरण, भारतीय-कृषि अनुसंधान परिषद की विभिन्न प्रयोगशालाओं में चल रहा है । अभी तक मिले परिणामों से यह स्पष्ट है कि यह उर्वरक या तो अच्छा है या किन्हीं क्षेत्रीय परिस्थितियों में प्रचलित फास्फेट उर्वरकों, धान व दलहन के लिए, के समान ही प्रभावी है । इसकी उत्पादन-कीमत डाईअमोनियम-फास्फेट (डी. ए. पी.) से 10% कम ही होगी, ऐसा उर्वरक संस्था का अनुमान है ।

नाइट्रोजन-15 चिन्हित उर्वरकों का प्रयोग शोधों में, अपेक्षाकृत कम हुआ है, क्योंकि तत्संबंधित विश्लेषणात्मक उपकरण बहुत महँगे होते हैं । राष्ट्रीय केमिकल्स तथा फर्टिलाइजर्स लि. बम्बई, द्वारा उत्पादित एन-15 यूरिया के विकास में हमारे केन्द्र के रासायनिक अभियांत्रिकी (केमिकल इंजिनियरिंग) प्रभाग का काफी योगदान रहा है । इस रेडियोधर्मी तत्व की मदद से मिली जानकारी के आधार पर नीमरस से ढकी यूरिया जैसी खादों का आविष्कार हुआ । ऐसी यूरिया अन्य नाइट्रोजन उर्वरकों की अपेक्षा अधिक प्रभावी है । इस खाद के उत्पादन में कई निजी औद्योगिक संस्थान काफी रुचि दिखा रहे हैं और सरकारी अनुमति प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हैं ।

पौधों से संबंधित सूक्ष्मपोषी एवं रेडियोधर्मीतत्वों, जैसे लोहा-59 मैंगनीज-54, जिंक-65, ताम्बा-64, मालीब्डिनम-99. रुबीडियम-86, तथा सोडियम-24 की मदद से पौधों में ऐसे तत्वों के वितरण एवं परिभ्रमण के बारे में कई महत्वपूर्ण जानकारियाँ मिली हैं । इसी प्रकार ऐसे तत्वों की मदद से क्रोमियम तथा निकिल जैसी विषैली धातुओं के स्थानांतरण एवं जमाव के बारे में महत्वपूर्ण जानकारियाँ मिली हैं । ये तत्व शहरी कचरों में अधिक पाए जाते हैं । अतः इन कचरों से बनी कम्पोस्ट खादों का उपयोग करते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिए ।

3. **पर्यावरण में कीटनाशी-अवशेष-मापन**

कृषि एवं स्वास्थ्य सेवाओं के लिए प्रयुक्त कीटनाशी अंत में हमारे खेतों में पहुँचते हैं और काफी लम्बे समय तक अवशोषित पड़े रहते हैं । कीटनाशी फसल संरक्षण एवं स्वास्थ्य सेवाओं में संवाहकों की रोकथाम के लिए काम में लाए जा रहे हैं । उपज बढ़ाने के लिए इनके

प्रयोग बढ़ने की सम्भानाओं को नकारा नहीं जा सकता है।

ये तत्व जमीन में प्रायः दस लक्षांशी मात्रा (पी.पी.एम) में रह जाते हैं, अतः उनके बारे में सहज जानकारी रेडियोधर्मी तत्वों की मदद से ही प्राप्त की जा सकती है। ये मिट्टी से मृदा-जीवाणुओं, पौधों, अन्य अनचाहे स्थानों तथा हमारे खाने पीने की चीजों द्वारा हम तक कैसे पहुँचते हैं और उन्हें कैसे प्रभावहीन किया जाए, इस दिशा में किए गए प्रयोगों से पता लगा है कि जैविक खादें, जैसे हरी खाद, कंपोस्ट तथा खली की खाद आदि देने से मिट्टी में पाए जानेवाले जीवाणु तथा एंज़ाइम बी. एच. सी. / एच. सी. एच. जैसे कुप्रभावी तत्वों को तोड़फोड़ कर प्रभावहीन कर डालते हैं ।

तेलों में अधिक घुलनशील होने के कारण इन फसलों पर छिड़के कीटनाशी खाद्य तेलों के रुप में उपभोक्ताओं तक पहुँचते हैं । मूँगफली की फसल पर प्रयुक्त डी.डी. टी. या कार्बारिल के अवशेष तेल में नहीं पाए गए। लेकिन इसके विखंडित अवशेष डी.डी.ई. या अल्फा-नैफथाल के रूप में पाए गए। क्षारित-शोधन द्वारा मूँगफली के तेल में एच.सी.एच. तथा डी.डी.टी. के अवशेष तो नहीं हटाए जा सके, लेकिन कार्बोरिल को हटाया जा सका। ऊँचे तापमान पर गंध-निवारण विधि द्वारा अधिकांश अवशेष हटाए जा सके। अतः कारखानों द्वारा परिष्कृत तेलों में कीटनाशी अवशेष बहुत कम या न के बराबर होते हैं। इसके विपरीत, गाँवों में 'घानी' द्वारा निकाले गए तेलों में ऐसी मात्रा अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है।

उपसंहार

उपरोक्त तथ्य नाभिकीय ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोगों के सद्‌गुणों को उजागर ही नहीं करते, बल्कि बढ़ती हुई आबादी की तीन मूलभूत आवश्यकताओं जैसे आवास, खाद्यान्न, ईंधन आदि को जुटाने में भी वरदान साबित हो रहे हैं ।

तालिका - 1

भा. प. अनु. केंद्र द्वारा विमोचित तथा ज्ञापित विकिरण - प्रेरित उत्परिवर्ती फसल प्रजातियाँ

फसल	प्रजाति	विमोचन / ज्ञापनवर्ष	क्षेत्र
अरहर (तूर)	ट्रॉंबे विशाखा - 1 टी.ए.टी. - 10	1983 1985	मध्य एवं दक्षिण पूर्व महाराष्ट्र "
मूँग	टी.ए.पी. - 7	1983	महाराष्ट्र
उड़द	टी.ए.यू. - 1	1985	महाराष्ट्र
मूँगफली	टी.जी. - 17 टी.जी. - 3	1985 1987	महाराष्ट्र, केरल, मध्यप्रदेश, उड़ीसा
जूट	टी.जे. - 40	1983	उड़ीसा
चावल	हरी	1988	आँध्र प्रदेश

तालिका - 2

भा. प. अनु. केंद्र द्वारा विकसित नई दलहन-प्रजातियाँ तथा महाराष्ट्र राज्य बीज निगम द्वारा प्रमाणित बीज-उत्पादन एवं वितरण

वर्ष	वितरित बीज-मात्रा	पूरित-क्षेत्र
1985	81 मीट्रिक टन	5,4000 हेक्टेयर
1986	209 मीट्रिक टन	13,900 हेक्टेयर
1987	245 मीट्रिक टन	16,300 हेक्टेयर
1988	390 मीट्रिक टन	26,000 हेक्टेयर

तालिका - 3

महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में अपनाई गई, हाल में विमोचित ट्राँबे दलहन की कुछ प्रजातियाँ

फसल	प्रजातियाँ	विमोचन वर्ष	1988-89 में अनुमानित पूरित क्षेत्र हेक्टर
अरहर (तूर)	टी. विशाखा - 1	1982	90,000 हेक्टेयर
	टी.ए.टी. - 10	1984	10,000 हेक्टेयर
मूँग	टी.ए.पी. - 7	1982	1,00,000 हेक्टेयर
उड़द	टी.ए.यू. - 1	1984	20,000 हेक्टेयर
पूर्ण योग			2,20,000 हेटयर

आँकड़े : पंजावराव कृषि विद्यापीठ की दलहन अनुसंधान इकाई के सौजन्य से

रेडियोएक्टिव अपशिष्ट प्रबंधन

मधुसूदन कुमरा
अध्यक्ष, अपशिष्ट प्रबंधन प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
ट्रांबे, बंबई - 400 085

आज पर्यावरण एवं प्रदूषण शब्द सारे संसार के लिए बहुत महत्व रखते हैं और राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठियों में चर्चा के मुख्य विषय बन गए हैं। तेजी से होते हुए औद्योगीकरण से प्रदूषण की जो समस्या आ खड़ी हुई है उससे आम आदमी चिंतित है। इस लेख में हम रेडियोएक्टिव अपशिष्ट के सही प्रबंधन के बारे में चर्चा करेंगे जो उससे होनेवाले संभावित प्रदूषण तथा संबंधित सुरक्षा पर प्रकाश डालेगा। इससे पहले कि इस विषय पर कुछ कहा जाए यह कहना आवश्यक होगा कि आज हमारे देश की जनता में पर्यावरण के प्रति जो जागृति आई है वह एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात है । इस संबंध में नाभिकीय अपशिष्ट तथा उसके प्रबंधन के बारे में सही जानकारी और भी महत्व रखती है। मुख्यतः नाभिकीय ऊर्जा का उपयोग मानव कल्याण के कई क्षेत्रों में जैसे बिजली, कृषि, उपचार, उद्योगों तथा वैज्ञानिक शोध कार्यों में हो रहा है। इन क्षेत्रों में बहुत प्रगति हुई है और भविष्य में और अधिक प्रगति निश्चित है । हमारे देश में नाभिकीय ऊर्जा के कार्यक्रम में विद्युत उत्पादन को बहुत महत्व दिया गया है । इस शताब्दी के अंत तक 10,000 MW विद्युत उत्पादन करने का लक्ष्य ही नहीं है बल्कि उसको पाने के लिए हम दृढ़ संकल्प भी है । परमाणु ऊर्जा के विकास तथा अन्य नाभिकीय कार्यों में रेडियोएक्टिव अपशिष्ट के सही तथा सुरक्षित प्रबंधन को सदैव प्राथमिकता दी गई है और पर्यावरण की सुरक्षा के लिए संभव उपाय किए गए हैं। भविष्य में भी इसका पूरा ध्यान रखा जाएगा। यही कारण है कि आज हम अपशिष्ट प्रबंधन की एक प्रभावशाली योजना बनाने में सफल हुए हैं । इस योजना के अर्न्तगत यह ध्यान रखा गया है कि जो भी तकनीक हम अपनाएं वह सुरक्षित, सरल एवं आर्थिकरूप से प्रभावकारी और क्षेत्र विशेष की स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल हो । इसका ध्यान रखते हुए प्रबंधन तकनीकी का विकास हमारे वैज्ञानिकों ने स्वयं किया है तथा इससे संबंधित उपकरणों का भी स्वदेशी ढंग से विकास किया गया है। फलस्वरूप इस क्षेत्र में हम किसी भी विकसित देश से पीछे नहीं हैं ।

नाभिकीय अपशिष्ट, औद्योगिक तथा घरेलू अपशिष्टों से कुछ भिन्न होता है। इससे अदृश्य विकिरण पुंज निकलते रहते हैं जिससे होने वाले प्रदूषण की जानकारी केवल खास यंत्रों से ही प्राप्त की जा सकती है, जबकि अन्य अपशिष्टों से होने वाले प्रदूषण का आभास उसकी गंध, स्वाद, रंग एवं भौतिक अवस्था से हो सकता है। विकिरण के दुष्परिणाम तो केवल आने वाली पीढ़ियों पर ही दृष्टिगत होते हैं । परिणाम स्वरूप रेडियोएक्टिव अपशिष्ट प्रबंधन का कार्यक्रम बहुत सोच समझ कर बनाया जाता है एवं सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जाता है ।

नाभिकीय अपशिष्ट हर उस क्रिया में उत्पन्न होता है जहां रेडियोएक्टिव पदार्थों का उपयोग किया जाता है । परन्तु इसका मुख्य स्रोत नाभिकीय ईंधन चक्र है । इस चक्र का प्रथम चरण यूरेनियम की खानों से प्रारंभ होता है। खानों से निकले यूरेनियम अयस्क से यूरेनियम धातु को पृथक किया जाता है। इसका उपयोग परमाणु भट्ठियों में ऊर्जा प्राप्त करने के लिए और उपयोगी कृत्रिम रेडियोआइसोटोप बनाने के लिए किया जाता है । भट्ठियों में दहन के उपरांत ईंधन को पुनः संसाधन संयंत्र में ले जाया जाता है । यहां प्लूटोनियम, जो परमाणु भट्ठी में नाभिकीय अभिक्रिया द्वारा उत्पन्न होता है और यूरेनियम, अपशिष्ट से प्रथक किए जाते हैं । प्लूटोनियम को नाभिकीय ईंधन के रूप में उपयोग में लाया जाता है । इस प्रकार, यूरेनियम के उत्पादन से लेकर ईंधन पुनः संसाधन संयंत्र तक की समस्त क्रिया को नाभिकीय ईंधन-चक्र कहते हैं । इस चक्र के प्रत्येक चरण में रेडियोएक्टिव पदार्थ अपशिष्ट के रूप में उत्पन्न होते हैं । कुछ अपशिष्ट पदार्थों की रेडियोएक्टिवता कम, कुछ की मध्यम तथा कुछ की बहुत ही अधिक होती है । प्रबंधन के दृष्टिकोण से भी इनको रेडियोएक्टिवता के आधार पर तीन मुख्य वर्गों में विभाजित किया जाता है; निम्न, मध्यम एवं उच्चस्तरीय अपशिष्ट। नाभिकीय अपशिष्ट तीनों भौतिक अवस्थाओं, ठोस, द्रव एवं गैस में प्राप्त होते हैं । इनमें द्रव

अवस्था सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि ईंधन चक्र में पाए जाने वाली रेडियो एक्टिवता का 11 प्रतिशत भाग द्रव अवस्था में ही होता है ।

रेडियोएक्टिव अपशिष्ट से छुटकारा पाने के दो विकल्प हैं । एक तो इसे सांद्रित करके नियंत्रितरूप से एकत्रित कर सुरक्षित रखा जाए या फिर इसकी सांद्रता को प्रभावहीन सीमा तक घटा कर पर्यावरण में छोड़ दिया जाए । कहने को तो यह विकल्प सरल जान पड़ते हैं परंतु परमाणु उद्योग के संदर्भ में निर्णय लेते हुए कई पहलुओं पर विचार करने तथा दूरगामी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता होती है । जिन पहलुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है, वह हैं - विकिरण के दुष्परिणामों से बचाव तथा सांद्रित पदार्थों को लंबे समय तक सुरक्षित तथा नियंत्रित रखने का व्यय ।

व्यवहारिक रूप से प्रबंधन का कार्यक्रम दोनों विकल्पों के सही मेल जोल से बनाया जाता है। कुछ कम आयु वाले अपशिष्ट पदार्थों की रेडियोएक्टिवता स्वतः कुछ समय पश्चात कम हो जाती है और इस प्रकार के अपशिष्ट पदार्थों की रेडियोएक्टिवता कम हो जाने पर बिना खतरे के वातावरण में छोड़ा जा सकता है । इसके लिए बड़ी बड़ी भंडार टंकियों का उपयोग किया जाता है । रेडियोएक्टिव द्रव अपशिष्ट इन टंकियों में भरकर तब तक रख दिया जाता है जब तक रेडियोएक्टिवता कम होकर प्रभावहीन नहीं हो जाती। चित्र-1 में इस प्रकार की टंकियां दर्शाई गई हैं ।

मुख्यतः लंबी आयु वाले रेडियोआइसोटोप, अपशिष्ट की रेडियोएक्टिवता का कारण होते हैं। यह ध्यान में रखते हुए हमारे प्रबंधन कार्यक्रमों का मुख्य लक्ष्य, अपशिष्ट की रेडियोएक्टिवता को सांद्रित कर सुरक्षित रखना तथा कम से कम रेडियोएक्टिव पदार्थों का पर्यावरण में छोड़ना है । इस संबंध में हमारे प्रयत्न "नगण्य विसर्जन" के लक्ष्य को प्राप्त करने के रहते हैं । इस दिशा में अधिक प्रभावकारी तकनीक के विकास का प्रयास किया जा रहा है ।

आयन विनिमय विधि द्वारा कुछ विशेष रेडियोएक्टिव नाभिकों को अलग करते हैं। इसके लिए प्राकृतिक पदार्थ जैसे "वर्मीक्यूलाइट तथा बेंटोनाइट क्ले" आदि का उपयोग किया जाता है । यह तकनीक विशेष रूप से लंबी आयु वाले रेडियोएक्टिव सीज़ियम तथा स्ट्रांशियम के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। इसके अतिरिक्त कृत्रिम कार्बनिक आयनविनिमयक भी उपयोग में लाए जाते हैं। इसकी विशेषता यह है कि इसको पुनर्जनन कर दोबारा उपयोग में लाया जा सकता है । प्राकृतिक पदार्थ जैसे वर्मीक्यूलाइट का उपयोग एक ही बार किया जा सकता है । परंतु सांद्रित हुई रेडियोएक्टिवता इसमें सुरक्षित रूप से काफी लंबे समय तक भंडारित रह सकती है ।

मध्यम स्तर के अपशिष्ट का उपचार मुख्यतः सांद्रित कर ठोस पदार्थ में बदलना है। इस क्रिया में अपशिष्ट को कोलतार के साथ मिलाकर गरम किया जाता है। इस विधि को चित्र-2 में दिखाया गया है । बाष्पीकरण द्वारा अपशिष्ट सांद्रित होता है तथा कोलतार के साथ मिल जाता है। ठंडा होने पर यह ठोस अवस्था में आ जाता है। चित्र-3 में कोलतार के साथ अपशिष्ट ठोसीकरण संबंधित यंत्र दर्शाए गए हैं जो एक विशेष कक्ष में स्थित हैं। इस प्रकार प्राप्त ठोस पदार्थ ड्रम में भरकर निपटान के लिए पक्के गड्ढों में डाल दिया जाता है। वहां वह लंबे समय तक सुरक्षित रहता है । मध्यम स्तर के कुछ सांद्रित पदार्थों को ठोस बनाने के लिए सीमेंट का भी प्रयोग किया जाता है ।

उच्चस्तरीय अपशिष्टों का उपचार, भंडारन तथा निपटान एक जटिल समस्या है । इनकी रेडियोएक्टिवता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि इनसे निकलने वाले विकिरण से इनमें ऊष्मा पैदा होती है और यदि यह क्षयऊष्मा उसमें बनी रहने दी जाए तो अपशिष्ट-द्रव स्वतः उबलने लगता है। इस प्रकार के अपशिष्टों के प्रबंधन में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि ऊष्मा आवश्यकता से अधिक एकत्रित न हो । इसलिए भंडारन तथा रख रखाव करते समय इनको ठंडा रखने की विशेष व्यवस्था की जाती है । इसके अतिरिक्त उपचार क्रियाएं तथा रख रखाव कार्य सुदूररूप से नियंत्रित किए जाते हैं । यह बहुत ही कठिन तथा जटिल क्रिया है हमारे वैज्ञानिकों ने आवश्यक सुदूर नियंत्रण यंत्रों का विकास करके यह संभव कर लिया है ।

आज सर्वसामान्य धारणा यह है कि इन अपशिष्ट पदार्थों का द्रवरूप में लंबे समय तक रखने के स्थान पर, इनका ठोस अवस्था में भंडारन करना अधिक सुरक्षित होगा। इस उद्देश्य से इनकी ठोसीकरण विधि विकसित की गई है तथा संबंधित

चित्र - 1

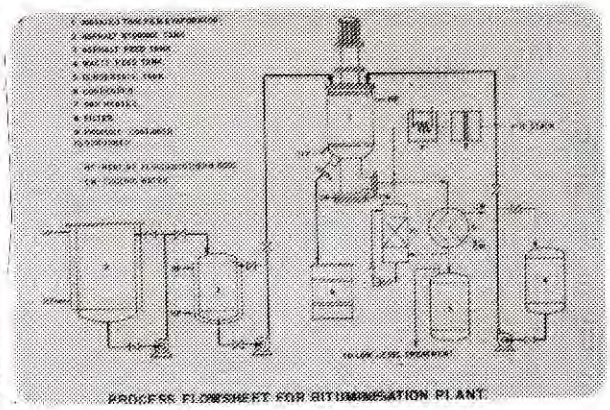

चित्र - 2

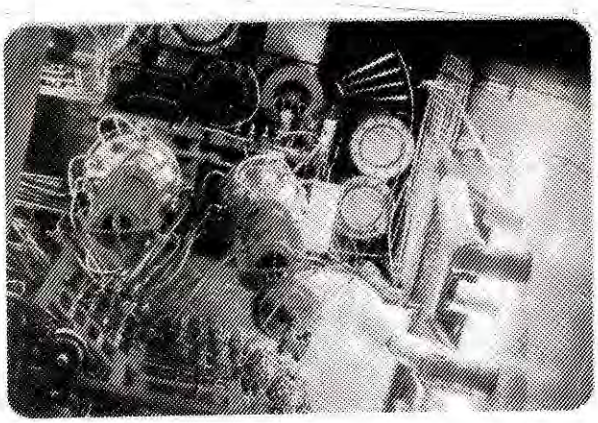

चित्र - 3

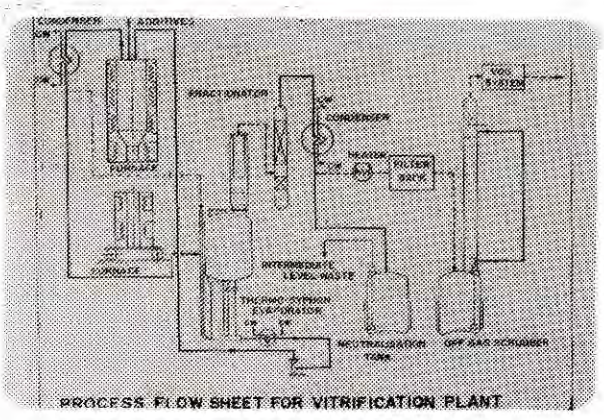

चित्र - 4

संयंत्र भी स्थापित कर लिया गया है। बहुत से देशों में अब भी उच्चस्तरीय अपशिष्ट का द्रव के रूप में स्टील की टंकियों में भंडारन करते हैं, जिन्हें द्रव अपशिष्ट भंडार टंकियाँ भी कहते हैं । ऐसा करना एक अस्थाई प्रबंधन ही कहा जा सकता है । हमारे देश में जो ठोसीकरण की विधि विकसित की गई है उसे "कांचन स्थिरीकरण" कहा जाता है। इस विधि को चित्र-4 में दिखाया गया है। इस विधि में सर्वप्रथम अपशिष्ट को वाष्पीकरण द्वारा सांद्रित किया जाता है। तत्पश्चात् काँच बनाने के लिए जिन रासायनिक अवयवों की आवश्यकता होती है, उन्हें सांद्रित अपशिष्ट के साथ मिला कर एक विशेष विद्युत भट्टी में रख कर 1100^0 से. तापमान तक गर्म किया जाता है जिससे मिश्रण पिघलकर काँचीकृत हो जाता है । इस प्रकार बने ठोस काँचीकृत अपशिष्ट को स्टील के धारकों में भरकर बंद कर दिया जाता है। चित्र-5 में उच्चस्तरीय अपशिष्ट स्थिरीकरण संयंत्र दिखाया गया है। चित्र-6 में इस संयंत्र का एक कक्ष दिखाया गया है जिसमें स्थिरीकरण किया जाता है । इस कक्ष के सारे प्रचालन, सुदूर से बाहर लगे उपकरणों द्वारा नियंत्रित किए जाते हैं ।

उच्चस्तरीय अपशिष्ट के काँचीकरण से बने ठोस का तुरंत निपटान नहीं किया जाता । इसे लगभग 20 वर्षों तक सुरक्षित तथा नियंत्रित भंडार कक्ष में रखते हैं जिससे उसकी क्षय ऊष्मा तथा रेडियोएक्टिवता कम हो जाती है । इस उद्देश्य के लिए एक विशेष ठोस भंडारन एवं निरीक्षण सुविधा का निर्माण किया गया है । इसमें ठोस पदार्थ को विशेष कक्ष में रखा जाता है जिसमें ठोस की ऊष्मा निकलने की व्यवस्था हवा के नियंत्रित संचार द्वारा की गई है । चित्र-7 में इस व्यवस्था को दर्शाया गया है ।

लगभग 20 वर्ष के सुरक्षित भंडारन के बाद उच्चस्तरीय ठोस अपशिष्ट के अंतिम निपटान की समस्या रह जाती है । हमारे कार्यक्रमों में अंतिम निपटान के लिए धरती के अंदर गहराई में स्थित चट्टानों में खदान बनाकर अपशिष्ट का निपटान करने की योजना है। इस संबंध में सही जगह का चयन तथा अन्य शोध कार्य किए जा रहे हैं । इस प्रकार की शोध सुविधा एक गहरी खान में निर्मित की गई है जिसे चित्र-8 में दर्शाया गया है । यहाँ चट्टानों पर ऊष्मा से होने वाले संभावित प्रभावों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रयोग किए जा रहे हैं ।

निम्न तथा मध्यम स्तरीय ठोस अपशिष्टों का उपचार उनका आयतन कम करने तथा इससे प्राप्त होने वाले सांद्रित पदार्थों को ठोस करने तक ही सीमित है। आयतन या तो दबाव की विधि से अथवा भस्मीकरण की विधि से कम किया जाता है । इसके लिए प्रेस तथा इंसीनिरेटर का प्रयोग किया जाता है। भस्मीकरण क्रिया से उत्पन्न होने वाली गैस का विशेष संयंत्रों द्वारा शुद्धिकरण कर वातावरण में छोड़ दिया जाता है । इन क्रियाओं से प्राप्त सांद्रित ठोस अपशिष्ट को धरती में विशेष प्रकार के गड्ढों या कक्षों में सुरक्षित रख दिया जाता है । यह गड्ढे व कक्ष या तो कच्चे होते हैं या सीमेंट कंकरीट से बनाए जाते हैं । इनका उपयोग अपशिष्टों की रेडियो एक्टिवता पर निर्भर करता है। इसके अंतर्गत एक और प्रणाली जिसे "टाइल होल" कहते है, उसका भी प्रयोग किया जाता है। इस विधि में कंकरीट पाइपों को जमीन के अंदर गाड़ दिया जाता है और ठोस अपशिष्ट इसमें भरकर इसे बंद कर दिया जाता है । इसकी गहराई लगभग 5 मीटर होती है । इस स्थिति में अपशिष्ट सुरक्षित रहता है । चित्र-9 तथा 10 में इनमें से कुछ सुविधाएं दिखाई गई है।

जिस क्षेत्र में इनका निर्माण करना हो उस क्षेत्र की पहले पूर्ण जानकारी प्राप्त कर ली जाती है। वहां की मिट्टी में रेडियोएक्टिवता सांद्रित करने की क्षमता परखी जाती है। साथ में वहां भूमिगत जल स्तर तथा उसके बहाव आदि के बारे में संपूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जाता है। जब सब परिस्थितियाँ अनुकूल पाई जाती है, तभी इस क्षेत्र को अपशिष्ट निपटान के लिए चुना जाता है तथा ऊपर बताई गई सुविधाओं का निर्माण किया जाता है । इस कार्य में पूरी सावधानी बरती जाती है एवं यह भी ध्यान रखा जाता है कि अपशिष्ट पर्यावरण से लंबे समय तक अलग रहे । इसलिए अपशिष्ट एवं पर्यावरण के मध्य 2-3 बाधाएं डालने का प्रावधान किया जाता है । उदाहरणार्थ, ठोसीकरण अवयव प्रथम बाधा का काम करता है तथा धारक (कन्टेनर) दूसरी बाधा का । धरती में बने विशेष गड्ढे या कक्ष एक और बाधा का काम करते हैं । फिर भी सुरक्षा की दृष्टि से, लंबे समय तक इन क्षेत्रों की देखभाल व निरीक्षण का कार्य किया जाता है जिससे प्रदूषण की यदि थोड़ी भी संभावना का पता लगे तो तुरंत उसे रोकने के उपाय किए जा सकें । हमारा आज तक का अनुभव इस संबंध में बहुत अच्छा और सफल रहा है । अभी तक ऐसी कोई स्थिति सामने नहीं आई जिसमें

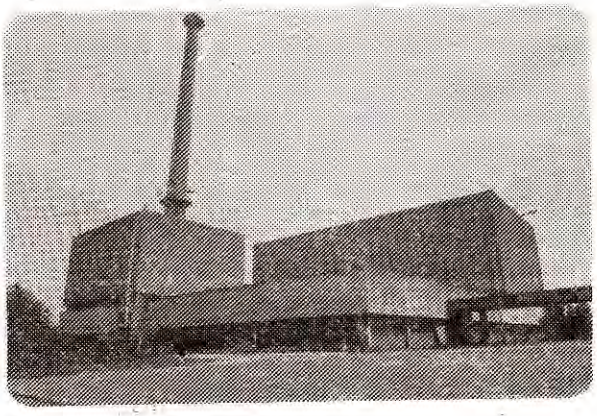

चित्र - 5

चित्र - 6

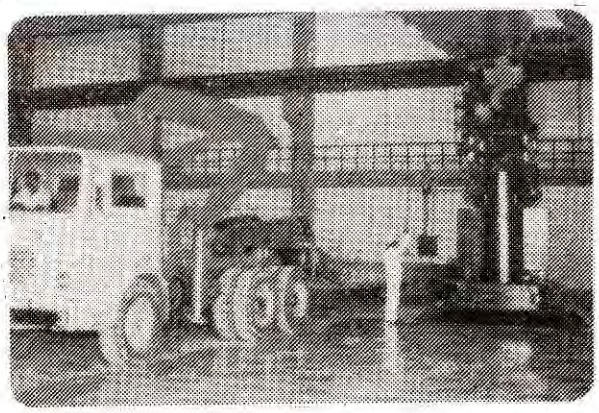

चित्र - 7

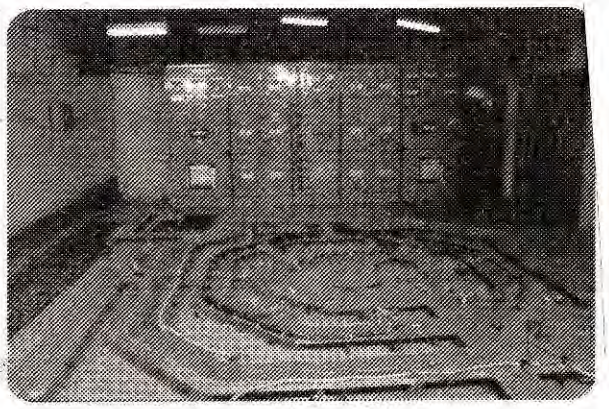

चित्र - 8

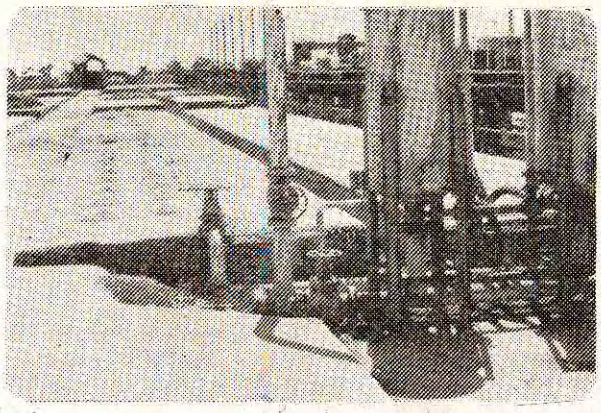

चित्र - 9

चित्र - 10

भंडारन तथा निपटान सुविधाओं से रेडियोएक्टिव प्रदूषण का निकास हुआ हो ।

यह देखते हुए हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि भविष्य में भी ऐसी कोई संभावना उत्पन्न नहीं होगी । फिर भी हम चौकन्ने रहते हुए शोध कार्यों में जुटे हुए हैं ताकि और भी प्रभावशाली तकनीकों का विकास हो एवं जनसाधारण की शंकाओं का निराकरण हो सके । अंत में यह कहना उचित होगा कि रेडियोएक्टिव अपशिष्ट के कारण किसी प्रकार के भय की आवश्यकता नहीं है ।

संलयन रिएक्टर

अनुराग श्याम
न्यूट्रान भौतिकी प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र
ट्रांबे, बम्बई - 400 085.

संलयन ऊर्जा

दो छोटी नाभिक संलयन से जब एक बड़ी नाभिक बनती है तो साथ में अत्यधिक ऊर्जा का भी उत्पादन होता है । यह संलयन ऊर्जा ब्रह्माण्ड का मूलभूत ऊर्जा स्रोत है । सूर्य और तारे अपनी ऊर्जा का उत्पादन हाइड्रोजन के हीलियम में संलयन से करते हैं। इसके बाद हीलियम के संलयन से कार्बन का निर्माण होता है । तदुपारान्त कार्बन के संलयन से सिलीकोन, और सिलीकोन के संलयन से लोहे का उत्पादन होता है । अन्य नाभिकीय प्रतिक्रियाओं से अन्य तत्वों का निर्माण होता है । लोहे तक जितनी भी संलयन प्रतिक्रियायें होती हैं उनमें से ऊर्जा निकलती है पर उसके उपरान्त के तत्वों के निर्माण में (जैसे कि यूरेनियम) ऊर्जा की आवश्यकता होती है और यह ऊर्जा छोटे नाभिकों के संलयन से ही प्राप्त होती है ।

इस प्रकार धरती के सभी ऊर्जा स्रोतों का निर्माण सिर्फ संलयन ऊर्जा के संचय से ही हुआ है । कोयला और पेट्रोलियम में संलयन (सौर) ऊर्जा का संचय रसायनिक रूप में हुआ है । यूरेनियम और दूसरे नाभिकीय विखंडनीय ऊर्जा स्रोतों का निर्माण संलयन ऊर्जा के नाभिकीय रूप में संचय से हुआ है । इसलिए यदि हम धरती पर संलयन रिएक्टर बना सकें तो हमारी ऊर्जा सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति सदा के लिए हो जाएगी ।

पृथ्वी पर संलयन

धरती पर संलयन करने के लिए ऐसे संलयकों की आवश्यकता है जो कि सूर्य की तुलना में लघु स्तर पर संलयन कर सकें। सबसे अधिक आशाजनक संलयक ट्रिटियम और ड्यूटेरियम (भारी हाइड्रोजन जिनका परमाणु भार क्रमशः तीन और दो होता है) हैं । परंतु इनका भी संलयन करके शुद्ध (निवल) ऊर्जा के उत्पादन के लिए भी संलयकों का तापमान चार करोड़ सेल्सियस से अधिक होना चाहिए । इसके अतिरिक्त, संलयकों को अत्यधिक दबाव पर निश्चित समय से अधिक समय के लिए परिसीमित करना पड़ता है (दबाव और परिसीमन समय का गुणनफल दो ऐटमॉस्फियर सैकेंड से अधिक होना चाहिए)

तापन पद्धति

संलयन तत्वों का तापमान कई प्रकार से बढ़ाया जा सकता है । विद्युत प्रतिरोध, संपीडन, विद्युत तरंगों अथवा त्वरित कणों द्वारा संलयकों को ऊष्मा प्रदान की जा सकती है। संलयकों का तापमान बढ़ाना इतना कठिन काम नहीं है परन्तु उनका उच्च ताप पर परिसीमन करना काफी कठिन है ।

परिसीमन पद्धति

कई करोड़ सेल्सियस पर संलयकों के आयतन में ध्वनि की गति से (लगभग ३६ लाख किलो-मीटर प्रति घंटा) विस्तार होगा और शीघ्र ही उनका दबाव आवश्यक से कम हो जाएगा। इसीलिए संलयकों से शुद्ध ऊर्जा प्राप्त करने के दो तरीके हो सकते हैं । एक तो संलयकों के दबाव को बढ़ाया जाए ।

रिएक्टर स्तर, बिना परिसीमन के ऊर्जा प्राप्त करने के लिए संलयकों के दबाव कई अरब एट्मॉस्फियर होना आवश्यक है । इस दबाव को प्राप्त करने के लेजर किरणें अथवा त्वरित कणों का उपयोग किया जा रहा है, परंतु अभी तक कुछ करोड़ एट्मॉस्फियर दबाव ही प्राप्त किया जा सका है । अधिक दबाव प्राप्त करने के प्रयास जारी है।

दूसरी ओर संलयकों को परिसीमित करने के लिए भी अनेक पद्धतियां अपनायी गई हैं । सबसे अधिक सफलता चुम्बकीय क्षेत्रों द्वारा परिसीमन से मिली है । चुम्बकीय क्षेत्रों से परिसीमन करने की विधियों में पिच, मिरर और टोकामॉक प्रमुख है। संलयन करने की सभी विधियों में टोकामॉक अग्रणी है । परंतु इस विधि से भी शुद्ध ऊर्जा प्राप्त करने के लिए अभी इसका परिसीमन समय कई गुणा बढ़ाने की आवश्यकता है ।

संलयन रिएक्टर की विश्व स्तर पर स्थिति

सबसे अधिक विकसित स्थिति में अभी तक टोकोमॉक युक्ति है। विश्व में चार बड़े टोकोमॉक, अमरीका (टी.एफ.टी.आर.), इग्लैंड (जेट), जापान (जेटी-60) और रूस (टी-15) में हैं । हो सकता है कि इन में से कोई भी इस शताब्दी के अंत तक शुद्ध ऊर्जा का उत्पादन प्रयोगशाला स्तर पर कर सके। परंतु इसके बाद कई जटिल तकनीकी समस्याओं का समाधान करने के उपरांत ही संलयन रिएक्टर का निर्माण किया जा सकेगा और यह इक्कीसवीं शताब्दी से पहले सम्भव नहीं है ।

इसके अतिरिक्त, बड़े पैमाने पर लेज़र किरणों और त्वरित कणों का प्रयोग संलयन करने के लिए अमेरिका में क्रमशः शिवनोवा और पी.बी.एफ.ए. नामक संयंत्रों से प्रयत्न किए जा रहे हैं ।

भारत में अभी तक संलयन रिएक्टरों पर अनुसंधान प्रारम्भिक स्तर पर ही है । टोकोमॉक पर अनुसंधान प्लावका अनुसंधान संस्थान (अहमदाबाद) और साहा नाभिकीय अनुसंधान (कलकत्ता) में हो रहा है । इसके अतिरिक्त लेज़र किरणों, त्वरित कणों और पिच पर आधारित प्रयोग भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (बम्बई) में हो रहे हैं।

भारत के नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम में द्रुत प्रजनक रिएक्टरों का महत्त्व

आर. शंकर सिंह
इन्दिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र, कल्पाक्कम

1. **परिचय**

इस लेख में निम्नलिखित मुख्य अंशों का उल्लेख किया गया है।

- भारत के विभिन्न ऊर्जा स्रोत
- नाभिकीय ऊर्जा की आवश्यकता
- द्रुत प्रजनक रिएक्टरों का महत्व
- द्रुत प्रजनक रिएक्टर के सिद्धांत और गुण
- द्रुत प्रजनक रिएक्टर का कार्यक्रम
- सुरक्षा

2. **भारत में संभाव्य ऊर्जा स्रोत इस प्रकार हैं :**

कोयला :

कुल	-	170 अरब टन
सिद्ध	-	50 अरब टन
सूचित	-	70 अरब टन
अनुमानित	-	50 अरब टन
खनिज तेल व गैस सूचित	-	17 अरब टन
हाइड्रो (जलपात) अनुमानित	-	100,000 मेगावाट
युरेनियम	-	70,000 टन
थोरियम	-	360,000 टन

3. **भारत की स्थिति**

भारत में प्रस्तुत बिजली क्षमता 55,000 मेगावाट की है। भारत की जनता के जीवन स्तर को ऊँचा करने के लिए वर्ष 2050 में बिजली की मांग 400,000 मेगा वाट तक बढ़ जाएगी। लेकिन प्रस्तुत गति से कोयले का इस्तेमाल अगर होता रहा तो सिद्ध कोयला 2050 तक खत्म होगा। देश में खनिज तेल व गैस बहुत कम है और इनकी अन्य जरूरतें भी हैं। हाइड्रो ऊर्जा सिर्फ 12 प्रतिशत उपलब्ध है। सौर, वायु, सागर, गोबर गैस आदि ऊर्जा का प्रयोग बहुत सीमित रहेगा। इसलिए भारत में सिर्फ नाभिकीय ऊर्जा ही पर्याय स्रोत हो सकता है। दुनियाँ में प्रस्तुत नाभिकीय ऊर्जा से बिजली की क्षमता इस प्रकार है :

स्थापित - 312,000 मेगा वाट
निर्माण में - 124,000 मेगा वाट

फ्राँस देश में नाभिकीय ऊर्जा से बिजली का उत्पादन 70 प्रतिशत तक हो रहा है।

4. **भारत का नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम**

डॉ. भाभा ने भारत में नाभिकीय ऊर्जा का कार्यक्रम तीन चरणों में आयोजित किया था।

पहिला कदम : भारीजल संयमित रिएक्टर का निर्माण जिनसे 10,000-15,000 मेगा वाट बिजली पैदा की जायेगी। इन रिएक्टरों में प्राकृतिक युरेनियम का प्रयोग होगा और साथ में 3 टन प्लूटोनियम प्रति साल उत्पन्न होगा।

दूसरा कदम : इस प्लूटोनियम और क्षामित युरेनियम (जो पहले चरण से मिलेंगे) का प्रयोग द्रुत प्रजनक रिएक्टरों में किया जाएगा, जिनसे 350,000 मेगा वाट की बिजली पैदा हो सकती है और साथ ही साथ अधिक प्लूटोनियम का उत्पादन भी होगा।

तीसरा कदम : इस में थोरियम प्रजनक रिएक्टर बनाए जायेंगे जिनसे 1000,000 मेगा वाट की बिजली पैदा की जा सकती है।

5. **प्रजनन के सिद्धांत :**

नाभिकीय रिएक्टरों में विखंडनीय ईंधन Pu^{239} और U^{233} का उत्पादन निम्नलिखित नाभिकीय प्रतिक्रियाओं से होता है।

$$U^{238} + n \xrightarrow[23\ m]{\beta} Np^{239} \xrightarrow[2.3\ d]{\beta} Pu^{239}$$

$$Th^{232} + n \xrightarrow[22\ m]{\beta} Pa^{233} \xrightarrow[27\ d]{\beta} U^{233}$$

प्रजनन अनुपात की परिभाषा इस प्रकार है

$$\text{(प्रजनन अनुपात (प्र. अ)} = \frac{\text{नये ईंधन का उत्पादन}}{\text{ईंधन का उपभोग}}$$

तापीय रिएक्टरों में प्र. अ. ~ 0.6 - 0.7 तक ही होता है। द्रुत न्यूट्रानों के विखंडन से अधिक न्यूट्रानों की उत्पत्ति होती है। द्रुत रिएक्टरों में प्र.अ. ~ 1.2 से 1.4 तक हो सकता है जिस से नया ईंधन ज्यादा से ज्यादा पैदा किया जा सकता है। द्रुत रिएक्टरों में U^{238} का विखंडन संभव है जिससे नाभिकीय ऊर्जा U^{238} से भी पैदा हो सकती है। इस तरह द्रुत रिएक्टरों में यूरेनियम का प्रयोग 100 गुना अधिक हो सकता है और यूरेनियम का दक्षता पूर्वक प्रयोग किया जा सकता है। द्रुत प्रजनक रिएक्टरों से नाभिकीय शक्ति का उत्पादन अधिक से अधिक स्तर पर पहुँचेगा जो कि सिर्फ संयमित रिएक्टरों के जरिये नहीं हो सकता।

6. द्रुत प्रजनक रिएक्टरों के गुण

द्रुत प्रजनक रिएक्टरों के गुण निम्नलिखित चित्र में सूचित किए गए हैं।

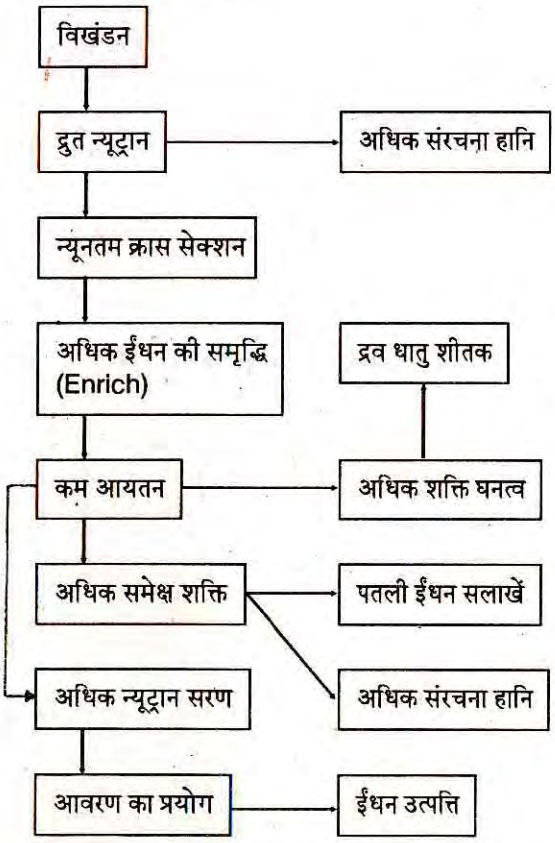

प्रस्तुत द्रुत प्रजनक रिएक्टरों को Liquid Metal cooled Fast Breeder Reactors (Sodium) (LMFBR) यानि द्रव धातु शीतित द्रुत प्रजनक रिएक्टर कहते हैं। ये दो तरह के होते हैं - 1) पूल (तालाबी) रिएक्टर और 2) लूप (परिक्रमा) रिएक्टर (इनका विवरण चित्र-1 और चित्र-2 में किया गया है।)

7. कल्पाक्कम में द्रुत प्रजनक रिएक्टरों का कार्यक्रम

डॉ. भाभा के दूसरे चरण के आयोजन को लागू करने के लिए कल्पाक्कम में इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र स्थापित किया गया है। इस केंद्र का मुख्य लक्ष्य द्रुत प्रजनक परीक्षण रिएक्टर (Fast Breeder Test Reactor) का निर्माण और द्रुत प्रजनक रिएक्टर तकनीकी से संबंधित अनुसंधान व विकास कार्य हैं। यहाँ का द्रुत प्रजनक रिएक्टर F.B.T.R. द्रव सोडियम शीतित, युरेनियम प्लुटोनियम के मिश्र कार्बाइड ईंधन से चालित लूप किस्म का रिएक्टर है (चित्र-3)। इस रिएक्टर की क्रांतिकता अक्टूबर 1985 में हुई। यह 40 मेगावाट (तापीय) और 13.5 मेगावाट (विद्युत) क्षमता वाला रिएक्टर है। इस रिएक्टर की शीतक परिक्रमा का नमूना चित्र-3 में दिखाया गया है। यह रिएक्टर संसार में युरेनियम-प्लुटोनियम के मिश्र कार्बाइड ईंधन से चलने वाला एकमात्र है। F.B.T.R. के मुख्य प्राचल सारणी संख्या-1 में दिए गये हैं। इस रिएक्टर के दौरान भारतीय वैज्ञानिकों और अभियंताओं ने द्रव धातु शीतित द्रुत प्रजनक रिएक्टरों के डिजाइन, निर्माण और संचालन के सभी पहलुओं का गहराई से अध्ययन किया और बहुमूल्य अनुभव प्राप्त किया।

F.B.T.R. के संचालन से प्राप्त अनुभव से इस केंद्र के वैज्ञानिकों और अभियंताओं को व्यावसायिक द्रुत प्रजनक बिजलीघरों के डिजाइन व निर्माण के लिए आवश्यक ज्ञान एवं आत्मविश्वास मिला है। इस के आधार पर 500 मेगा वाट क्षमता का Prototype Fast Breeder Reactor (P.F.B.R.) प्रोटोटाइप द्रुत प्रजनक बिजलीघर का डिजाइन किया गया है। इस रिएक्टर के प्राचल भी सारणी सारणी-1 में दिए गये हैं। यह रिएक्टर पूल किस्म का होगा और इसका नमूना चित्र-4 में दिखाया गया है। इस 500 मेगा वाट क्षमता के बिजलीघर के निर्माण की दिशा में इस केंद्र में कार्य आरंभ

किया जा चुका है और इसका संचालन वर्ष 2000 में शुरू करने का आयोजन किया गया है।

8. **रिएक्टर सुरक्षा**

रिएक्टर सुरक्षा निम्नलिखित तीन स्तरों में की जाती है :

1. अभिकल्पना में अन्तर्निहित सुरक्षा व्यवस्था करना
   - विभिन्न स्तर के अवरोध डिजाइन करना
   - ऋणात्मक अभिक्रियता गुणांक (Negative Reactivity Coefficients)
2. संयंत्र संरक्षण तंत्र (Plant Protection Systems)
   - नियंत्रण/सुरक्षा छड़ों का प्रयोग करना
   - इंजिनियरी सुरक्षण का डिजाइन करना
3. रिएक्टर संरोधन का प्रबंध करना (Reactor Containment)

रेडियो धर्मी द्रव्यों को पर्यावरण में जाने से रोकने के लिए रिएक्टरों में अलग अलग स्तरों में अवरोध डिजाइन किए जाते हैं। इनको चित्र-5 में दिखाया गया है। पहला अवरोध रक्षक है, दूसरा अवरोध रिएक्टर टंकी, तीसरा सुरक्षा टंकी और चौथा अवरोध प्रतिबंध भवन है। इन अवरोधों से किसी भी तरह की दुर्घटनात्मक परिस्थिति में रेडियो धर्मी द्रव्यों को पर्यावरण में मोचन होने से रोका जा सकता है और जनता की सुरक्षा ठीक तरह की जा सकती है।

सारणी - 1

प्राचल (Parameter)	F. B. T. R.	P. F. B. R.
रिएक्टर शक्ति (Mwt/Mwe)	40 / 13.2	1200 / 500
अभिकल्पना का नमूना	लूप नमूना	पूल (तालाबी)
ईंधन घटक संख्या	65	180
क्रोड (Core) - ऊँचाई (m) - व्यास (m)	0.32 0.46	1.0 1.9
अंदरी शीतक उष्णोग्रता (^{0}c)	380	380
बाहरी शीतक उष्णोग्रता (^{0}c)	515	530
पहला शीतक प्रवाह (t/s)	0.3	6.6
पहली पंपे संख्या	2	4
उष्णता विनिमायक संख्या	2	8
द्वितीय लूप संख्या	2	4
वाष्प का तापमान (^{0}c)	480	480
वाष्प का दाब (MPa)	12.5	17

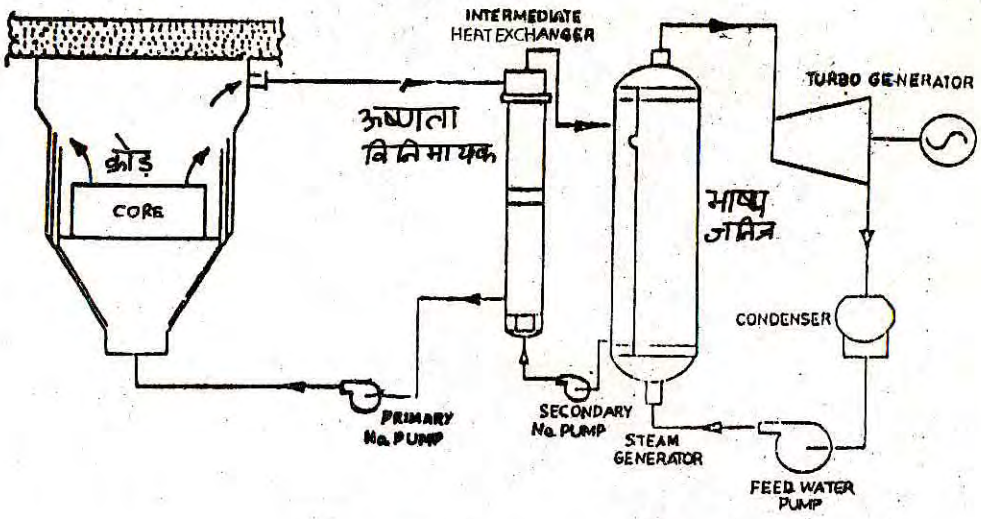

चित्र - 1
LMFBR लूप

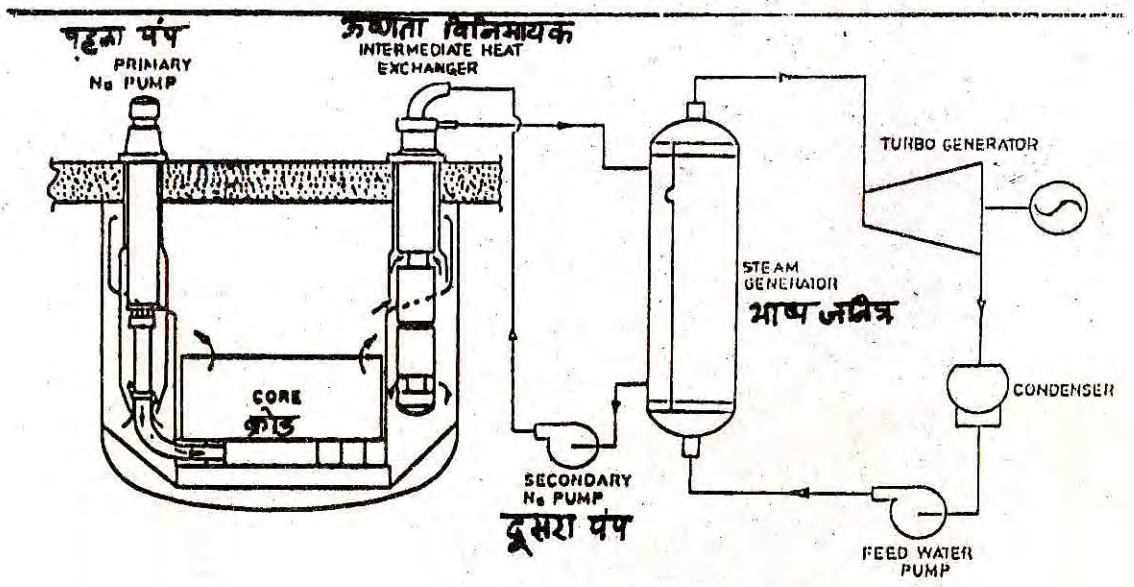

चित्र - 2
तालाबी रिएक्टर (Pool Type LMFBR)

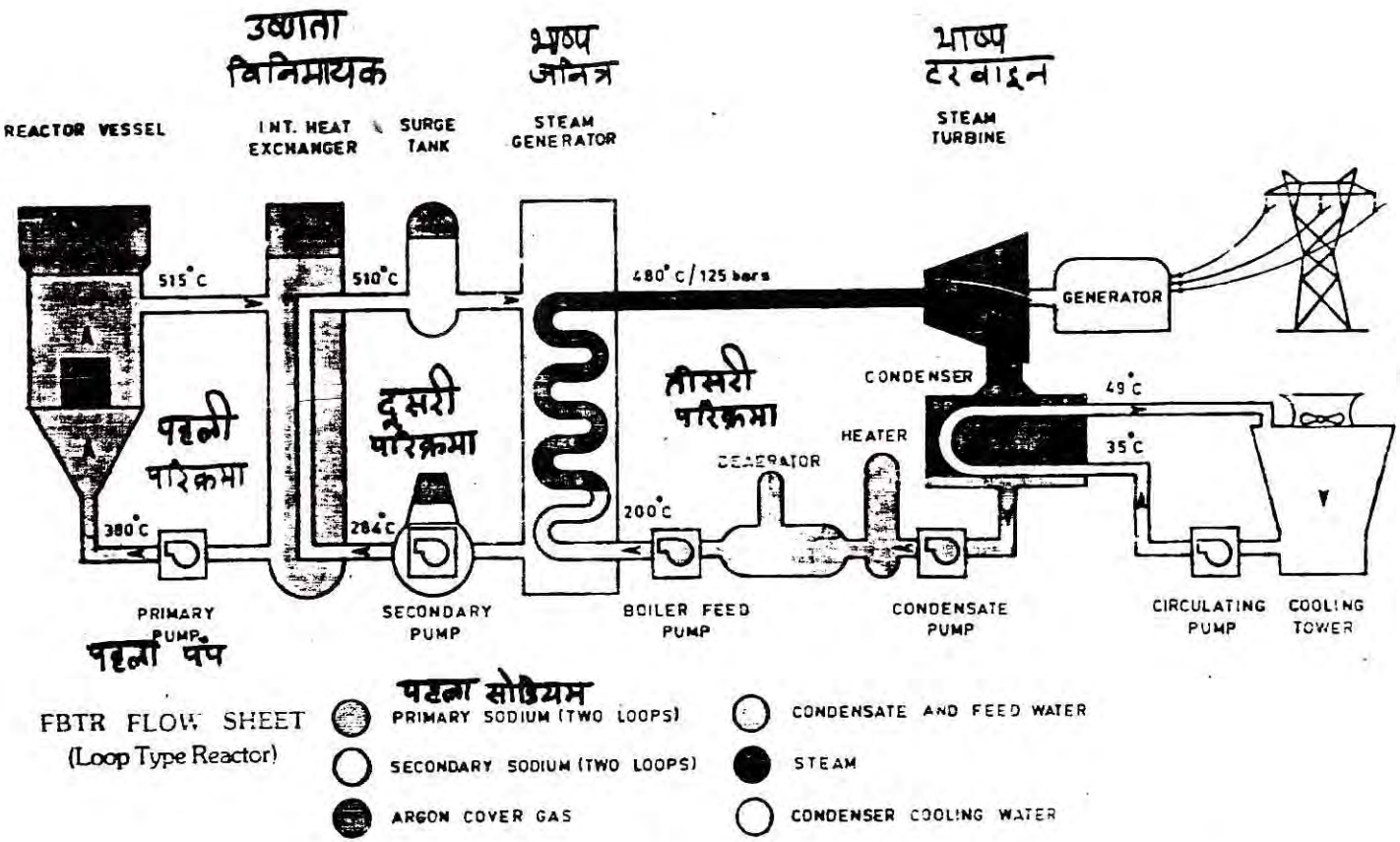

चित्र-3
F.B.T.R. की शीतक परिक्रमा

चित्र - 4

F.B.T.R. रिएक्टर समुच्चय (Assembly)

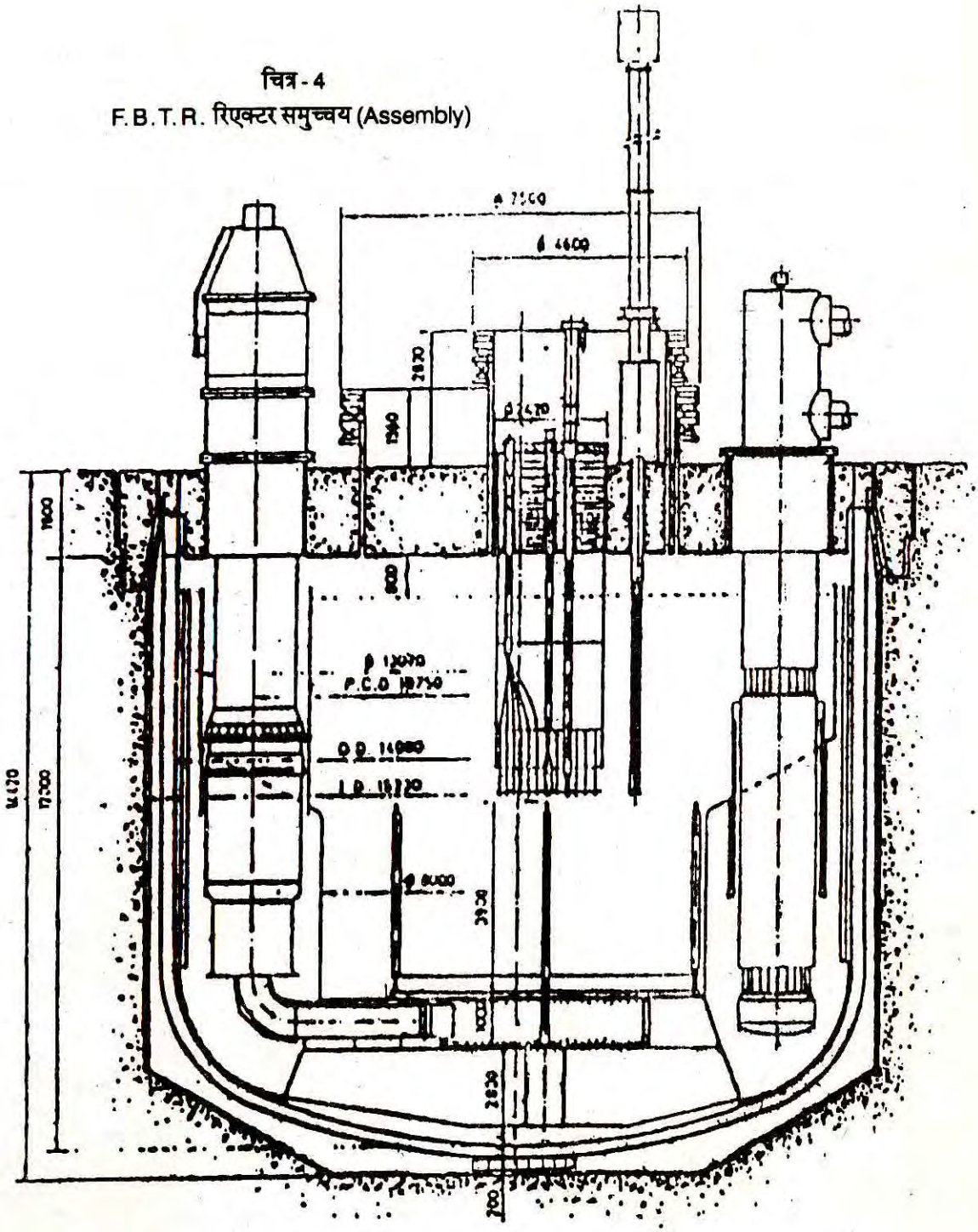

चित्र-5

रेडियो धार्मिक द्रव्यों के मोचन का अवरोध

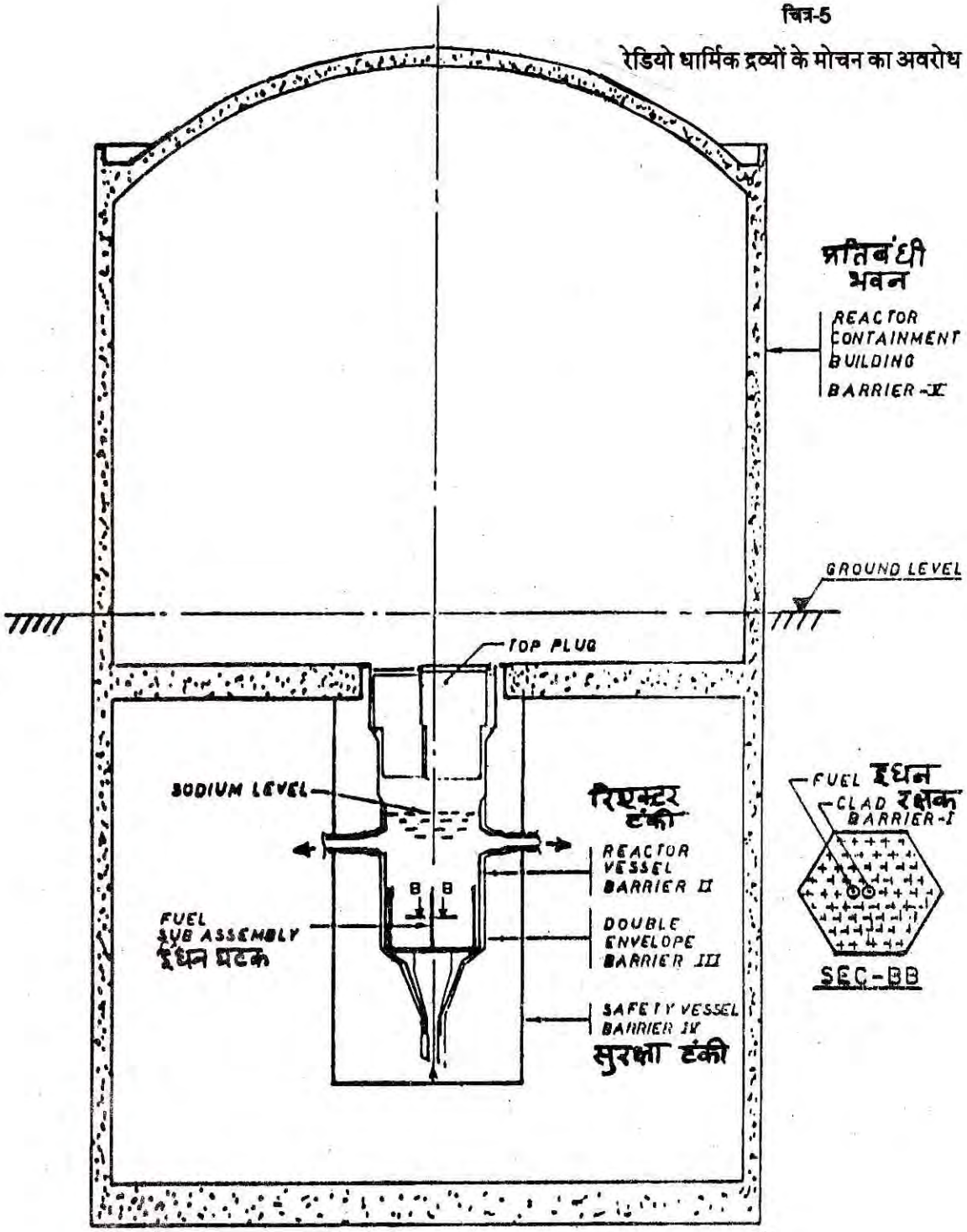

संलयन ऊर्जा के नये आयाम

हरीश त्रिवेदी
8 ए, बड़ी ब्रह्मपुरी, पाली - 306 401 (राजस्थान)

संलयन ऊर्जा पर एक लेख डा. अनुराग श्याम का संगोष्ठी में भी प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत लेख उस लेख का पूरक है।

विज्ञान वेत्ता अर्ल्बट आईंसटिन का सार्वभौमिक सूत्र $E = Mc^2$ बताता है कि किसी पदार्थ के दृव्यमान की क्षति ऊर्जा के रूप में होती है। पदार्थ के परमाणु विखण्डित हों अथवा संलयित, उनसे असीम ऊर्जा की मुक्ति होती है। हम यहाँ पर मुख्य रूप से संलयन ऊर्जा के विभिन्न आयामों पर चर्चा करेंगे।

संलयन ऊर्जा का प्राकृतिक उदाहरण हमारा सूर्य अथवा ब्रह्माण्ड के वे ग्रह हैं जो अतिउष्ण हैं। इनके लघु कृत्रिम उदाहरण हाईड्रोजन बम हैं। विखण्डन ऊर्जा के कृत्रिम उदाहरण परमाणु रिएक्टर हैं जो यूरेनियम व प्लूटोनियम की नाभिकीय ऊर्जा को शनैः शनैः अल्पमात्रा में प्रदान करते हैं। इससे विद्युत प्राप्त करने की प्रक्रिया चार दशक पूर्व ही आविष्कृत हो चुकी है। वर्तमान में विभिन्न प्रयोजनों से संलयन ऊर्जा के अधिकाधिक प्रयोग पर बल दिया जा रहा है। सूर्य इस ऊर्जा की क्रिया को शुद्धतमरूप से पूरा करता है। सूर्य में $2x10^8$ से $3x10^8$ डिग्री जैसे अति उच्च तापमान पर हाईड्रोजन के चार परमाणु संलयित होकर एक हीलियम का परमाणु, दो पोजीट्रोन (इलेक्ट्रोन के धन प्रतिकण) प्राप्त होते हैं, तथा 26.7 मेगा इलेक्ट्रोन वोल्ट ऊर्जा प्राप्त होती है। इस अभिक्रिया को निम्नवत प्रदर्शित किया जा सकता हैं

$$4\ {}_1H^1 \xrightarrow{2 \times 10^8\ {}^0C} {}_2He^4 + 2\,e^+ + 26.7\ MeV.$$

इस क्रिया में अभिकारक का द्रव्यमान अभिकर्मक के द्रव्यमान से अधिक है। यह द्रव्यमान क्षति ऊर्जा के रुप में होती है जिसका मान $E = Mc^2$ से ज्ञात किया जा सकता है। ब्रह्माण्ड के अधिकांश उष्ण पिण्डों में सतह का ताप 6000 केल्विन से 75000 केल्विन तक पाया जाता है। यह अतिउच्च ताप इन पिण्डों के अति प्रबल गुरुत्वाकर्षण के कारण ही संग्रहीत व स्थाई रहता है। सूर्य में यह क्रिया प्रोटोन साईकल या कार्बन साईकल द्वारा सम्पन्न होती है।

नाभिकीय संलयन की प्रायोगिक पुष्टि प्रयोगशालाओं में हो चुकी है। जब ड्यूटीरीयम व ट्रीशियम के परस्पर संयोग से अभिक्रिया होती है तो हीलियम व न्यूट्रोन उत्पन्न होते हैं। इनके अलावा, लगभग 17.6 Mev ऊर्जा प्राप्त होती है। इस ऊर्जा का 14.1 Mev भाग न्युट्रोन में तथा 3.52 Mev भाग हीलियम में विभाजित रहता है।

$$D + T - {}_2He^4\ (3.52\ MeV) + {}_0n^1\ (14.1\ MeV)$$

यह क्रिया दस किलो इलेक्ट्रोन वोल्ट पर सम्पन्न होती है। D-T अभिक्रिया के अतिरिक्त अन्य अभिक्रियाओं से भी संलयन ऊर्जा प्राप्त कर सकते हैं, परन्तु उनमें 10^8 डिग्री केल्विन से अधिक ताप की आवश्यकता होती है। अधिक ताप के बावजूद ऊर्जा उत्पादन अपेक्षाकृत कम होता है। D-T अभिक्रिया को व्यवहारिक रुप देने में सबसे बड़ी समस्या इस में प्रयुक्त अति उच्च ताप की पृथ्वी पर अनुपलब्धता है। इस 'अनुपलब्धता' का कारण पृथ्वी का क्षीण गुरुत्वाकर्षण है।

विभिन्न शोधों से प्राप्त परिणाम बताते है कि संलयन क्रिया तब ही संभव हो सकती है जब-(1) D-T ईंधन को 10 करोड़ डिग्री सेल्सियस तक गर्म करने पर बने प्लाज्मा (भिन्न भिन्न तापयुक्त आयनीकृत घटकों का मिश्रण, पदार्थ की चौथी अवस्था) को भट्टी की आन्तरिक दीवारों तक पहुँचने से रोक सकें तथा -(2) D-T को गर्म करने में लगी ऊर्जा से अधिक ऊर्जा प्राप्त करने के लिए इनके अणुओं की समीपता अधिक होनी चाहिए। इस प्रकार, अणुओं को एक निश्चित परिसीमन समय तक साथ रहना आवश्यक है। इन शर्तों को 'लाउसन कसौटी' भी कहा जाता है। D-T के एक घन से.मी. आयतन में 10^{14} अणु हों तथा वे एक सैकण्ड तक साथ रहें तो लाउसन कसौटी' पूरी हो जाती है।

इन दोनों शर्तों को एक साथ पूरा करने एवं निम्न ताप पर संलयन क्रिया संपन्न करने के प्रयास, वैज्ञानिकों द्वारा तीन दशक से किये जा रहे हैं। ये प्रयास मुख्य रुप से दो तरह से

होते आये हैं (1) अंगूठी के आकार के शक्तिशाली चुम्बकों टोकमाक द्वारा गर्म प्लाज्मा को संपीडित करके, एवं (2) अनेक लेसर किरण पुंजों को टैण्डम दर्पणों पर फोकस (केन्द्रित) कर ड्यूटीरियम की अतिसूक्ष्म (1/100 से.मी.) टिकियों (जिन्हें टारगेट कहते है) को संपीडित कर ।

चुम्बकीय परिसीमन (M.C.F.)

नाभिकीय संलयन को चुम्बकीय परिसीमन (चित्र-1) द्वारा सम्पन्न करने पर सर्वप्रथम अतिउच्च ताप को धारण कर सकने वाले पात्र के निर्माण की समस्या वैज्ञानिकों के सामने आयी । इसका समाधान निकाला गया - टोकमाक प्रणाली से । जिस प्रकार किसी भी सामान्य दर्पण में प्रकाश किरण दर्पण की सतह से परावर्तित होकर लौटती है, उसी प्रकार यदि किसी नली में प्लाज्मा को उत्पन्न किया जाय, एवं किसी सक्षम चुम्बकीय क्षेत्र से बाहर जाने से रोका जाय तो नली के बीच में क्षेत्र कुछ कम हो जाता है, जो प्लाज्मा को नली की आन्तरिक दीवारों तक पहुँचने से रोकता है तथा दोनो किनारों पर चुम्बकीय क्षेत्र अधिक प्रबल होता है । इसी कारण प्लाज्मा प्रकाश किरण की भाँति सतह से टकराकर लौट आता है । दर्पण एवं प्लाज्मा की इस साम्यता के कारण इस युक्ति का नाम 'चुम्बकीय दर्पण युक्ति' रखा गया । प्रौद्योगिकी में इतने प्रबल चुम्बकों का जो कि प्लाज्मा को पूर्णतः परिसीमित रखने में सक्षम हो सकें, निर्माण न हो सकने से टोकमाक कुण्डली को अंगूठी या टायर का रुप दिया गया, तथा इसके दोनों सिरों को बन्द कर दिया गया ताकि प्लाज्मा कुण्डली (नली) से बाहर न जा सके । प्लाज्मा को संलयन क्रियाकारी तापमान तक पहुँचाने के लिए अनावेशित कण-किरण पुंजों, आवेशितकण किरण पुंजों तथा रेडियो आवृत्ति की तरंगों के द्वारा ऊर्जा दी जाती है । इस प्रयोग के परिणामों से स्पष्ट है कि अनावेशित कण किरण पुंज सर्वश्रेष्ठ ऊष्मादाता होते हैं ।

टोकमाक प्रणाली में आगे चलकर कई समस्याएँ उत्पन्न हुईं । सीधी नली को टायर का रुप देने पर विद्युत एवं चुम्बकीय क्षेत्रों में आश्चर्य जनक तथा अनपेक्षित परिवर्तन हुए । इसके अलावा, प्लाज्मा के कुछ भागों में दाब अधिक पड़ने से अस्थिरता उत्पन्न हुई । इन समस्याओं के समाधान स्वरुप चुम्बकीय दर्पण युक्ति में नली के अन्त में ढक्कन लगाकर प्लाज्मा को अवरुद्ध किया गया । ये ढक्कन रेडियो आवृत्ति क्षेत्र, तापीयरोध चुम्बकीय विधि के उपयोग से एवं ठोस रुप में भी बनाये गये । नवीनतम शोधों में वैज्ञानिकों ने टोकमाक में स्थित प्लाज्मा को 1.5 करोड़ डिग्री से. तक गर्म करने एवं एक सैकण्ड के अल्पांश तक स्थिर रखने में सफलता प्राप्त की है । यह कार्य बहुत कठिन है । यदि ऐसे गर्म प्लाज्मा को एक सैकण्ड तक स्थिर रखने में सफलता प्राप्त हो जाए तो शेष पूर्ण क्रिया स्वयमेव की ऊर्जा से ही सम्पन्न हो जाती है । आरंभ में दिया गया ताप नाभिकों की संलयन प्रक्रिया को एक बार आरंभ कर देता है ।

इस प्रकार के टोकमाक विश्व के कई देशों में स्थापित किये गये हैं । भारत में अहमदाबाद की भौतिकी प्रयोगशाला में 'आदित्य' तथा कलकत्ता के साहा नाभिकीय भौतिकी संस्थान में ऐसे संयंत्र स्थापित किये गये हैं ।

जड़त्वीय परिसीमन विधि (I.C.F.)

जैसा कि ऊपर बताया गया है इस विधि में ${}_1H^2$ की $^1/_{100}$ से.मी. व्यास की टिकियों पर लेसर पुंज प्रक्षेपित कर संपीडित करके संलयन ऊर्जा प्राप्त की जाती है । एक सैकण्ड के खरबवें भाग में ड्यूटीरियम की टिकिया अपने आयतन की हजार गुना कम हो जाती है तथा संलयन क्रिया सम्पन्न हो जाती है । (चित्र-2)

जब टारगेट पर लेसर किरण पुंज को प्रक्षेपित किया जाता है तो इसकी बाह्य सतह में अपक्षरण आरम्भ होता है । फलतः इसकी ऊष्मा-धारिता में अभिवर्धन होता है । इसके साथ ही साथ, टिकियों का संपीडन आरम्भ हो जाता है । इस प्रकार, संलयन क्रिया आरंभ होती है । इस संपूर्ण प्रक्रिया के संपन्न होने के लिए दो शर्तों की पूर्ति होना अत्यावश्यक है - (1) टारगेट का अपक्षरण समरुप से तथा तीव्र गति से हो ताकि टारगेट के खण्डित होने के पूर्व ही संलयन पूर्ण हो सके । (2) संलयन के लिए प्लाज्मा का घनत्व साधारण ठोस पदार्थ की अपेक्षा 10^4 गुना अधिक होना चाहिए ।

इस तकनीक के विकास में सबसे बड़ी बाधा ${}_1H^2$ की टिकिया को अधिक गर्म करने की है । विद्युत ऊर्जा के उपयोग से लेसर किरणें अतिअल्प मात्रा में ही प्राप्त की जा सकती हैं तथा लेसर अपनी संपूर्ण ऊष्मा टारगेट को नहीं दे सकता है । यह प्रक्रिया महंगी होने के साथ ही कठिन भी है । इसकी

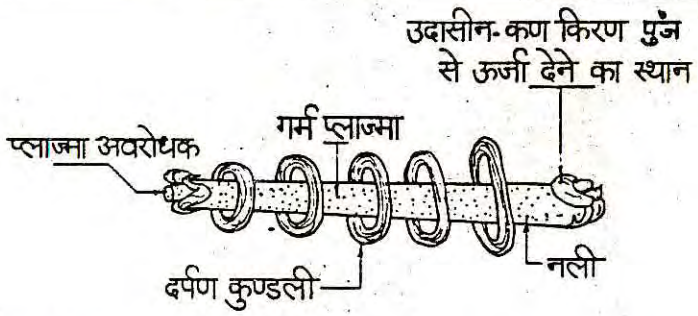

चित्र संख्या-1 (i) टैण्डम दर्पण प्रणाली की व्यवस्था

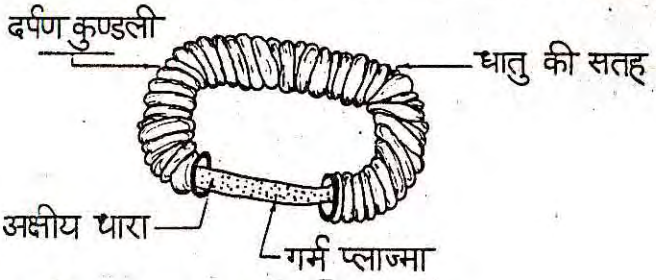

चित्र संख्या-1 (ii) टोकमाक प्रणाली

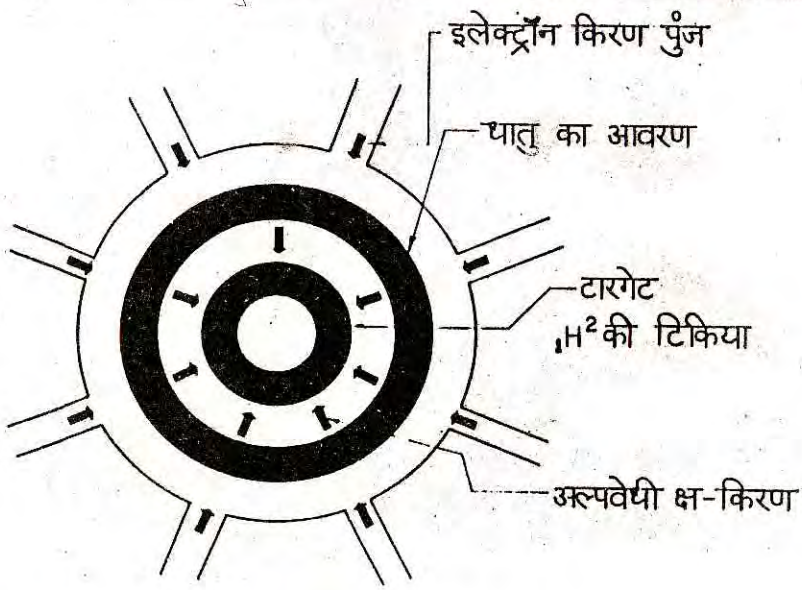

चित्र संख्या-2 जड़त्वीय परिसीमन संलयन

कठिनता का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि इस तरह की संलयन ऊर्जा प्राप्ति के लिए 'नोवा' जैसे शक्तिशाली लेसर से भी सौ गुने शक्तिशाली लेसर की आवश्यकता होती है ।

लारेंस लिवर मोर (अमरीका) के वैज्ञानिकों ने वर्ष 1960 में इस युक्ति की तुलना भगवान शिव के नेत्र से करते हुए इसका नाम 'शिवा' रखा । उस समय इस युक्ति से $3x10^{10}$ न्यूट्रोनों का उत्सर्जन होता था ।

जड़त्वीय परिसीमन विधि के कार्यकारी होने के एक दशक बाद एक नई तकनीक के अन्तर्गत सापेक्षित इलेक्ट्रोन किरण पुंजों का उपयोग लेसर की जगह पर किया गया । यह प्रक्रिया अपेक्षाकृत सस्ती तथा टारगेट पर शीघ्र क्रियाकारी सिद्ध हुई है ।

सापेक्षित इलेक्ट्रोन (साइ) किरण तकनीक में भी कई समस्याएं उत्पन्न हुईं, जैसे, सापेक्षित इलेक्ट्रोन किरण पुंज के परिवहन एवं उस पर इस किरण पुंज को केन्द्रित करने की समस्या । इसके समाधान में साइ. किरण पुंज के स्थान पर हलके आयन किरण पुंजों को प्रयुक्त किया गया । इससे काफ़ी अच्छे परिणाम मिलने पर इनके स्थान पर वर्ष 1980 में भारी आयन किरण पुंजों का उपयोग आरम्भ किया गया ।

इस तकनीक में कई बार पर्याप्त ताप उत्पन्न होता है तो लाउसन कसौटी की शर्तें पूरी नहीं होती हैं, शर्तें पूरी होने को होती है तो ताप में अनियमितता आ जाती है । वर्ष 1986 में नोवा लेसर का उपयोग कर जड़त्वीय परिसीमन विधि द्वारा सर्वाधिक न्यूट्रोनों का उत्सर्जन किया गया । फिर भी वैज्ञानिक कसौटी पर यह तकनीक सन्तोषप्रद सिद्ध नहीं हुई । अब वैज्ञानिक पूर्णतः शुद्ध रुप से चुम्बकीय परिसीमन या जड़त्वीय परिसीमन रिएक्टर न अपनाने के पक्ष में है । बल्कि वे चाहते हैं कि दोनों प्राविधियों की श्रेष्ठताओं का आकलन कर के मिश्रित रिएक्टर बनाया जाए । एक ऐसा रिएक्टर बनाया गया जिसमें साइ. किरण पुंजों की सहायता से टायर रुपी टोकमाक में प्लाज्मा उत्पन्न किया गया । इस प्रकार निर्मित प्लाज्मा की अंगूठी को तरल लिथियम की सहायता से एक लंबी नली से धकेला गया । नली में प्लाज्मा की गति अति तीव्र होने से प्लाज्मा संलयन की शर्तें पूरी कर ऊर्जा उत्पन्न करता है । ऐसी मिश्रित भट्टियों को, प्रगत धारणाओं पर आधारित भट्टियों की श्रेणी में रखते हैं ।

वस्तुतः विखण्डन या संलयन में द्रव्य को ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है । जहाँ विखण्डन संलयन की अपेक्षा सुगम क्रिया है, वहीं पर संलयन विखंडन की अपेक्षा स्वच्छ क्रिया है । इन दोनों प्रक्रियाओं को मिलाकर वैज्ञानिकों का मन्तव्य संलयन-विखण्डन रिएक्टर बनाने के पक्ष में है । D-T अभिक्रिया से उत्पन्न हुए तेज-न्यूट्रोन U^{238} से अभिक्रिया करेंगे तथा प्लूटोनियम का निर्माण होगा । वैज्ञानिकों के अनुसार 6900 मेगावाट के संलयन-विखण्डन रिएक्टर से 42 क्विण्टल प्लूटोनियम प्रतिवर्ष उत्पन्न होगा ।

संलयन रिएक्टर से सम्बन्धित समस्याएं भी उत्पन्न हुईं, जैसे, कौनसे ईंधन का उपयोग करें कि वह पूर्णतः जल सके ? टोकमाक टेस्ट फ्यूजन रिएक्टर T.F. T.R. युक्ति से ज्ञात हुआ कि ईंधन को गैस के बजाय ठोस गोलियों के रुप में डाला जाए तो प्लाज्मा 'लाउसन कसौटी' की शर्तें पूरी कर सकता है । यदि ईंधन का ध्रुवीकरण कर दिया जाए तो संलयन शर्तों की पूर्णता प्राप्त करना और भी सुगम हो जाता है । इसके अलावा, अन्य अनेक समस्याओं पर विचार किया जा रहा है, जैसे, किन धातुओं का किस सीमा तक प्रयोग करें कि भट्टी की उम्र बढ़े तथा परिणाम पूर्णतः शुद्ध निकलें ? ऐसे प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक भी है क्योंकि अयोग्य धातु की टोरस का उपयोग करने पर गरम प्लाज्मा के बारम्बार संयोग में आने से आन्तरिक सतह का अपक्षरण हो जाता है जिससे प्लाज्मा शीतल हो जाता है, तथा 'लाउसन कसौटी' के तापमान (10^8 के.) तक नहीं पहुँच पाता है । प्लाज्मा की भीषण गर्मी एवं न्यूट्रान की बहुलता से आन्तरिक दीवार घटिया धातु की होने पर कमजोर हो जाती है तथा परिणाम पूर्णतः शुद्ध नहीं प्राप्त होते है । चुम्बकीय एवं जड़त्वीय परिसीमन, दोनों में यह समस्या सर्वाधिक गंभीर है ।

जड़त्वीय परिसीमन विधि में एक समस्या यह है कि किस तरह शक्तिशाली एवं तुलनात्मक सस्ते किरण पुंजों का निर्माण हो ? लेसर अन्य किरण पुंजों से सौ गुना महंगी है । दूसरी समस्या यह है कि किस तरह के संवाहक की ऊर्जा का अधिकतम उपयोग हो कि संलयन की शर्तें पूर्ण हो सकें तथा कम शक्तिशाली संवाहक से भी काम चल सके ।

इन समस्याओं को ध्यान में रख कर जापानी वैज्ञानिकों ने चुम्बकीय परिसीमन एवं जड़त्वीय परिसीमन को एक साथ उपयोग में लाने पर विचार किया । इस युक्ति को 'चुम्बकीय रोधी जड़त्वीय परिसीमन संलयन' का नाम दिया गया । इसमें टारगेट प्लाज्मा को गोले से अलग करने के लिए चुम्बकीय क्षेत्र का उपयोग किया गया। कम्प्यूटर कोड द्वारा आकलित तापमान और परिसीमन समय तथा प्रायोगिक मानों में समानता पायी गयी है ।

संलयन ऊर्जा को वाणिज्यिक स्तर पर प्राप्त करने के लिए अनुसन्धान कार्य चल रहे हैं । आशा है जल्दी ही सफलता मिलेगी ।

टिप्पणी

सांस की बदबू

ऐसा अक्सर आपके साथ हुआ होगा कि जब कोई आपके नजदीक आकर आपसे बात करना चाहता है या आपको अपने किसी राज का हिस्सेदार बनाकर धीमे से आपसे कुछ कहना चाहता हो तो आप मजबूरीवश उसकी बातों को बड़ी मुश्किल से सुन पाते होंगे क्योंकि उसकी सांस से आती बदबू से आप बेचैनी महसूस कर रहे होंगे ।

पर सोचिए, ऐसा भी हो सकता है कि आपकी खुद की सांस दुर्गंधित हो । सांस की बदबू कोई बीमारी नहीं, परन्तु बीमारी का लक्षण अवश्य हो सकती है । अतः, इसका पता चलते ही हीनभावना का त्याग करके तुरंत इलाज शुरु कर देना चाहिए । इलायची, पानमसाला या सौंफ जैसी अन्य खुशबूदार चीजें चबाकर यह मत सोचिए कि यह बदबू खत्म हो जाएगी, बल्कि इस बीमारी का ठीक से उपचार करवाएं, वरना इससे आपके स्वास्थ्य और पाचन दोनों पर ही प्रतिकूल असर हो सकता है, जो आगे चलकर अन्य बीमारियों को जन्म दे सकता है ।

सांस की बदबू की बीमारी को क्लीनिकल बायोकेमेस्ट्री की भाषा में हैलिटोसिस कहते हैं । सांस से बदबू आने के मुख्य कारण गले, सायनस या टांसिल में किसी प्रकार का इन्फेक्शन अथवा मधुमेह या गुर्दे की बीमारी भी हो सकती है । इसके अलावा, एक अन्य कारण भी है कि हमारे देश में ज्यादातर लोग दांतों की नियमित सफाई पर जोर नहीं देते हैं । सही पेस्ट या मंजन का प्रयोग न करके राख, मिट्टी या कोयले से दांत साफ करते हैं, जो दातों में संक्रमण उत्पन्न करके सड़न पैदा करते हैं ।

दातों के लिए कालस्वरुप पायरिया रोग तो सांस की बदबू की जड़ है । पायरिया ग्रीक भाषा का एक शब्द है, जिसका अर्थ है छोटे-छोटे छिद्रों से मवाद का स्राव, मीठी, चिपचिपी दांतों में फसने वाली चीजों का अधिक प्रयोग, पान, सुपारी और तम्बाकू का अधिक मात्रा में सेवन, गंदे ब्रश का प्रयोग, दांतों में अन्नकणों का फंसे रहना, भोजन में विटामिन सी, कैल्शियम तथा फॉस्फोरस की कमी, दांतों को आलपिन आदि से कुरेदते रहना । अच्छे मंजन या पेस्ट का प्रयोग न करने से मसूढ़ों का रक्त दूषित हो जाता है, और वे पक जाते हैं । इसके अलावा, दांतों की जड़े मजबूत रखने वाला स्निग्ध पदार्थ धीरे-धीरे पिघलकर दांतों की जड़ों से अलग होने लगता है, या दांतों में फंसे अन्नकणों से उत्पन्न सड़न मसूढ़ों का रक्त दूषित करके दांतों की जड़े हिला देती है । मुंह से सांस लेने वालों के सामने के मसूढ़े सहजरुप से दूषित हो जाते हैं, या दांतों पर जमी एक पतली परत जिसे टार्टर भी कहते है, पायरिया को जन्म देती है । पायरिया रोग से ग्रसित व्यक्ति के मसूढ़े ढीले पड़कर दांत कमजोर और मवाद पड़ने के कारण मुंह की दुर्गंध असहनीय हो जाती है ।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि बीमारी का पता चलते ही अविलम्ब इलाज शुरु कर देना चाहिए । मुख की नियमित सफाई व स्वच्छता पर विशेष ध्यान देते हुए दिन में तीन बार मुंह को पोटेशियम परमैगनेट या लिस्ट्रीन लोशन पानी में घोलकर धोएं । दांतों को कोयले या राख की बजाय किसी अच्छे मंजन या पेस्ट से साफ करें । ऐसे फल जिनमें कैल्शियम एवं विटामिन-सी की अधिकता हो जैसे नीबू, संतरा, आँवला, प्याज, हरे पत्तेदार साग, सूखे फल, दूध, मक्खन वगैरह अधिक मात्रा में खाएं ।

पायरिया के रोगी को दातों पर जमे मैल को निकलवाकर नमक मिले गर्म पानी से कुल्ला करना चाहिए । हाइड्रोजन पराक्साइड को रुई की फुरेरी में लगाकर दातों का मैल साफ करें या बीच की उगली पर सरसों का तेल लगाकर धीरे-धीरे दस मिनट तक मसूढ़ों पर मलें तथा गरम पानी में सेंधा नमक मिलाकर दिन में कई बार कुल्ला करें ।

इसके अलावा, कुछ बहुत ही मामूली बातों का ध्यान रखते हुए आप अपने मुंह की बदबू का अंत कर सकते हैं, जैसे, कभी भी दांतों को लोहे की पिन वगैरह से मत कुरेदें क्योंकि इससे सैप्टिक होने की संभावना रहती है । यदि कुरदेना आवश्यक हो तो चांदी के तार से कुरेदलें । जहां तक हो सके पान, सुपारी और तम्बाखू जैसी चीजों का सेवन बंद या बहुत कम कर दें । तली चीजें, उत्तेजक पेय पदार्थ, और चाय का सेवन न करें, जो इस बीमारी को जड़ से खत्म करने में सहायक होगा । उससे बनेंगी आपकी सांसें स्वच्छ और मुंह तरो ताजा और जगेगा आपमें आत्मविश्वास ।

विनीता शुक्ला
A-6 यूनिवर्सिटी फ्लैट्स, चैथम लाइन्स
इलाहाबाद - 211002

इन समस्याओं को ध्यान में रख कर जापानी वैज्ञानिकों ने चुम्बकीय परिसीमन एवं जड़त्वीय परिसीमन को एक साथ उपयोग में लाने पर विचार किया । इस युक्ति को 'चुम्बकीय रोधी जड़त्वीय परिसीमन संलयन'का नाम दिया गया । इसमें टारगेट प्लाज्मा को गोले से अलग करने के लिए चुम्बकीय क्षेत्र का उपयोग किया गया। कम्प्यूटर कोड द्वारा आकलित तापमान और परिसीमन समय तथा प्रायोगिक मानों में समानता पायी गयी है ।

संलयन ऊर्जा को वाणिज्यिक स्तर पर प्राप्त करने के लिए अनुसन्धान कार्य चल रहे हैं । आशा है जल्दी ही सफलता मिलेगी ।

टिप्पणी

सांस की बदबू

ऐसा अक्सर आपके साथ हुआ होगा कि जब कोई आपके नजदीक आकर आपसे बात करना चाहता है या आपको अपने किसी राज का हिस्सेदार बनाकर धीमे से आपसे कुछ कहना चाहता हो तो आप मजबूरीवश उसकी बातों को बड़ी मुश्किल से सुन पाते होंगे क्योंकि उसकी सांस से आती बदबू से आप बेचैनी महसूस कर रहे होंगे ।

पर सोचिए, ऐसा भी हो सकता है कि आपकी खुद की सांस दुर्गंधित हो। सांस की बदबू कोई बीमारी नहीं, परन्तु बीमारी का लक्षण अवश्य हो सकती है। अतः, इसका पता चलते ही हीनभावना का त्याग करके तुरंत इलाज शुरु कर देना चाहिए। इलायची, पानमसाला या सौंफ जैसी अन्य खुशबूदार चीजें चबाकर यह मत सोचिए कि यह बदबू खत्म हो जाएगी, बल्कि इस बीमारी का ठीक से उपचार करवाएं, वरना इससे आपके स्वास्थ्य और पाचन दोनों पर ही प्रतिकूल असर हो सकता है, जो आगे चलकर अन्य बीमारियों को जन्म दे सकता है ।

सांस की बदबू की बीमारी को क्लीनिकल बायोकेमेस्ट्री की भाषा में हैलिटोसिस कहते हैं । सांस से बदबू आने के मुख्य कारण गले, सायनस या टांसिल में किसी प्रकार का इन्फेक्शन अथवा मधुमेह या गुर्दे की बीमारी भी हो सकती है। इसके अलावा, एक अन्य कारण भी है कि हमारे देश में ज्यादातर लोग दांतों की नियमित सफाई पर जोर नहीं देते हैं। सही पेस्ट या मंजन का प्रयोग न करके राख, मिट्टी या कोयले से दांत साफ करते हैं, जो दातों में संक्रमण उत्पन्न करके सड़न पैदा करते हैं।

दातों के लिए कालस्वरुप पायरिया रोग तो सांस की बदबू की जड़ है । पायरिया ग्रीक भाषा का एक शब्द है, जिसका अर्थ है छोटे-छोटे छिद्रों से मवाद का स्राव, मीठी, चिपचिपी दांतों में फसने वाली चीजों का अधिक प्रयोग, पान, सुपारी और तम्बाकू का अधिक मात्रा में सेवन, गंदे ब्रश का प्रयोग, दांतों में अन्नकणों का फंसे रहना, भोजन में विटामिन सी, कैल्शियम तथा फॉस्फोरस की कमी, दांतों को आलपिन आदि से कुरेदते रहना। अच्छे मंजन या पेस्ट का प्रयोग न करने से मसूढ़ों का रक्त दूषित हो जाता है, और वे पक जाते हैं। इसके अलावा, दांतों की जड़े मजबूत रखने वाला स्निग्ध पदार्थ धीरे-धीरे पिघलकर दांतों की जड़ों से अलग होने लगता है, या दांतों में फंसे अन्नकणों से उत्पन्न सड़न मसूढ़ों का रक्त दूषित करके दांतों की जड़े हिला देती है। मुंह से सांस लेने वालों के सामने के मसूढ़े सहजरुप से दूषित हो जाते हैं, या दांतों पर जमी एक पतली परत जिसे टार्टर भी कहते है, पायरिया को जन्म देती है। पायरिया रोग से ग्रसित व्यक्ति के मसूढ़े ढीले पड़कर दांत कमजोर और मवाद पड़ने के कारण मुंह की दुर्गंध असहनीय हो जाती है ।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि बीमारी का पता चलते ही अविलम्ब इलाज शुरु कर देना चाहिए । मुख की नियमित सफाई व स्वच्छता पर विशेष ध्यान देते हुए दिन में तीन बार मुंह को पोटेशियम परमैगनेट या लिस्ट्रीन लोशन पानी में घोलकर धोएं। दांतों को कोयले या राख की बजाय किसी अच्छे मंजन या पेस्ट से साफ करें । ऐसे फल जिनमें कैल्शियम एवं विटामिन-सी की अधिकता हो जैसे नीबू, संतरा, आँवला, प्याज, हरे पत्तेदार साग, सूखे फल, दूध, मक्खन वगैरह अधिक मात्रा में खाएं।

पायरिया के रोगी को दातों पर जमे मैल को निकलवाकर नमक मिले गर्म पानी से कुल्ला करना चाहिए । हाइड्रोजन पराक्साइड को रुई की फुरेरी में लगाकर दातों का मैल साफ करें या बीच की उगली पर सरसों का तेल लगाकर धीरे-धीरे दस मिनट तक मसूढ़ों पर मलें तथा गरम पानी में सेंधा नमक मिलाकर दिन में कई बार कुल्ला करें ।

इसके अलावा, कुछ बहुत ही मामूली बातों का ध्यान रखते हुए आप अपने मुंह की बदबू का अंत कर सकते हैं, जैसे, कभी भी दांतों को लोहे की पिन वगैरह से मत कुरेदें क्योंकि इससे सैप्टिक होने की संभावना रहती है। यदि कुरदेना आवश्यक हो तो चांदी के तार से कुरेदलें। जहां तक हो सके पान, सुपारी और तम्बाखू जैसी चीजों का सेवन बंद या बहुत कम कर दें। तली चीजें, उत्तेजक पेय पदार्थ, और चाय का सेवन न करें, जो इस बीमारी को जड़ से खत्म करने में सहायक होगा। उससे बनेंगी आपकी सांसें स्वच्छ और मुंह तरो ताजा और जगेगा आपमें आत्मविश्वास ।

विनीता शुक्ला
A-6 यूनिवर्सिटी फ्लैट्स, चैथम लाइन्स
इलाहाबाद - 211002

सूर्य

सूर्य के जलते हुए गोले को नजदीक से परखना असंभव सा है लेकिन पिछले वर्ष के अक्टूबर मास में अमरीका और यूरोप के अंतरिक्ष विशेषज्ञों ने इस दिशा में एक संयुक्त प्रयास किया। इस मिशन को, जिसे 'यूलीसेस' नाम दिया गया है, पूरा होने में करीब 5 वर्ष का समय लगेगा तथा पहली बार कोई अंतरिक्ष यान सूर्य के ध्रुवों के ऊपर से उड़ेगा । इस अंतरिक्ष मिशन का लक्ष्य है, सूर्य की संरचना, उसके चुंबकीय क्षेत्र, सौर-आंधी और उसके प्लाज्मा एवं ब्रम्हांड किरणों तथा धूल के अध्ययन करना। यूलीसेस मिशन के प्रोजेक्ट मैनेजर डेरेक ईटन बताते हैं कि पृथ्वी के मौसम को अच्छी तरह समझने के लिए सूर्य को समझना अति आवश्यक है ।

सूर्य से निकलने वाली जलती गैसों की लाखों मील लम्बी लपटों से पृथ्वी के संचार साधनों पर गहरा असर पड़ता है । सतत निकलने वाली इन लपटों से हमारी लघु तरंगों की संचार व्यवस्था 24 घंटों तक के लिए भंग हो सकती है । मार्च 1989 में इसी प्रकार की बाधा का अनुभव किया गया था ।

यूलीसेस अपने यात्रा प्रकम में पहले सूर्य कुल के सबसे बड़े ग्रह जुपिटर की ओर प्रस्थान करेगा । फिर उस ग्रह के अति प्रबल गुरुत्वाकर्षण को गुलेल की तरह इस्तेमाल करके वापस सूर्य की और फेंक दिया जाएगा । पहले करीब 16 महीने में वह जुपिटर के पास पहुंचेगा, फिर वहाँ से करीब $2^1/_2$ वर्षों में सूर्य के दक्षिणी ध्रुव से करीब 30 करोड़ किलोमीटर की दूरी से गुजरते हुए एक वर्ष में उसके उत्तरी ध्रुव के पास आएगा । इन दिमाग चकराने वाली दूरियों को इस तरह से समझा जा सकता है कि जब यूलीसेस जुपिटर के पास होगा तब पृथ्वी से उसको भेजे जाने वाले निर्देश संकेत पहुंचने में करीब 1 घंटे का समय लगेगा । अपने महान सूर्य को जरा और समीप से समझने के लिए इतनी कठिन यात्रा और इतना वक्त तो लगेगा ही। वैसे भी प्रकृति के रहस्य आसानी से हाथ नहीं लगते हैं।

— डा. दुर्गा प्रसाद पांडे

केले का विश्लेषण

(1) केले में ए. बी. व सी सहित कुल ग्यारह विटामिन पाये जाते हैं । इसमें विटामिन सी सर्वाधिक मात्रा में होता है।

(2) केले में 70% जल, 18% शर्करा, 1.2% प्रोटीन, 0.23% फास्फोरस, 2.1% पोटाश, 0.1% सिलिका और 0.4% लोहा पाया जाता है। केले में कार्बोहाइड्रेट होते हैं जो शर्करा के रूप में पाये जाते हैं।

(3) केले के 100 ग्राम गूदे से 135 कैलोरी ऊर्जा मिलती है।

(4) दूध पीने वाले बच्चों के लिए विटामिन सी, नियासीन, थायोमीन और राइबोपलेविन जितनी मात्रा में आवश्यक होता है, उसका 25% भाग मात्र केले में ही मिल जाता है ।

(5) केले और दूध के सेवन से दांत मजबूत होते हैं ।

(6) केले के 100 ग्राम में लगभग 1.5 ग्राम अल्बूमिन होता है, जो नगण्य है व डाइबिटीज़ के रोगियों के लिए पथ्य है ।

(7) वनस्पति शास्त्रियों द्वारा किये गये अनुसन्धान द्वारा पता चला है कि केला आंतो के कृमियों, रोगाणुओं के लिए

मृत्यु-दूत है। अतः,जीवाणुओं द्वारा आंतो में उत्पन्न किये गये रोगों के लिए केले का प्राकृतिक औषधि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है ।

(8) एक बर्तन में एक केला थोड़ीसी इलाइची रखकर देखिए व बर्तन को ढक दीजिए। तीन घंटे बाद देखेंगे कि केला पानी बन गया है । यह सिद्ध करता है कि केले खाने के बाद इलाइची खा लेने से यह शीघ्र पचता है ।

(9) केले में "पेप्टिन" नामक पदार्थ मल को मुलायम करके पेट से बाहर निकालने में सहायक होता है । अतः,अपच की स्थिति में केलेकी सब्जी खाना लाभकारी होता है ।

(10) दमा व फाइलेरिया के रोगी के लिए केला हानिकारक है।

दिलीप भाटिया
अभियंता (एसई),राजस्थान परमाणु बिजलीघर,
अणुशक्ति - 323303, (कोटा - राजस्थान)

कृत्रिम वर्षा

सूर्य हर समय लगभग एक अरब टन जल वाष्पित करता है । यह जल-वाष्प गर्म हवा के प्रवाह के साथ वातावरण की ऊपरी परत तक पहुंचती रहती है। अत्यधिक ऊंचाई पर जहां दाब बहुत कम है,हवा का आयतन प्रसार होता है और उसका तापमान तेज़ी से घटता है। परिणामस्वरुप जलवाष्प संघनित होकर पानी के कणों में परिवर्तत हो जाती है । इसे बूंदों के रूप में एकत्रित होने के लिए धूल के कण, आयन आदि किसी ऐसे नाभिक की आवश्यकता होती है जिस पर चारों ओर से आ-आकर पानी के कण जम सकें ।

कृत्रिम वर्षा करवाने के लिए कृत्रिम मेघ बीजारोपण या नाभिकीकरण किया जाता है । इस विधि में वायुमण्डल में हाइड्रोजन गैस के गुब्बारे छोड़े जाते हैं और इस प्रकार गुब्बारों के साथ ऊपर पहुंचाया गया रासायनिक पदार्थ (सिल्वर आयोडाइड) इन बादलों के जल को बूंदों में परिवर्तित करने में सहायता करता है ।

इस युक्ति में हाइड्रोजन गैस के गुब्बारे को छड़ों के एक जाल में इस प्रकार लगाया जाता है कि वह संपूर्ण युक्ति को एक साथ लेकर उड़ सके। इन छड़ों के जाल में एक ओर एल्यूमिनियम का डिब्बा होता है जिसमें गन पाउडर (एक विस्फोटक पदार्थ जो शोरा, गन्धक और कोयले के मिश्रण से तैयार होता है) तथा सिल्वर आयोडाइड भरा रहता है। इसी प्रकार,दूसरी ओर समान एल्यूमिनियम के डिब्बें में शुष्क बर्फ (ठोस कार्बन डाई आक्साइड) भरी रहती है । ये दोनों डिब्बे एक कांच की नली द्वारा जुड़े रहते हैं और इस प्रकार यह तीनों उपकरण एक अन्य तार द्वारा सम्बन्धित रहते हैं ।

एक निश्चित ऊंचाई पर पहुंचने के पश्चात तार स्वतः टूट जाता है । गन पाउडर बिखर जाता है और सिल्वर आयोडाइड से संयोग कर धुंआ उत्पन्न करता है । धुएं के कण बादलों में जलकणों को एकत्रित करने के लिए नाभिक का काम करते हैं। और इस प्रकार वर्षा होती है। आजकल कृत्रिम वर्षा के लिए रासायनिक पदार्थ ऊपर पहुंचाने हेतु हवाई जहाज़ों का उपयोग किया जाता है।

इरफान ह्यूमन
निदेशक-जन विज्ञान मिशन,
67-अन्टा,शाहजहांपुर-242001

भूल - सुधार

हमें खेद के साथ यह स्वीकार करना पड़ रहा है कि "वैज्ञानिक" का जुलाई-सितंबर, 1990 (22:3) अंक कुछ अप्रत्याशित कारणों से अत्यधिक देर से निकला, फिर भी हमारी लापरवाही के कारण इस अंक के अनुक्रमणिका - पृष्ठ पर ही गम्भीर त्रुटियाँ रह गयीं । इस अंक का कोई आमंत्रित संपादक न होते हुए भी 'आमंत्रित संपादक' शीर्षक के अन्तर्गत दो नाम छप गये । "शुल्क" के अन्तर्गत पुराने शुल्क छप गये जो दिनांक 1-4-90 से बदल गये हैं । बदले हुए शुल्क अन्यत्र दिये गये हैं । कृपया वहीं देख लें । इसके अतिरिक्त, लेख क्रमांक-1 में "कुकरमुत्ता" शीर्षक के अन्तर्गत दो लेख हैं। दूसरे लेखक-द्वय, कु. अरविन्दर कौर एवं बृ. कु. राय के नाम और उनके लेख की पृष्ठ-संख्या (6) लिखना रह गया है ।

इस अंक से धारावाहिक रूप से आरंभ किया गया लेख "दूर-संचार के इतिहास की विशेषताएं" पृष्ठ-8 पर आरंभ हुआ। वहाँ से इसे पृष्ठ-21 पर लेजाया गया जहाँ इसके कुछ अंश दोबारा छप गये । वहाँ से इसे पृष्ठ-32 पर, और फिर पृष्ठ-34 पर ले जाया गया, जहाँ इस का इस अंक का अंश पूरा होना था । परन्तु, इसका अन्तिम वाक्य अधूरा ही रह गया है। इसके अतिरिक्त, इन सभी पृष्ठों पर लेख के आगे या पीछे की पृष्ठ-संख्या का संकेत गलत लिखा गया है ।

दूसरे लेख, **सोवियत यान "मीर"** का शेष भाग पृष्ठ-11 से पृष्ठ-18 पर ले जाया गया है परन्तु, पृष्ठ-11 पर इसका संकेत छपने से रह गया और पृष्ठ-18 पर इस लेख की पिछली पृष्ठ-संख्या गलत छप गयी है ।

पृष्ठ-31 पर "प्रश्नोत्तरी" के पाठक अपने उत्तर 15 जून,1991 तक भेज सकते हैं। यह अंक देर से निकलने के कारण इसमें दिये गये प्रश्नों के उत्तर की अन्तिम तिथि 15 जनवरी, 1991 अर्थहीन हो गयी है।

पृष्ठ-36 पर " क्या आप जानते हैं ?" शीर्षक के अन्तर्गत प्रत्येक प्रश्न के उत्तर प्रश्न के नीचे और सामने के, दोनों कालमों में छप गये हैं। यह संगणक (कम्प्यूटर) का कमाल है इस बार हमने छपाई को सुन्दर बनाने के लिए अत्यधुनिक तकनीक, कंप्यूटर-लेसर का प्रयोग किया था, । छपाई तो सुन्दर हुई, परन्तु कंप्यूटर के शब्द-संसाधक (वर्ड प्रोसेसर) ने गलत आदेश के कारण प्रत्येक प्रश्न के उत्तर को पृष्ठ की तरह दोनों कालमों में बराबर-बराबर "बैलेन्स" कर दिया ।

आवरण-3 पर " लेख प्रतियोगिता-1991" होना चाहिए और उसकी अन्तिम तिथि 31 अगस्त, 1991 है जो गलती से दोनों जगह 1990 छप गयी है ।

इन सब के अतिरिक्त, अनुक्रमणिका-पृष्ठ सहित पूरे अंक में शब्दों में अक्षरों की छोटी-मोटी अन्य त्रुटियाँ तो रह ही गयी है।

— संपादक

अखिल भारतीय हिन्दी विज्ञान लेख प्रतियोगिता (1990) के परिणाम

वर्ष 1990 हेतु अखिल भारतीय हिन्दी विज्ञान लेख प्रतियोगिता में अहिन्दी भाषी लेखकों के लेखों सहित कुल 60 लेख प्राप्त हुए। इस वर्ष अहिन्दी भाषियों के लेख स्तर के न होने के कारण उन्हें कोई पुरस्कार नहीं दिया गया। अतः, हिन्दी भाषी लेखकों को एक प्रोत्साहन पुरस्कार अधिक दिया गया है। परिणाम इस प्रकार हैं :

1. **प्रथम पुरस्कार (रु. 750/-)**
   धमनियों में एथरोस्क्लीरोसिस का वास्तविक कारण
   — डॉ. केशव कुमार, इलाहाबाद

2. **द्वितीय पुरस्कार (रु. 500/-)**
   पागल कुत्तों से बचिए
   — डॉ. रमेश सोमवंशी, मुक्तेश्वर - कुमाऊँ

3. **तृतीय पुरस्कार (रु. 250/-)**
   कागज एवं लुगदी उद्योग में बांस की उपयोगिता
   — प्रेम बल्लभ डोबरियाल एवं डॉ. सतीश कुमार, देहरादून

प्रोत्साहन पुरस्कार (प्रत्येक रु. 150/-)

1. समाज और पर्यावरण
   — डॉ. जुगमेन्द्र उपाध्याय, सहारनपुर

2. कृत्रिम धागे
   — डॉ. अजय कुमार चतुर्वेदी, अलीगढ़

3. रेगिस्तान, उसके विस्तार व जनजीवन पर वैज्ञानिक अन्वेषण
   — वासुदेव पालीवाल, मोकाती पाड़ा (जैसलमेर)

4. अतिचालकता
   — राजीव गुप्त, बुलन्दशहर

5. संलयन युक्तियां
   — सुधीर कुमार दीक्षित, भानगढ़ (बीना)

6. सूर्य को कैद करने में अर्धचालकों का योगदान
   — डॉ. के. एम. जैन, रीवां

इन लेखों के अतिरिक्त भी स्तर के कुछ लेख मिले हैं जिन्हें "वैज्ञानिक" में प्रकाशित करने का प्रयास किया जाएगा।

— आयोजक (प्रतियोगिता)

परिषद समाचार

वार्षिक प्रतिवेदन - वर्ष 1989-90

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद की गतिविधियों में इस वर्ष निश्चित रूप से वृद्धि हुई और इस वर्ष हमने वैज्ञानिक प्रसार के लिए कुछ नये कार्यक्रम भी शुरू किये हैं । परिषद की कार्यकारणी समिति की ओर से वर्ष 1989-90 की गतिविधियों का ब्योरा आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है जो इस प्रकार है :-

1. **"वैज्ञानिक" का प्रकाशन**

इस रिपोर्ट की अवधि के दौरान "वैज्ञानिक" के चार अंक प्रकाशित किये गये । इसके अतिरिक्त, "लेसर का विकास एवं उपयोग"पर विशेषांक भी प्रकाशित हुआ लेकिन कुछ प्रतियां ही "लेसर का विकास एवं उपयोग" पर हुई संगोष्ठी के प्रतिभागियों को वितरित की जासकीं । ऐसी आशा की जाती है कि "वैज्ञानिक" के प्रकाशन में होने वाली देरी अब समाप्त हो चुकी है ।

"वैज्ञानिक" की छपाई को सुन्दर बनाने के प्रयास किये जारहे हैं, और इस दिशा में पहला कदम जुलाई-सितंबर, 1990 अंक से ही उठा लिया गया है । इस अंक को कंप्यूटर/लेसर की सहायता से कम्पोज़ किया जारहा है ।

2. **लेख प्रतियोगिता**

इस वर्ष की "अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता" में करीब 170 लेख प्राप्त हुए । यह इस प्रतियोगिता के लिए एक नया कीर्तिमान है । प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कारों के अलावा पांच प्रोत्साहन पुरस्कार एवं दो विशेष पुरस्कार अहिन्दी-भाषी प्रतियोगियों के लिए दिये गये । प्रतियोगी विजेताओं को प्रमाण पत्र एवं पुरस्कार की राशि भेज दी गयी है । इस प्रतियोगिता के निर्णायक डा. जनार्दन स्वरुप, डा. दुर्गा प्रसाद पाण्डेय, डा.के.सी. भल्ला एवं डा.गोविन्द प्रसाद कोठियाल एवं श्री रमेशचंद्र पंत थे ।

वर्ष 1990-91 की लेख प्रतियोगिता हेतु विज्ञापन एवं सूचना दे दी गयी है तथा लेख भी मिलने प्रारंभ हो गये हैं । इस प्रतियोगिता के निर्णायक भी ऊपर लिखे वैज्ञानिक ही है। डा. शिवप्रकाश गर्ग इस लेख प्रतियोगिता के संयोजक हैं ।

3. **राजभाषा वार्ताएं**

राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद के तत्वावधान में निम्नलिखित वार्ताएं आयोजित की गयीं :-

1.	हिन्दी पत्रकारिता - समस्याएं और चुनौतियां (04-05-89)	— श्री गणेश मंत्री (बम्बई)
2.	स्थापत्य का विकास एवं भा.प.अ.कें. में इसका योगदान (28-07-89)	— श्री.वी.डी. पिसोलकर (बंबई)
3.	अनुवांशिकी और उसके सामाजिक प्रभाव (28-09-89)	— डा.एन.के. नोटाणी (बम्बई)
4.	वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली की कार्यप्रणाली, विकास, कठिनाइयां एवं सुझाव (15-11-1989)	— प्रो.सूरजभान सिंह (नई दिल्ली)
5.	विकासशील देशों में औषध उद्योग में अनुसंधान - वर्तमान स्थिति (19-12-1989)	— श्री प्रदीप कु. श्रीवास्तव (लखनऊ)
6.	भारतीय संगीत के रागों का कंप्यूटरीकरण (15-01-1990)	— श्री डेविड कोर्टन (अमेरिका)
7.	पौधों की जर्जरता - समस्या एवं समाधान (28-02-1990)	— डा.सूर्यदेव मिश्र (बम्बई)

राजभाषा वार्ता के संयोजक श्री आर.सी.पंत थे ।

4. **नेहरु, भाषा एवं विज्ञान - प्रश्न मंच**

नेहरु शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य में 20 नवंबर, 1989 को एक प्रश्न मंच का आयोजन किया गया । इस प्रश्न मंच का विषय था "नेहरु, भाषा एवं विज्ञान" और इसमें अणुशक्ति नगर स्थित परमाणु ऊर्जा केंद्रीय विद्यालय के छात्रों ने भाग

लिया। विजेता विद्यार्थियों को पुरस्कार वितरित किये गये। इसके साथ स्कूल के करीब 500 विद्यार्थियों ने दर्शक के रूप में इसका आनंद उठाया। इस कार्यक्रम के माध्यम से विद्यार्थियों में हिन्दी विज्ञान साहित्य के प्रति रुचि पैदा करना था। इस कार्यक्रम के संयोजक श्री आर. एम. पी. वर्मा, डा. देवकीनंदन, एवं डा. विजय मनचन्दा थे। कार्यक्रम के अध्यक्ष डा. आर. चिदम्बरम्. एवं मुख्य अतिथि डा. गिरिजाशंकर त्रिवेदी, संपादक, 'नवनीत' थे।

5. **नाभिकीय ऊर्जा-संगोष्ठी**

रवींद्र भवन, भोपाल में इस द्वि-दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी का आयोजन दि. 20-21 अप्रैल, 1989 को किया गया। यह संगोष्ठी हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद, इंडियन न्यूक्लियर सोसायटी तथा बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय (भोपाल) द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित की गयी थी। संगोष्ठी का उद्घाटन डा. पी. के. अय्यंगार, चेयरमैन, परमाणु ऊर्जा आयोग एवं सचिव, भारत सरकार के द्वारा किया गया। संगोष्ठी के साथ-साथ रवींद्र भवन में ही नाभिकीय विकिरणों से सुरक्षा एवं नाभिकीय ऊर्जा के चिकित्सा में प्रयोगों की जानकारी देने वाली एक प्रदर्शनी गांधी मेडिकल कालेज, भोपाल के सहयोग से लगायी गयी थी जिसका उद्घाटन भी डा. पी. के. अय्यंगार ने किया। इस अवसर पर एक स्मारिका भी प्रकाशित की गयी जिसमें संगोष्ठी में प्रस्तुत वार्ताओं के सारांश भी दिये गये थे। इस संगोष्ठी में करीब 20 वैज्ञानिकों ने छः तकनीकी सभाओं में अपने व्याख्यान दिये। सभी व्याख्यान लेख के रूप में प्राप्त हो चुके हैं, जिन्हें शीघ्र ही प्रकाशित किया जाएगा। इस कार्यक्रम के संयोजक तत्कालीन परिषद सचिव, डा. जी. पी. तिवारी थे।

6. **पर्यावरण प्रदूषण और उद्योग - संगोष्ठी**

राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भारतीय ऐरोसोल विज्ञान एवं तकनीकी परिषद एवं हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद ने संयुक्त रूप से 18-19 सितंबर 1989 को "पर्यावरण प्रदूषण और उद्योग" विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया। संगोष्ठी का उद्घाटन श्री राम कुमार गर्ग, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, इंडियन रेअर अर्थ्स लिमिटेड ने किया। विशेषज्ञों ने विभिन्न सभाओं में अनेक संबंधित विषयों पर व्याख्यान दिये तथा पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम के आधुनिक ढंग सुझाये। अंत में मंडल विवेचन का एक अलग सत्र हुआ जिसमें श्रोताओं ने खुलकर भाग लिया। इस अवसर पर संगोष्ठी में प्रस्तुत वार्ताओं के विस्तृत सारांश का एक संकलन भी प्रकाशित किया गया। इस कार्यक्रम के संयोजक डा. उमेश मिश्र थे।

7. **लेसर का विकास एवं उपयोग - संगोष्ठी**

भा. प. अ. केंद्र में 28 मार्च, 1990 को एक दिवसीय संगोष्ठी "लेसर का विकास एवं उपयोग" विषय पर आयोजित की गयी। संगोष्ठी का उद्घाटन डा. आर. चिदम्बरम्, निदेशक, भा. प. अ. केंद्र ने किया। इस संगोष्ठी में 10 आमंत्रित वैज्ञानिकों ने लेसर से संबंधित विभिन्न विषयों पर आलेख प्रस्तुत किये जिनमें लेसर की आधुनिकतम जानकारी दी गयी। वार्ताओं का स्तर बहुत ऊंचा था और सभी वार्ताएं सरल व रोचक ढंग से प्रस्तुत की गयीं। इससे सभी भाग लेने वाले प्रतिनिधिगण लाभान्वित हुए। इस अवसर पर संगोष्ठी में प्रस्तुत वार्ताओं के लेखों का संकलन "वैज्ञानिक" के एख विशेष अंक में प्रकाशित हुआ। इस वैज्ञानिक विशेषांक का विमोचन भी डा. आर. चिदम्बरम् ने किया। इस अवसर पर (28 मार्च को) प्रतिभागियों को लेसर की विभिन्न प्रयोगशालाओं में भ्रमण भी कराया गया। इस संगोष्ठी में करीब 200 लोगों ने भाग लिया। इस कार्यक्रम के संयोजक डा. एस. ए. अहमद एवं डा. एच. सी. पन्त थे।

8. **भावी कार्यक्रम : वर्ष 1990-91**

वर्ष 1990-91 के कुछ भावी कार्यक्रम इस प्रकार हैं :

1. **अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता**
2. **वैज्ञानिक संगोष्ठी**

क. अतिचालकता एक मूल्यांकन — 6 अप्रैल, 1990 (बम्बई)

ख. विज्ञान की भावी दिशाएं — 7-8 दिसम्बर 1990 (इन्दौर)

ग. नाभिकीय ऊर्जा — फरवरी 1991 (पटना)

घ. आण्विक जीव विज्ञान — मार्च 1991 (बम्बई)

3. **कार्यशाला**

क. वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली — 26-29 जून, 1990 (बम्बई)

ख. परमाणु विज्ञान एवं विकास — मार्च 1990 (बम्बई)

4. **वैज्ञानिक प्रश्नमंच** — नवम्बर 1990 (बम्बई)

5. **राजभाषा वार्ताएं**

क. सौर ऊर्जा - उपयोग के व्यावहारिक पहलू 23-04-1990 — प्रो. महेंद्र सिंह सौढा (इन्दौर)

ख. मद्रास परमाणु बिजली घर की इकाइयों की पुनर्स्थापना (24-05-1990) — श्री अनिल काकोडकर (बम्बई)

ग. साहित्यकार और समाज आज के संदर्भ में (24-09-1990) — डा. राहीमासूम रजा

9. **सदस्यता :**

इस वर्ष हमने 103 नये आजीवन सदस्य बनाये। इस वर्ष के अंत तक हमारे संदस्यों की संख्या इस प्रकार हैं :

आजीवन सदस्य - 447
संस्थागत सदस्य - 66
साधारण सदस्य - 132

कुल संख्या - 645

10. यह सूचित करते हुए हमें खुशी हो रही है कि केंद्र ने एक हिन्दी टाइपराइटर परिषद को भेंट किया है । इस के अतिरिक्त, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने " तकनीकी शब्दावली " के दो खंड परिषद को भेंट किये हैं। हम इन दोंनों संस्थाओं के आभारी हैं। ये दोनों चीजें उपाध्यक्ष के कार्यालय में रखी गयी हैं।

11. इस वर्ष परिषद को करीब 800 पत्र प्राप्त हुए । इनके जवाब सचिव, कोषाध्यक्ष, व्यवस्थापक एवं संपादक गणों ने दिये ।

12. हमारा विश्वास है कि वर्तमान कार्यकारणी के इस कार्यकाल में हम परिषद की गतिविधियों को सबल बनानें में काफी सफल हुए हैं । परिषद के सभी उद्देश्यों की तरफ जैसे हिंदी वैज्ञानिक साहित्य का सृजन, वैज्ञानिक संगोष्ठी आयोजन, हिंदी विज्ञान साहित्य का प्रसार एवं इसमें अभिरुचि बढ़ाना इत्यादि, भरपूर कार्य हमने किया है । इसका पूरा श्रेय अध्यक्ष, डा. आर. चिदम्बरम, एवं उपाध्यक्ष, डा. दीन दयाल सूद के मार्गदर्शन एवं कार्यकारिणी समिति के सभी सदस्यों से प्राप्त सहयोग को है । इसके साथ सभी कार्यक्रमों के संयोजकों ने मन लगाकर कार्यक्रम आयोजित किये और उन्हें सफल बनाया । हम इन सभी लोगों के आभारी हैं। इसके साथ, परिषद के कार्यकलापों के लिए प्राप्त प्रशासनिक सहायता के लिए केंद्र के कन्ट्रोलर महोदय व अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना सेवाएं तथा हिंदी कक्ष से मिली विविध सहायताओं के लिए इन सभी को विशेष रूप से धन्यवाद देता हूं । परिषद को राजभाषा कार्यान्वयन समिति तथा केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद से भी भरपूर सहयोग मिला है, और इसके लिए हम इन दोनों संस्थाओं और विशेष रूप से डा. एस. के. शर्मा एवं श्री एस. के. मेहता के आभारी हैं ।

— **ज्ञा. ला. गोस्वामी**

पत्राचार का पता :
ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी
सचिव, हिं. वि. सा. परिषद
रेडियोधातुकी प्रभाग,
भा. प. अ. केन्द्र, बम्बई -400085

MIDHANI

Centre for advanced metals technology

Product Range
- Superalloys
- Titanium
- Special Steels
- Resistance Alloys
- Alloys for Electric & Electronic Applications
- Powder Metallurgy Products

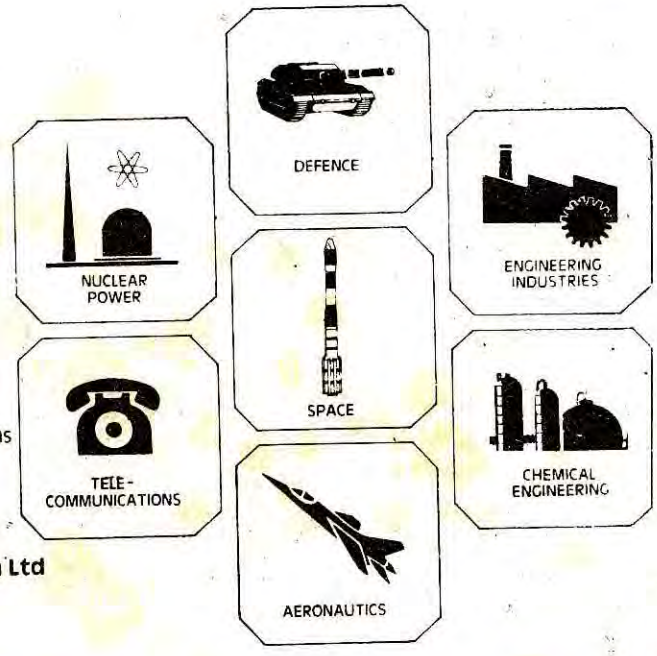

Mishra Dhatu Nigam Ltd
P.O. Kanchanbagh
Hyderabad-500 258.

हिन्दी की सर्वप्रथम विज्ञान-पत्रिका

विज्ञान (मासिक)

75 सेभी अधिक वर्षों से निरंतर प्रकाशित

: संपर्क सूत्र :

विज्ञान परिषद, महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद - 211 002.

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) R. No. 18862/70
दिल्ली, नई दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ.प्र. के शिक्षा/विभागों द्वारा स्कूल व कॉलेजों के लिए स्वीकृत

NUCLEAR POWER CORPORATION

STEPPING UP POWER GENERATION FOR GENERATIONS TO COME

Nuclear Energy from the unlimited energy source. Environmentally clean and safe. Indigenously developed and totally self-reliant, to meet the growing energy demand for a better quality of life for our increasing millions.

NPC committed to serving the nation, utilising India's vast nuclear resources for generation of power for generations to come.

NUCLEAR POWER CORPORATION
(A Govt. of India Enterprise)

16th & 20th floor, World Trade Centre 1,
Cuffe Parade, Bombay 400 005.

NPC. Fuelling a powerful future.

CONTOUR ADS-NPC-42B/90

विकिरण समस्थानिक [रेडियोआइसोटोप]

वैज्ञानिक एवं प्रोद्योगिकीय प्रगति हेतु अनिवार्य साधन

विकिरण एवं आइसोटोप प्रोद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी) ने देश में विविध रेडियो उत्पादों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में स्वयं को पूर्णतया समर्पित किया है। रेडियोआइसोटोप के उत्पादन एवं अनुप्रयोग हेतु इस क्षेत्र में अनुसंधान की कुछ उत्कृष्ट सुविधाएं ट्रॉबे में स्थापित की गयी है। स्वदेशी अनुसंधान एवं विकास कार्यों पर निर्भर रहते हुए 'ब्रिट' (बी आर आई टी) ने रेडियोआइसोटोप उत्पादों का विस्तृत रुप से विकास किया है एवं देशविदेश के 1000 से भी अधिक संगठनों की आवश्यकताओं की आपूर्ति की है।

कुछ महत्वपूर्ण उत्पाद एवं प्रदत्त सेवाएं इस प्रकार हैं:

- **विकिरण भेषज (रेडियोफार्मास्युटिकल्स) :**
  विभिन्न प्रकार के रोगों के निदान एवं थायराइड रोगों के उपचार हेतु।
- **विकिरण प्रतिरक्षा आमापन (रेडियो इम्यूनो ऐसे) किट्स:**
  हार्मोन्स तथा औषधियों की सूक्ष्म मात्रा के आकलन हेतु।
- **रेडियोरसायन एवं विकिरण स्रोत:**
  अनुसंधान, औद्योगिक अनुप्रयोगों एवं कैन्सर रोगोपचार हेतु।
- **रेडियोग्राफी कैमरे एवं उपसाधन:**
  सांचो तथा वेल्डों के रेडियोग्राफिक निरीक्षण हेतु।
- **गामा किरणन उपस्कर:**
  चिकित्सा उत्पादों के विकिरण निर्जर्मीकरण या खाद्य किरणन हेतु।
- **विकिरण निर्जर्मीकरण सेवा:**
  प्रयोज्य चिकित्सा उत्पादों जैसे, आई.सैट, वी.कैथीटर (मूत्रनलिका), जाली का कपड़ा, रुई, शल्य ब्लेड, दस्ताने, रिक्त पात्र आदि के विकिरण निर्जर्मीकरण हेतु।

कृपया, अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें:

वरिष्ट प्रबंधक एवं विपणन संचालन प्रभारी,
विकिरण एवं आइसोटोप प्रोद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी)
वि.ना.पुरव मार्ग, देवनार, बम्बई - 400 094.
टेलीफोन: 555 16 76 / 551 04 01 / 551 49 10 (विस्तार 4772)
तार: ब्रिटएटम, बम्बई-94. टेलेक्स: 11 72212 ब्रिट इन्

हिंदी-विज्ञान साहित्य परिषद के लिए **डा. जनार्दन स्वरुप** द्वारा संपादित तथा **डा. शिव प्रकाश गर्ग** द्वारा
युनिव्हर्सल इंटरप्राइजेस, चेंबूर, बंबई में मुद्रित व प्रकाशित